* ह्रीं नमो दुर्गायै *

उपासकेभ्यश्चतुर्वर्ग प्रदायिनी

* दुर्गार्चन सृतिः *

विविधोपयोगी विषयोपेता

श्रीघ्न पुरस्थ श्री विद्या-धर्म-वर्द्धिनी पाठशालायाः कर्मकाण्ड
यजुर्वेदाध्यायकेन विद्याभूषण कर्मकाण्डमणि उपाधि
विभूषितेन अयोध्या नगरस्थ "पण्डित परिषद्"
समितेः कर्मकाण्ड, विषय परीक्षकेन

श्री लक्ष्मीनारायण [illegible]मिना

संगृहीता संशोधिता—

तथा तत् श्री घनश्याम गोस्वामिना भाषाटीकया समलंकृता

सा च

वंशीधर दुर्गादत्त प्रमोदचन्द्र

नवलगढ़ निवासीभ्याम्

दुर्गादत्त बालकृष्ण भक्ताभ्याम्

धर्मार्थ वितीर्णा

शान्ति प्रेस गुड़म्यमण्ड्यां अर्गलपुर (आगरा)
नगरे मुद्रयित्वा प्रकाशिता च

सम्वत् १९९४ सन् १९३७ ई०

र] प्राप्तिस्थानम् [[illegible]

वंशीधर दुर्गादत्त नं० २६ बड़तल्ला स्ट्रीट (कलकत्ता)
वंशीधर प्रेमसुखदास आइल मिल, माईथान, आगरा।

दुर्गा हवन सामिग्री

श्रीफल कच्चे १४, सर्वोषधी, रोली, कलावा, सुपारी, कपूर, अबीर, गुलाल, हल्दी पिसी, मेंहदी, सिंदूर, धूपबत्ती, अगरबत्ती, चिलमिली, कमलगट्टे १५ नग, बेलगिरी, गूगल, छोटी इलायची, लोंग, मैंनफल नग २, जायफल ४, भोजपत्र, लाल चन्दन, पांचों मेवा, मिश्री, पीली सरसों, गिलोय हरी, ढाक की लकड़ी, काले तिल, चावल, जौ, चीनी, घी, खड़िया, गोले नग २, कूंजे मिश्री २, खैर की लकड़ी, आचमनी, पंच पात्र, माला, जप स्थली, धोती अंगोछे, आज्य स्थाली, चरु स्थाली, कलश तांबे का १, लोटा तांबे का १, कटोरे तांबे के २, कांसे का कटोरा १, पूर्णपात्र १, कटोरी कांसे की १ छाया दान की, दूध कच्चा, दही, नैवेद्य बरफी लड्डू, ऋतु फल, शहत, आसन, मलमल टूल बड़े अर्ज की, खारुआ, चुन्दरी, पीली छींट, दरयाई, सुहाग-पिटारी, मूर्ति सोने की १, थाली सोने की १, चमेली का तेल, इत्र केवड़ा, पंचरत्नी, छोटी हड़, आमले, मुनक्का अदरक, उन्नाव, उर्द की दाल, कचौड़ी, पूरी, आम के पत्ते, बड़ के पत्ते, पीपल के पत्ते व डाली, छोंकर के पत्ते व डाली, बन्दनवार, चन्दोआ फूलों का, फूल माला, फूल, दूर्वा, जनेऊ, अनार की कली, जमनाजल, जमना रज, कुशा, मटकेने, सकोरे, पत्तलें ७, रुई, दियासलाई, खंभ के केले ६, गन्ने ८, चाकू, सुतली, मीठा तेल, दाल चने की, मूंग हरी, उर्द काले दाल मसूड़, उर्द के बड़े १०, आक की डाली, ओंगा, पान, गोबर, गो मूत्र, दौनी १ गड्डी, रेजगारी पैसे रुपये, चौकी एक गज लम्बी चौड़ी, छोटी चौकी ४ आध गज लम्बी चौड़ी, लोटा, अंगूठी सोने की, पटरा आध गज का। छत्तर फूलों का, पाक स्थाली।

सम्मतिः

आर्य सहृदया वाचकवृन्द महोदया! विदां कुर्वन्तु तत्र भवन्तो भवन्तोयद् निखिलेषु निगमागमेषु धर्म्मार्थ काम मोक्ष प्रदातृत्वेन परमानन्द स्वरूपायाः श्री १०८ जगदम्बायाः कीदृशं मा जागर्तीति। अतएव "कलौ चण्डी विनायकौ" इत्य शीलाः शास्त्र तत्त्ववेत्तारो महानुभावाः। परन्तु सर्वे विध सम्पादिता एव स्वस्व फल प्रदानाथ प्रभवन्ती, न तिरं भवतां प्रेक्षावतां पुरतः। यद्यपि नाना विधान समशत

* श्रीः *

प्राक्कथन

हिन्दू जाति का जीवन-धन सदा धर्म ही रहा है। यह जाति धर्म के लिए अपने को मिटा देना, धर्म पर अपने को न्यौछावर कर देना सदा सर्वोपरि कर्त्तव्य कर्म और परमधर्म समझती आती रही है। इसके प्रमाणों से पुराणेतिहास ग्रन्थ भरे पड़े हैं। जब तक हिन्दुओं का धर्म पर अटल विश्वास था, जब तक हिन्दु श्रुति (वेद) स्मृति, पुराण, इतिहास प्रतिपाद्य सनातन धर्म के अनन्य भक्त थे तब तक धर्म भी उनकी पग-पग पर रक्षा करता था, यह निर्विवा सिद्ध है। परन्तु जब से हिन्दुओं की आस्था धर्म पर से प्रारम्भ हुई, जब से हिन्दुओं के धर्म-बन्धन ढीले हुए, जब ... को तर्क की कसौटी पर कसा जाना प्रारम्भ हुआ तब से धर्म ने भी इसका साथ देना छोड़ दिया और उसी का यह परिणाम हो रहा है कि हिन्दु जाति आज संकटापन्न अवस्था में है और इसकी आज वही दशा हो रही है जैसी किसी नाव की बिना केवट के होती है।

भगवान् मनु ने अपनी स्मृति में स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि—

धर्म एव हतो हन्ति,
धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्म्मो न हन्तव्यो,
मानो धर्मो हतोऽवधीत ॥

मनु० अ० ८ श्लो० १५

अर्थात् नष्ट हुआ धर्म ही नाश करता है और रक्षित किया धर्म ही रक्षा करता है। "नष्ट धर्म कहीं हमें नष्ट न करे" इसलिए कभी धर्म का नाश नहीं करना चाहिये क्योंकि:—

एक एव सुहृद्धर्मो,
निधनेऽप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं,
सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥

मनु० अ० ८ श्लो० १७

अर्थात् एक धर्म ही ऐसा मित्र है जो मरने पर भी साथ जाता है और सब तो शरीर के साथ नष्ट हो जाते हैं। धर्म अच्छा है या बुरा, इस पर तर्क वितर्क करने की कोई आवश्यकता नहीं। जिस धर्म को हमारे (पूर्वज) पुरखा मानते आये हैं उसी को हमे मानना चाहिये, क्योंकि भगवान् श्री कृष्णचन्द्र आनन्द-कन्द ने अपने श्रीमुख से गीता में स्पष्ट कह दिया है कि—

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः
पर धर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः
परधर्मो भयावहः ॥

अर्थात्

हो परधर्म रुचिर, गुणवाला,
पर स्वधर्म निर्गुण भी श्रेय ।
मरना भी शुभ है स्वधर्म में,
धर्म पराया भयप्रद हेय ॥

इसलिए प्रत्येक जाति वालों को, यदि वह अपना कल्याण चाहते हैं, तो अपने-अपने धर्म का पालन बिना किसी प्रकार के ननु नच, तर्क वितर्क और सन्देह के, करना चाहिये तभी वह निस्संदेह सुखी रह सकते है।

भगवान मनु ने अपनी स्मृति मे लिखा है कि—

आचारः परमोधर्मः,
श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।
सर्वस्य तपसो मूल-
माचारं जगृहुः परम्।

अर्थात् वेद और स्मृति में कहा गया आचार ही परमधर्म है। आचार को ही सब तपस्याओं का मूल माना है।

जो मनुष्य सदाचारपूर्वक रह कर अपने-अपने उपास्यदेव की आराधना करता है वह सकल वाञ्छितफल प्राप्त कर अपने जीवन को सफल, सार्थक, सुखमय बनाता हुआ अन्त में वह उस स्थान पर पहुँच जाता है जिसको भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द ने गीता में कहा है कि—

यं प्राप्य न निवर्तन्ते,
तद्धाम परमं मम।

अर्थात् उस परम स्थान पर पहुंच जाते हैं जहाँ से फिर नहीं लौटते।

सनातन धर्म में मुख्यतः पाँच उपास्यदेव माने गये हैं, जैसेः—

आदित्यं, गणनाथश्च, देवीं रुद्रश्च केशवम्।
पञ्चदेवत्वमित्युक्तं सर्व कर्मसु पूजयेत्॥

सूर्य, गणेश, दुर्गा, शंकर और विष्णु परन्तु कलियुग में

कलौ चण्डी विनायकौ

इस वाक्यानुसार गणेश और चण्डी अर्थात् दुर्गा की उपासना को मुख्य माना गया है। वास्तव में बात है भी यह कि दुर्गा माँ अपनी सन्तान की थोड़ी-सी सेवा से भी प्रसन्न होकर उनके सकल मनोरथों को सिद्ध करते हुए देखी गई है।

इसके प्रत्यक्ष प्रमाण छत्रपति शिवाजी, परमहंस रामकृष्ण आदि अनेकानेक विभूतियाँ इस गये बीते समय में भी इस बात को प्रत्यक्ष सिद्ध करके दिखाई गई हैं कि 'माँ' की सेवा करने वाली सन्तान अलौकिक शक्ति सम्पन्न होकर संसार में क्या-क्या नहीं कर सकती।

मातेश्वरी श्री दुर्गाजी परमेश्वर की उन प्रधान शक्तियों में से एक हैं जिनको आवश्यकतानुसार समय-समय पर उन्होंने प्रगट किया है, जैसे—

एकैव शक्तिः परमेश्वरस्य
भिन्ना चतुर्धा व्यवहार काले।
पुरुषेपु विष्णुः भोगे भवानी
समरेच दुर्गा प्रलये च काली॥

उसी परमेश्वर की दुर्गा शक्ति की उत्पत्ति तथा उसके चरित्रों का वर्णन मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत देवी माहात्म्य में है। वह देवी माहात्म्य ७०० श्लोकों में वर्णित है। अतः वह माहात्म्य 'दुर्गा सप्तशती' के नाम से लोक में विख्यात है। उसी माँ दुर्गा शक्ति की उपासना भारतीय चिरकाल से करते चले आते हुए शक्तिशाली बने हुए थे। इसीलिए माँ के चरित्र में वर्णित है कि:—

या देवी सर्व भूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥

जब तक माँ अपने उपासकों में शक्ति रूप होकर स्थित थी तब तक किसी की सामर्थ्य नहीं थी जो सामने आ सके और जो कोई आया भी तो उसने वह मुँह की खाई कि छटी का दूध याद आगया।

दुर्गा सप्तशती

श्री वेदव्यास रचित मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत दुर्गा सप्तशती विविध पुरुषार्थ साधिका, कर्मोपासना ज्ञानोत्तम सिद्धान्त प्रतिपादिका, वेद वेदाङ्ग वेदान्त तत्व प्रकाशिका, सकल भक्ताभीष्ट वरप्रदा, अभयदा एवं अशरण शरणदा है। इसमें जिस विशद, विमल चरित्र का वर्णन है, उसका संक्षेप में वर्णन, हम अपने पाठकों की जानकारी के लिए, यहाँ करते हैं। वास्तव में अस्त्र-शस्त्र धारिणी श्री भगवती के जिस युद्ध का वर्णन वेद में समास रूप से है, उसी को श्री वेदव्यासजी ने अपने ज्ञानचक्षु द्वारा देखकर, मार्कण्डेयपुराण में विशद रूप से लिखा है। वह कथा तीन चरित्रों में वर्णित है और उसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है:—

प्रथम चरित्र

दूसरे मनु के राज्याधिकार में 'सुरथ' नाम का चैत्रवंशोद्भव राजा राज्य करता था। शत्रुओं तथा दुष्ट मन्त्रियों के कारण उसका राज्य, कोष आदि सब कुछ उसके हाथ से निकल गया। राजा हतश्री होकर जंगल में चला गया और वहाँ 'मेधा' नामक ऋषि के आश्रम में पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर भी राजा 'सुरथ' मोहवश प्रजा, पुर, शूर, हाथी, धन, कोष और दासों की अर्थात् अल्प नाशवान पदार्थों की

चिन्त... रके दुखी हुआ। राजा सुरथ की वही दशा हुई जो ...क्ति विहीन पुरुषों की हुआ करती है।

इसी 'मेधा' ऋषि के आश्रम में 'समाधि' नाम के वैश्य से राजा 'सुरथ' की भेट हुई। यद्यपि यह वैश्य अपने धन लोलुप स्त्री पुत्रों द्वारा घर से निकाल दिया गया था, तब भी उनके दुर्व्यवहार को भूल कर उनके वियोग में दुखी था।

इस प्रकार ये दोनों दुखी जीव 'मेधा' ऋषि की सेवा में उपस्थित हुए। शिष्टाचार पूर्वक अभिवादन करके ये दोनों ऋषि के पास बैठ गए। राजा ने ऋषि से कहा—जिस विषय में हम दोनों को दोष दीखता है, उसकी ओर भी ममतावश हमारा मन जाता है। मुनिवर, यह क्या बात है कि ज्ञानी (बुद्धिमान) पुरुषों को भी मोह होता है।

महर्षि उनको मोह का कारण बतलाते हुए कहने लगे—इसमें कुछ आश्चर्य नहीं करना चाहिये कि ज्ञानियों को भी मोह होता है, क्योंकि महामाया भगवती अर्थात् भगवान् विष्णु की योग निद्रा (तमोगुण प्रधान शक्ति) ज्ञानी (बुद्धिमान्) पुरुषों के चित्त को भी बलपूर्वक खींचकर मोहयुक्त कर देती है, वही भक्तों को वर प्रदान करती है और 'परमा' अर्थात् ब्रह्मज्ञान स्वरूपा है।

राजा सुरथ ने भगवती की ऐसी महिमा सुनकर, मेधा ऋषि से द्विज! हे ब्रह्मविदांवर! (ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ) के सम्बोधन से तीन प्रश्न किये:—

(१) वह महामाया देवी कौन है? (२) वह कैसे उत्पन्न हुई? और (३) उसका कर्म तथा प्रभाव क्या है? मुनि ने उत्तर दिया:—

"नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्व मिदं ततम् ॥"

अर्थात् वह मूर्ति नित्या है, और उसी से यह सब व्याप्त है। तब भी उसकी उत्पत्ति देवताओं की कार्य्यसिद्धि के अर्थ कही जाती है।

प्रथम चरित्र की संक्षिप्त कथा

जब प्रलय के पश्चात् भगवान् विष्णु शेषशय्या पर योग निद्रा में निमग्न हुए, तब उनके कानों के मैल से मधु और कैटभ नाम के दो असुर उत्पन्न होकर हरि-नाभि-कमल-स्थित ब्रह्माजी को ग्रसने चले। तब ब्रह्माजी भगवान् की योगनिद्रा की पट्तुरीया शक्ति के रूप में सुन्दर सरस स्तुति (रात्रिसूक्त) परम प्रेम पूर्वक करने लगे और उसमें उन्होंने ये तीन प्रार्थनाएँ कीं—(१) भगवान् विष्णु को जगा दीजिये। (२) उन्हें असुर द्वय के संहारार्थ उद्यत कीजिये। और (३) असुरों को विमोहित करके भगवान् द्वारा उनका नाश कराइये। श्री भगवती ने स्तुति से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी को दर्शन दिया। उस (योग निद्रा) से मुक्त होकर श्रीभगवान् उठे और असुरों को ब्रह्माजी को ग्रसने के लिए उद्यत देख उनसे युद्ध करने लगे। तदुपरान्त दोनों असुर योगनिद्रा से मोहित होगए और उन्होंने श्रीभगवान् से वर माँगने को कहा। अन्त में उसी वरदान के अनुसार वे भगवान् के हाथों मारे गये।

इस कथा से श्री ब्रह्माजी ने यह उपदेश दिया कि जो भगवती की उपासना करते एवं कर्तृत्व के अभिमान तथा सुकृत-दुष्कृत रूपी कर्मफल को त्याग कर अपने विहित कर्म में प्रवृत्त रहते हैं उनका जीवन शान्तिपूर्वक निर्विघ्न रूप से व्यतीत होता है। यही ब्राह्मी स्थिति है, जिसे पाकर मनुष्य मोह-ग्रस्त नहीं होता। महर्षि मेधा, सुरथ राजा तथा समाधि नाम वैश्य दोनों जिज्ञासुओं के निराकरणार्थ

कर्म के उच्चतम सिद्धान्त का निरूपण करके उपासना तथा ज्ञानयोग के तत्व को भगवती के अन्यान्य प्रभावों द्वारा वर्णन करने लगे।

मध्यम चरित्र

मध्यम चरित्र की कथा का सारांश इस चरित्र में ऋषि ने राजा सुरथ तथा समाधि नाम वैश्य के प्रति मोहजनितसकामोपासना द्वारा अर्जित फलोपभोग के निराकरण के लिए निष्कामोपासना का उपदेश किया है। चरित्र की संक्षिप्त कथा इस प्रकार है—

प्राचीन काल मे महिष नामक एक अति वलवान असुर उत्पन्न हुआ। वह अपनी शक्ति से इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यम, वरुण, अग्नि वायु तथा अन्य सुरों को हटाकर स्वयं इन्द्र वन गया और उसने समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल वाहर किया। अपने स्वर्ग सुख भोगैश्वर्य से वंचित होकर दुखी देवगण साधारण मनुष्यों की भाँति मर्त्यलोक में भटकने लगे। अन्त में व्याकुल होकर वे लोग ब्रह्मा जी के साथ भगवान विष्णु और शिवजी के निकट गये और उनके शरणागत होकर उन्होंने अपनी कष्ट कथा कही।

देव-वर्ग की करुण कहानी सुन लेने पर हरि-हर के मुख से महत्तेज प्रगट हुआ। इसके पश्चात् ब्रह्मा, इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यमादि देवताओं के शरीर से भी तेज निकला। यह सब एक होकर, तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाली एक दिव्य देवी के रूप में परिणत हो गया।

विधि-हरि-हर त्रिदेवों तथा अन्य प्रमुख सुरों ने अपने-अपने अस्त्र-शस्त्रों में से दिव्य प्रकाशमयी उस तेजोमूर्ति को अमोघ अस्त्र-शस्त्र दिये। तब श्रीभगवती अट्टहास करने लगी। उनके उस शब्द से समस्त लोक कम्पायमान होगये।

तव असुर राज महिष "आः यह क्या है?" ऐसा कहता हुआ सम्पूर्ण असुरों को साथ लेकर उस शब्द की ओर दौड़ा। वहाँ पहुँच

कर उसने उस महाशक्ति देवी को देखा, जिसकी कान्ति त्रैलोक्य में फैली है और जो अपनी सहस्र भुजाओं से दिशाओं के चारों तरफ फैलकर स्थित है। इसके पश्चात् असुर देवी से युद्ध करने लगे।

श्रीभगवती और उनके बाहन सिंह ने कई करोड़ असुर सैन्य का विनाश किया। तत्पश्चात् श्रीभगवती के द्वारा चिक्षुर, चामर, उदग्र, कराल, बाष्कल, ताम्र, अन्धक, अतिलोम, उग्रास्य, उग्रवीर्य, महाहनु, बिडालास्य, महासुर, दुर्धर और दुर्मुख—चौदह असुर सेनापति मारे गये। अन्त में महिषासुर, भैंसा, हाथी, मनुष्यादि के रूप धारण करके श्रीभगती से युद्ध करने लगा और मारा गया।

अपने समग्र शत्रुओं के मारे जाने पर देवगण ने प्रसन्न होकर आद्या शक्ति की स्तुति की और वर माँगा—

"जब-जब हम लोग विपद्ग्रस्त हों तब-तब आप हमें आपदाओं से विमुक्त करें और जो मनुष्य आपके इस पवित्र चरित्र को प्रेम-पूर्वक पढ़ें या सुनें वे सम्पूर्ण सुख और ऐश्वर्य्यों से सम्पन्न हों।"

श्री भगवती देवताओं को ईप्सित वरदान देकर अन्तर्धान हो गईं। इस चरित्र में मेधा-ऋषि ने इन्द्रादि देवगण के राज्याधिकार का अपहरण, आत्म-शक्ति द्वारा उनके दुःखों का निराकरण तथा पुनः स्वराज्य प्राप्ति का वर्णन करके सुरथ राजा के शोक-मोह के निवारण के लिए उसी आत्म-शक्ति की भक्ति का उपदेश किया है।

उत्तर चरित्र

मध्यम चरित्र में मोह का कारण कर्मफलासक्त देवों द्वारा दिलाया जाकर, उत्तम चरित्र में परानिष्ठा ज्ञान के वाधक आत्म मोहन अहं-कारादि के निराकरण का वर्णन किया गया है।

उत्तम चरित्र की कथा का सारांश

पूर्व काल में शुम्भ और निशुम्भ दो महा पराक्रमी असुर हुए। उन्होंने इन्द्र का त्रैलोक्य का राज्य और यज्ञों का भाग छीन लिया।

वे दोनों ही सूर्य, चन्द्र, कुवेर, यम, वरुण, पवन और अग्नि के अधिकारों के अधिपति वन बैठे और उन्होंने सुर समाज को स्वर्गलोक से निकाल दिया। तब बड़े ही दुखी होकर सशोक देवतागण मृत्युलोक में आए। देवताओं को वार-बार का यह क्लेश अत्यन्त असहनीय हुआ और वे सदा के लिए इससे छुटकारा पाने का उपाय सोचने लगे। अन्त में वे हिमाद्रि पर्वत पर जाकर दयार्द्र हृदया श्री दुर्गा देवी के चरण कमलों की दिव्य ज्ञानमयी वन्दना करने लगे। श्रीभगवती पार्वती अपने वचनानुसार हिमालय पर्वत पर गङ्गाजी के किनारे प्रकट हुईं और उन्होंने सुरों से पूछा—'तुम किसकी स्तुति कर रहे हो? उनके इतना कहते ही उनके शरीर से शिवा निकलकर कहने लगीं—"ये शुम्भ-निशुम्भ से लड़ाई में हारे हुए स्थानच्युत किए हुए सब देवगण इकट्ठे होकर मेरी स्तुति कर रहे हैं।

पार्वती के शरीर से अम्बिका उत्पन्न हुई, एतदर्थ ये कौशिकी नाम से प्रसिद्ध है और भगवती पार्वती के शरीर से शिवा के निकल जाने पर उनका वर्ण काला हो गया। अतएव ये कालिका के नाम से विख्यात होकर हिमालय पर रहने लगीं, तत्पश्चात् परम सुन्दरी अम्बिका को शुम्भ निशुम्भ के भृत्य चण्ड मुण्ड ने देखा। और उन दोनों ने शुम्भ से जाकर उसके अतुल सौन्दर्य्य की प्रशंसा की। उसने अपने भृत्यों की बात सुनकर सुग्रीव नामक असुर को अम्बिका को ले आने के लिए भेजा।

सुग्रीव ने भगवती के पास पहुँचकर शुम्भ निशुम्भ के ऐश्वर्य्य की बड़ी प्रशंसा की, और उससे परिग्रह की बात कही।

भगवती ने गम्भीर भाव से मुस्कराते हुए कहा—तूने जो कुछ कहा सब सत्य है; परन्तु इस विषय में मैंने जो प्रतिज्ञा करली है

उसे मैं झूँठी कैसे करूँ। जो मैंने अज्ञानता से प्रतिज्ञा की है उसे सुन, वह प्रतिज्ञा यह है—

जो लड़ाई में मुझको जीत लेगा, जो मेरे दर्प (घमण्ड) को दूर कर देगा, जो सारे संसार में मेरे प्रतिबल (बराबर ताकत वाला) होगा, वही मेरा स्वामी होगा। इसलिए महाअसुर शुम्भ निशुम्भ यहाँ आवें और मुझको जीत कर जल्दी ही विवाह करलें।

दूत ने कहा—हे देवि ! तुझको घमण्ड हो गया है। मेरे सामने ऐसी बात मत कह। तीनों लोक में ऐसा कौन मनुष्य है जो शुम्भ निशुम्भ के सामने ठहर सके। सुन, लड़ाई में राक्षसों के सामने सब देवता भी नहीं ठहर पाते, तब हे देवि ! तू अकेली स्त्री कैसे ठहर सकती है। इसलिये तू मेरे कहने से शुम्भ निशुम्भ के पास चली चल; नहीं तो बाल पकड़ कर घिसटती हुई अपनी प्रतिष्ठा बिगड़वाकर कहीं मत जाना।

देवी ने कहा—जो तूने कहा सब सच है, शुम्भ ऐसा ही बलवान है और निशुम्भ भी बहुत वीर्य्यवान् है, पर क्या करूँ, मन्द बुद्धि होने के कारण मैंने ऐसी प्रतिज्ञा करते समय पहिले नहीं विचारा, अब लाचार हूँ। अब तू जाकर मैंने जो कुछ कहा है वह राक्षसाधिप शुम्भ को समझा कर कहना, वह (शुम्भ) जो उचित समझे सो करे।

सुग्रीव ने शुम्भ निशुम्भ के निकट जाकर भगवती अम्बिका की प्रतिज्ञा विस्तारपूर्वक कह सुनाई। असुरेन्द्रों ने कुपित होकर धूम्र-लोचन नामक असुर को भेजा। भगवती ने धूम्रलोचन को हुङ्कार मात्र से भस्म कर दिया और भगवती ने तथा उसके वाहन सिंह ने असुर-सेना का विनाश कर दिया। तदुपरान्त असुरराज शुम्भ ने चण्ड-मुण्ड दोनों को बहुत बड़ी सेना के साथ भगवती कौशिकी को पकड़ लाने अथवा मार डालने के लिए भेजा। वे सब हिमालय पर

जाकर भगवती को पकड़ने का प्रयत्न करने लगे। तब अम्बिका ने शत्रुओं पर अत्यन्त कोप किया और उसके ललाट से एक भयानक काली देवी प्रकट हुई। उसने असुर सेना का विनाश किया, और चण्ड-मुण्ड का शिर काट कर अम्बिका के पास ले गई; इसी कारण उसका नाम चामुण्डा हुआ।

चण्ड-मुण्ड के वध का समाचार सुनकर असुरेशों ने एक बड़ी सेना, जिसमें सात सेना-नायकों का विभाग था, भगवती से युद्ध करने के लिए भेजी। उस समय ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, महावराह, नृसिंह और स्वामिकार्तिक इन सात प्रमुख देवों की शक्तियाँ असुर-सेना से युद्ध करने के लिए आयीं। फिर अम्बिका के शरीर से अत्यन्त भयङ्कर शक्ति निकली; और भगवती ने शुम्भ-निशुम्भ के पास शिवजी को दूत रूप में भेज कर उनसे कहलाया—'यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो देवताओं को उनके छीने हुए लोक एवं यज्ञाधिकार लौटा दो और पाताल में जाकर रहो।'

बल से उन्मत्त शुम्भ-निशुम्भ ने देवी की बात नहीं मानी और युद्धस्थल में सेना सहित उपस्थित होगये। भगवती ने देवशक्तियों की सहायता से असुर सैन्य का संहार करना प्रारम्भ किया; और असुर-युगल का रक्तवीज नामक एक सेनाध्यक्ष भगवती और देव-शक्तियों से युद्ध करने लगा। उसके शरीर से शोणित के जितने विन्दु पृथ्वी पर गिरते थे, उतने ही रक्तवीज उत्पन्न हो जाते थे। अन्त में देवी ने चामुण्डा को आज्ञा दी कि वह अपने मुख का विस्तार करके रक्तवीज के शरीर के रक्त को अपने मुख में ले और उससे उत्पन्न असुरों को भक्षण करे। चामुण्डा ने ऐसा ही किया और भगवती ने उस असुर का शिर काट डाला। तत्पश्चात् निशुम्भ भगवती से युद्ध करने लगा और मारा गया। तब शुम्भ ने क्रोधित

होकर अम्बिका से कहा—'तू दूसरों के बल का सहारा लेकर अभिमान करती है।"

श्रीभगवती ने उत्तर दिया—'संसार में मैं एक ही हूँ; ये समस्त विभूतियाँ मेरी ही रूपान्तरमात्र हैं। ये मुझ से ही प्रगट हुई हैं और मुझ में ही विलुप्त हो जायँगी।'

इसके पश्चात् सातों शक्तियाँ, जो देवी के शरीर से निकली थीं, उसी में प्रविष्ट हो गईं और शुम्भ भी देवी के युद्ध-कौशल से मारा गया। देवगण ने हर्षित होकर ३४ श्लोकों में अम्बिका की स्तुति की। अन्त में देवी प्रसन्न होकर बोली—'संसार का उपकार करने वाला वर माँगो।'

देवताओं ने कहा—'जब जब हमारे शत्रु उत्पन्न हों तब तब उनका नाश हो।'

भगवती आद्याशक्ति ने 'एवमस्तु' कहा, और भविष्य में सात चार भक्त रक्षणार्थ अवतार लेने की कथा तथा दुर्गा चरित्र के पाठ का महात्म्य वर्णन करके अन्तर्धान होगई।

भगवती चण्डिका अपनी स्तुति का माहात्म्य और उसका फल तथा पूजा विधि कह कर अन्तर्द्धान हो गई। और मेधा ऋषि ने उसी महाशक्ति को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष फलप्रदा कहकर यह उपदेश किया—'हे महाराज! आप उसी परमेश्वरी की शरण में जाइये। वह अपनी आराधना से प्रसन्न होकर मनुष्यों को भोग, स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करती है।'

राजा सुरथ और समाधि नाम वैश्य श्रीभगवती के चरित्र तथा महर्षि 'मेधा' के उपदेश को सुनकर उन महादेवी भगवती को प्रसन्न करने के लिए नदी तट पर महती तपश्चर्या एवं उपासना करने लगे। जगद्धात्री चण्डिका ने प्रसन्न होकर उन दोनों को दर्शन दिये

और कहा—"मैं तुम दोनों से प्रसन्न हूँ, तुम जो कुछ माँगोगे वही मैं तुम्हे दूँगी। आद्या देवी की बात सुन राजा ने यह विचार किया—'मेरे लिए अपना क्षात्रकर्म करना ही उचित है। अपने आश्रित जनों को कष्ट में छोड़ कर अकेले वन मे चले आना क्षात्रधर्म के विरुद्ध है। यदि मैं ब्रह्माजी के समान अपने कर्तृत्व के अहंकार को भुलाकर उसी महामाया की आराधना करता तो वह महाशक्ति जैसे उसने मधुकैटभ से ब्रह्मा की रक्षा की थी, वैसे हमारी भी करती। राजधर्म का आदर्श कर्मयोग के उत्तम सिद्धान्त पर स्थित है। अतएव मुझे चाहिये कि जिस प्रकार इन्द्रादि देवताओ ने अधिकार से निकला हुआ स्वराज्य भगवती की कृपा से प्राप्त किया था, उसी प्रकार अपने गए हुए राज्य को पुनः प्राप्त करूँ और न्याय नीति से अपनी समस्त प्रजा को सुखी बनाऊँ।'

इस विचार के पश्चात् राजा ने आगामी जन्म में अखण्ड राज्य और इस जन्म में निज बल से शत्रु शक्ति का नाश करके अपना गया हुआ राज्य प्राप्त करने का वर माँगा।

महादेवी भगवती ने उसे कुछ ही दिनों में शत्रुओं पर विजयी होकर स्वराज्य प्राप्त करने तथा दूसरे जन्म में भूमण्डल पर सूर्यसुत सावर्णिः नामक मनु होने का वर प्रदान किया।

जब श्री भगवती ने वैश्यवर्य्य समाधि से वर मांगने को कहा तो उसने विचार किया—यह संसार दुःखमय है। देवताओं का कई बार अधिकारच्युत होना, और सुरथ राजा का राज्यभ्रष्ट होना यह प्रमाणित करता है कि सांसारिक भोगैश्वर्य अनित्य है। जिस तुच्छ सांसारिक सुख में मेरा मोह था। वह वास्तव में दुःखरूप ही था। जब त्रैलोक्य पर्वत का सुख अनित्य है; तब मुझे इससे विरक्त होकर इस परमेश्वरी की अनुकम्पा से ऐसा ज्ञान प्राप्त करना चाहिये जिससे नित्य अक्षय सुख स्वरूप में प्रविष्ट हो सकूं। निवृत्ति मार्ग

पथिक ज्ञाननिष्ठ समाधि नामक वैश्य ने अपने नाम जाति को सार्थक करने वाले उपर्युक्त विचार से अनन्तर श्रीदेवीजी से मोह विनाशक ज्ञान मांगा। उसे मनोवाञ्छित वर की संसिद्ध के लिए ज्ञान देकर श्री दुर्गा शीघ्र अन्तर्द्धान होगई।

जिस प्रकार भगवती की आराधना से राजा सुरथ और समाधि नाम वैश्य का मनोरथ सिद्ध हुआ उसी प्रकार हर एक व्यक्ति का, जो भगवती का अनन्य भक्त होकर उपासना करे, मनोरथ सिद्ध हो सकता है। देवी की उपासना करने का मार्ग सुगम नहीं है और उसको हर एक जानता भी नहीं है। इसीलिए मनोरथ की सिद्धि आज कल होना कठिन ही नहीं असम्भवसा होगया है। जब सिद्धि नहीं होती तब लोगों का विश्वास उस पर न रहना एक स्वाभाविक बात है। यद्यपि माँ भगवती इतनी दयार्द्रहृदया है कि केवल १०० बार दुर्गा सप्तशती का पाठ मात्र करने से मनोरथ सिद्ध कर देती है, पर होना चाहिये एकाग्रचित्त होकर, तन्मय होकर विधि विधान से। यदि ऐसा नहीं होता तो हमारे मनोरथों की सिद्धि नहीं हो सकती। आजकल जो प्रायः सिद्धि नहीं होती उसका मुख्य कारण विधि विधान का न जानना ही है। आजकल जो पाठ होते है। वे प्रायः अधम रीति से किये जाते हैं जिनका फल नहीं मिलता। क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि:—

गीती शीघ्री, शिरः कम्पी
तथा लिखित वाचकः
अनर्थज्ञोल्प कण्ठश्च
पठ्यते पाठ काऽधमाः।

अर्थात्—गाकर पाठ करना, जल्दी-जल्दी पाठ करना, पाठ करते में हिलते जाना, जैसा शुद्धाशुद्ध लिखा है वैसा ही पाठ करना अर्थ

के जाने बिना पाठ करना और अल्पकण्ठ अर्थात् आधा पढ़ना आधा न पढ़ना—इतने प्रकार के पाठ अधम ६ पाठ कहलाते हैं। अधम पाठ करने से ही सिद्धि नहीं होती।

भगवती की आराधना विधि विधान से करने का ज्ञान प्राप्त कराने के लिए ही यह संग्रह 'दुर्गार्चन सृति' के नाम से किया गया है। इसमें कलश स्थापन से लेकर पूर्णाहुति तक का विधान सप्रमाण दिया हुआ है। इसके संग्रह कर्ता आगरास्थ श्रीविद्याधर्मवर्द्धिनी पाठशाला के वेद, कर्मकाण्ड अध्यापक विद्याभूषण पण्डित श्रीलक्ष्मी-नारायणजी गोस्वामी (गौड़) महोदय है जो इस विषय के पूर्ण-ज्ञाता मर्मज्ञ है। पुस्तक बढ़ जाने के भय से बहुत-सी बातें इसमें नहीं दी जा सकी है और दृष्टि दोष से भूलों का रह जाना भी सम्भव है। इसमें जितना भी परिश्रम किया गया है वह उसी समय सार्थक समझा जा सकेगा जब कि जिज्ञासु जन इससे लाभ उठावेंगे। इस विषय के ज्ञाता विद्वानों से निवेदन है कि उनके विचार में यदि इसमें कोई त्रुटि हो अथवा और कोई दोष हो तो वे कृपा कर उसकी सूचना संग्रहकर्त्ताजी को देदें जिससे उचित जँचने पर अगले संस्करण में संशोधन कर दिया जा सके। मुझे विश्वास है कि भक्तजन इससे लाभ उठाकर मेरे प्रयत्न को सफल करेंगे।

सर्वेतु सुखिनः सन्तु
सर्वे सन्तु निरामयः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्

दुर्गादत्त भक्त
नवलगढ़ (जयपुर स्टेट)

—:※:—

विषय-सूची

अथ प्रेतबाधाशान्तिकरण विधिः ॥

आचम्य प्राणानायम्य ॥ अद्येत्यादि देशेच मम शास्त्रोक्त पुण्य फलावाप्तये अमुक तीर्थे मध्यान्हे स्नान विधिना संन्ध्या स्नानमहं करिष्ये॥ सन्ध्या तर्पण नित्य कर्म विधाय ॥ अत्राद्य देशे च मम प्रेत चतुर्दशि महा पर्वणि निमित्त तिलपिंड विष्णु तर्पण करणे अधिकारार्थं महा विष्णु प्रीत्यर्थं विष्णोः षोड़शोपचारैः न्यासपूर्वकं विष्णु पूजन महं करिष्ये ॥ अनया यथा कृत पूजया महा पापहारि विष्णु प्रसादात् परिपूर्णतामस्तु ॥ अस्तु चरणामृतं ॥ आचमनं ॥ प्राणायामः ॥ ॐ अपवित्रः पवित्रो वा० ॥ दी० पांसुरे ॥ अपसव्यम् ॥ दक्षिणाभिमुखः ॥ सप्त व्याधा० ॥ तिरश्चिरिन्द्रोनुष्टुप् ॥ एतोन्विन्द्रं ॥ अवत्सार सामपवमानो गायत्रि० ॥ नरत्स० ॥ अपसव्यं ॥ तिलपिंड दान उपहाराणां पवित्रतास्तु ॥ मधुव्वाता० ॥ मधु ३ ॥ अत्राद्य कार्तिक मास शुक्ल पक्षे चतुर्दश्यां तिथौ—प्रेत चतुर्दशिनिमित्तं अनिर्दिष्टा प्रेतक संभव सकल पीड़ोपशान्त्यर्थ सर्वेषां पूर्वजानां उद्धरणार्थं तिल पिंड दान विष्णु तर्पणमहं करिष्ये ॥ (पातितवाम जानुः) ॐ अपहतारेखाकरणं ॥ उल्मुकधारणम् ॥ अवनेजन मंत्रः ॥ पितृवंशे ॥ इमं तोयं तिलैर्मिश्र अवनेजन संज्ञकम् ॥ ददामितेभ्यः प्रेतेभ्यो ये पीड़ां कुरुते मम ॥ पिंड दानम् ॥ इमं तिल मयं पिंडं मधु सपि समन्वितं ॥ ददामितेभ्यो प्रेतेभ्यः ये पीड़ां कुरुते मम ॥ ये केचित्तामसाः प्रेताभूमौ तिष्ठन्ति सर्वदा ॥ तिल पिंड प्रदानेन गतिं गच्छन्तिते ध्रुवम् ॥ तमो रूपाश्च येकेचिद्वर्तते पितरो मम ॥ पिनाक पिंड दानेन ते तृप्यन्तु क्षुधान्विता ॥ अवनेजन मंत्रः ॥ पितृवंशे ॥ इमं तोयं तिलैर्मिश्रं अवनेजन संज्ञकम् ॥ ददामि तेभ्यः प्रेतेभ्यो ये पीड़ां कुरुते मम ॥ ॐ नमोवः पितरो० दत्त ॥ वस्त्रादि पूजा कुर्यात् ॥ तत्र मंत्रः ॥ इमं तोयं तिलैर्मिश्रं अवनेजन संज्ञकं ॥ ददामि तेभ्यः प्रेतेभ्यो ये पीड़ां कुरुते मम ॥ पिंडार्चनं नैवेद्यंते स्वधा ॥ अनेन प्रेतचतुर्दशि निमित्तं श्राद्धं तिलपिंडदानं परिपूर्णतामस्तु ॥ अस्तु ॥ गयायां पिंड दानेन या० सर्वे० ॥ सव्यम् ॥ आचमनं ॥ ईशान विष्णु० ॥ दीर्घा युर्भव० ॥ सुप्रोक्षितादि० अस्तु ॥ पिंडाग्रे विष्णु तर्पणम् ॥ विष्णुसूक्तेन ॥ ऋचाप्रति ॥ अतोदेवा० ॥ विष्णोर्नुकं वीर्या० ॥

अतसीपुष्प संकाशं३मन्त्र ॥ प्रार्थना मंत्रः ॥ दिव्यन्तरिक्षं भूमिस्थ सात्विका राजसास्तथा ॥ प्रेताश्च तामसाज्ञेया शान्तिर्गच्छन्तु तर्पिता ॥ अस्य प्रेतचतुर्दशिनिमित्तं तिल पिंड दानं विष्णु तर्पण सिद्धयर्थं यथा संपन्नान्नेन तृप्ति पर्यन्तेन भोजनेन ब्राह्मणमेकमहं तर्पयिष्ये ॥ तेन अनिर्दिष्टा प्रेतक प्रीयन्तां नमम ॥ अस्य तिल पिंड दान विष्णु तर्पण प्रतिष्टा सिद्धयर्थ रजत दक्षिणा निष्क्रय एतं मनसि संकल्पितं द्रव्यं कस्मैचिद्ब्राह्मणाय तुभ्यं संप्रददे ॥ सव्यं ॥ दक्षिणाः पान्तु ॥ तिलकं कुर्यात् ॥ आशिषः प्रतिगृह्यतां ॥ अपसव्यम् ॥ क्षमध्वं क्षमस्व ॥ स्वर्गगच्छ ॥ संचरणमभ्युक्त ॥ सव्यम् ॥ स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ओं स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ओं स्वस्ति० अस्य प्रेत चतुर्दशि निमित्तं तिल पिंड दान विष्णु तर्पण करणे यन्न्यूनं यदतिरिक्तं तत्सर्वं श्री विष्णोः प्रसादात्सर्वं परिपूर्णमस्तु ॥ शास्त्रोक्त पुण्यफलावाप्तिरस्तु ॥ यस्य स्मृत्याच० ॥ अपसव्यं॥ धारा ॥ अमावाजस्य प्रसवोजगम्यादे मेधा वा पृथिवी विश्वरूपे आमागन्तां पितरा मातराचा मा सोमो अमृतत्वेन गम्यात् ॥ सव्यं ॥ आचमनं ॥ आयुः प्रजां० ॥ इति तिल पिण्ड दान विधिः ॥

अथ अक्षयनवम्यां अश्वत्थ मूले तर्पणम् ॥ उपहार । कलश २ । कच्चा दूध तिलाक्षत सर्वोपधी । मुंद्रापन । पूगीफल । आर्द्रदर्भा । सालिग्राम । चन्दन, तुलशी, धूप, दीप, नैवेद्य, पान, तन्दुलादि गृहीत्वा । उदकाश्रये अश्वत्थसनिधौ गच्छेत् । स्नानं, नित्य कर्म प्राणायामान्तं कृत्वा, आचम्य । अद्येत्यादि देशे च कार्तिकमासे शुक्लपक्षे नवम्यां तिथौ वासरे अक्षयनवमी युगादि पर्वणि निमित्तं अश्वत्थमूले श्री महाविष्णोः षोडशोपचारैः पूजनपूर्वकं योगेश्वरादि देवतानां पितृणां मातामहानां एकोद्दिष्टानां अन्येषां श्लोकोक्तानां च प्रीत्यर्थ शास्त्रोक्त फल अवाप्त्यर्थं अश्वत्थमूले तर्पण महं करिष्ये ।. पूर्व षोडशाभिरूपचारैः श्री महाविष्णोः पूजनं कुर्यात् ॥ अश्वत्थ पूजन मन्त्रः ॥ ओं अश्वत्थेवोनिपदनं पर्णेवोवसतिष्कृता ॥ गोभाज इत्किलासथयत्स न वथ पूरुषम् ॥ कलशं पूरयित्वा ॥ तिलाक्षतं दुग्धं सर्वोपधी मुंद्रापन प्रक्षिपेत् ॥ अथपूजा मन्त्रः ॥ ओं योगेश्वराय पादौतु योगगम्याय जानुनि ॥ महायोगायऊरुभ्यां गुह्ये पुष्टि प्रदाय च ॥ कट्यां च योगयज्ञाय नाभौनारायणाय च । योगात्मने च उदरे विश्वनाथाय वै हृदि ॥२॥ कण्ठे

विश्वसृजे पूज्यो वाह्वोः विश्वेश्वरायच ॥ आस्येच विश्वपुरुपाय नाड्यां नागेश्वरायच ॥३॥ कर्णौ कृष्णायदेवाय जगन्नाथाय चाक्षिणी ॥ भ्रुवौ भगवते पूज्यो ललाटे पीतवाससे ॥४॥ एवं सम्पूज्यदेवेशं शिरो वैयज्ञमूर्तये ज्ञानात्मने तथा वाहू स्वनात्मा चायुधानिच ॥५॥ नमस्ते देव देवेश योगेश्वर जगत्पते ॥ नमस्तेसृष्टिनाथाय जगदादि नमो नमः ॥६॥ योगेश्वराय सर्वाङ्गं एपदेवार्चनं विधिः ॥ सम्प्राप्य वारुणं योगं कार्तिके नवमीसिते ॥७॥ अप्रतिगृह्यतां देव सर्व कामप्रदोभव ॥८॥ प्रथम कलशः ॥ योगेश्वराय देवाय योगगम्यायवेधसे । परमात्म-स्वरूपायक्षेत्रज्ञाय हरायच ॥१॥ शिवायशिवरूपाय ब्रह्मणे विश्व-रूपिणे ॥ जलशायि जगज्योतिः केशवः प्रीयतामिति ॥२॥ अपसव्येन द्वितीयकलश मादाय ॥ पितापिता महश्चैव तथै व प्रपिता महाः ॥ माता पितामहश्चैव तथैवप्रपितामहः ॥ मातापितामहीचैव तथै व प्रपिता मही ॥३। मातामहस्ततः पश्चात्प्रमाता महएवच ॥४॥ वृद्धः प्रमातामहपश्चात्तृप्तिर्गच्छंतिशाश्वती ॥५॥ अन्येयेममहस्तेनएको द्दिष्टा-श्चगोत्रिणः ॥ तेभ्योनीरं मयादत्तं तृप्तायान्तु परांगतिम् ॥५॥ तृतीय कलशमादाय ॥ वृक्षयोनिगतायेच वियोनि चापि येगताः ॥ मुद्गल-त्वगताय च ये प्रेतत्व मागताः ॥६॥ भूतयोनिगता ये च कृमियोनिगता-श्चये ॥ ते सर्वे तृप्तमायान्तु गच्छन्ति गति मुत्तमम् ॥७॥ ममहस्तेन नीरेण वोधिमूलतुसिंचता ॥ आप्लुवन्ति मे पितरो परांतृप्ति जगत्पते ॥८॥

सव्यं । आचमनम् ॥ पुरुपसूक्तेनतर्पणम् ॥ सुप्रोक्षादि करणम् ॥ अस्य अक्षयनवमी युगादि तर्पण प्रतिसिद्ध्यर्थ यथासम्पन्नान्नेनतृप्ति पर्यन्तेन भोजनेन ब्राह्मणमेकमहं तर्पयिष्ये ॥ दक्षिणा संकल्पः ॥ अनेन अश्वत्थरूपी महाविष्णोः पूजनेन योगेश्वरादि श्लोकोक्ता देवता-मातरो पितरो माता महाएको द्दिष्टा अन्याश्च श्लोकोक्ताः प्रीयन्ताम् ॥ अस्य अक्षय नवमी तर्पण कृतस्यविधेः यन्यूनं यदतिरिक्तं तत्सर्व श्री महाविष्णोः प्रसादात् ब्राह्मणानां प्रसादाच्च सर्वं पूर्णतामस्तु शास्त्रोक्त पुण्यफलावाप्तिरस्तु ॥ इति तर्पण विधिः ॥

———

अथ बालक संस्कारः ॥

मधुलाजाभ्यां नाड़ी छेदात्प्राक् स्वर्णशलाकया यज्ञदारुशिखया श्वेत दूर्वया वा बालकस्य जिह्वामोष्ठं वा दक्षिण पाणिना त्रिवारं सम्मार्ज्य तत्र पिता पंक्त्याकारेण मूलमन्त्रं विलिख्य देवीं पूजयेत् ॥ तदुक्तं मत्स्य सूक्ते ॥ अथवा मधुलाजाभ्यां जिह्वायां बालकस्य च ॥ नाड़ी छेदाद्यथापूर्व लिखेत्स्वर्ण शलाकया ॥ मूलमन्त्रं लिखेन्मन्त्री यस्याष्ठे श्वेतदूर्वया ॥ वाक्योच्चारणतो बालो वाग्मी कुलकविर्भवेत् ॥ महोग्रताराकल्पे ॥ नैमित्तिक संस्कारानन्तरमेवमन्त्रलिखनं कार्यम् ॥ तदुक्तं महोग्रे ॥ जन्म संस्कारकं नाम पुत्रे जाते प्रशस्यते ॥ जिह्वायान्तु लिखेन्मन्त्रं यज्ञदारु कुशेन वा ॥ वारत्रयन्तु संमार्ज्य दक्षिणे नैव पाणिना ॥ मूलमुच्चार्य प्रत्येकं पंक्तिं कुर्यात् सुशोभनम् ॥ आदौ संस्कार कर्तव्यस्तदन्ते विलिखेन्मनुम ॥ गन्ध चन्दन पुष्पैश्च पूजयेत्तारिणीं शिवाम् ॥ उत्तराभिमुखो भूत्वा स्थापयेत्पीठ मुत्तमम् ॥ पूजयेत्तारिणीं देवीं नाना भक्ष्यैः सुशोभनैः ॥ कविर्वाग्मी भवेत्पुत्रः सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥ अत्र तारिणी पदमुप लक्षणम् देवी मात्रमेव बोद्धव्यम् ॥ वृहत्श्री क्रमादि तन्त्रे बालक संस्कार दर्शनात् ॥ तदुक्तं तत्रैव ॥ बालकस्यतु जिह्वायां त्रिदिनाभ्यन्तरे लिखेत् ॥ मधुना श्वेतदूर्वा भिर्लिखेत्स्वर्णशलाकया ॥ आम्बं वाग्भवकूटञ्चलिखेद्वै जननान्तरम् ॥ आम्बमिति भैरव्या वाग्भव कूटमित्यर्थः ॥ अथैकादशाहे देवनां सम्पूज्य मन्त्रं लिखेदिति कश्चित् ॥ अथ यदिपिता दूरस्था भवति पितृव्योमातुलो वा मन्त्रं लिखेदिति ॥ तदुक्तं महोग्रे ॥ पितुर्भ्राता लिखेन्मन्त्रं मातुर्भ्राताथवा पुनः ॥ पितुरेव लिखेन्मन्त्रं नान्य एव कदाचन ॥ मातुः क्रोड़े तु संस्थाप्य दर्भानास्तीर्ययत्नतः ॥ शान्ति कुर्याद्बालकस्य ब्राह्मणैः सह साधकः ॥

शान्ति मन्त्रः ॥

इदं पुत्रं कामयतः कामजानामिहैवहि ॥ देवेभ्यः पुष्णाति सर्वं मिदं मज्जननं शिवशान्तिस्ताराये केशवेभ्यस्ताराये रुद्रेभ्य उमाये शिवाय शिव यशसे ॥ इत्यनेन कुशोदकेन शांति कुर्यात् ॥

होमद्रव्यमितिख्यात घृतंशर्करया समम् ॥

पाठान्तरम् ॥

तिलार्द्धन्तुयवाप्रोक्तायवार्द्ध तण्डुलास्तथा ।
तण्डुलैस्त्रिगुणं चाज्यं यथेष्टं शर्करामता ॥
तिलाधिक्येभवेल्लक्ष्मी यवाधिक्ये दरिद्रता ।
घृताधिक्येभवेन्मुक्तिः सर्व सिद्धिस्तुशर्करा ॥

सृष्टिक्रम पाठ व्यवस्था

"मार्कण्डेय उवाच सावर्णिः सूर्यतनयः" इत्यारभ्य "सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णि र्भवितामनुः" इत्यन्तं शान्ति कर्मणिज्ञेयम् ॥

स्थितिक्रमस्तु ॥

"ऋषिरुवाच । पुराशुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यांशचीपतेः" ॥ इत्यादि शक्रादिस्तव समाप्ति पर्यन्तं स्थितिकर्मणि ज्ञेयम् ॥

संहारक्रमस्तु ॥

"एवं देव्यावरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णि र्भवितामनुः ॥"
इति श्लोकः संहार क्रमेण "सावर्णिः सूर्यतनयः" इत्यन्तं पठनीयः । एवं संहारक्रमः स्त्री पुत्र क्षेत्रापहार कर्मणि बोध्यम् ॥

वाराही तन्त्रे ।

आदि मारभ्य प्रजपेत्सृष्टि क्रम इहोच्यते ।
पुरा शुम्भ निशुम्भाभ्यामारभ्य प्रजपेत्सुधीः ॥
आद्याच्छक्रादिपर्यन्तं स्थिति क्रम उदाहृतः ।
शेषमारभ्य आद्यन्तं संहारोऽयं क्रमो भवेत् ॥
स्थिति पाठः सर्वकामे मुक्ति कामे च संहृति ॥
स्त्री कामे पुत्र कामे च सृष्टि क्रम उदाहृतः ॥
शतमादौ शतञ्चान्तेजपेन्मन्त्रं नवाक्षरम् ।
चण्डी सप्तशती मध्ये संपुटोयमुदाहृतः ॥
सकामे संपुटोजाप्यः निष्कामे संपुटंविना ॥१०॥

अथात्र होम द्रव्याणां प्रमाणमभिधीयते ॥
कर्ष मात्रं घृतं होमे शुक्तिमात्रं पयः स्मृतम् ॥

उक्तानि पञ्च गव्यानि तत्समानि मनीषिणः ॥
तत्समंमधुदुग्धान्नमक्षमात्र मुदाहृतम् ॥
दधि प्रसृतिमात्रं स्याल्लाजाः स्युर्मुष्टि संमिताः ॥
पृथुकास्तत्प्रमाणाः स्युः शक्तवोऽपितथोदिताः ॥
गुडं पलार्द्धं मानं स्याच्छर्करापि तथा मता ॥
ग्रासार्द्धं चरु मानं स्यादिक्षुः पर्वावधिर्मता ॥
एकैकं पत्र पुष्पाणि तथाऽपूपानि कल्पयेत् ॥
कदली फल नारङ्ग फलान्यकैकशो विदुः ॥
मातुलिंगं चतुः खण्डं पनसं दशधा कृतम् ॥
अष्टधानारिकेलानि खण्डेतानि विदुर्बुधाः ॥
त्रिधाकृतं फलं विल्वं कपित्थं खण्डितं त्रिधा ॥
उर्वारुकफलं होमे चोदितंखण्डितं त्रिधा ॥
फलान्यन्यानि खण्डानि सामिधः स्युर्दशांगुलाः ॥
दूर्वात्रयंसमुद्दिष्टं गुडूची चतुरंगुलाः ॥
व्रीहयोमुष्टि मात्रास्युर्मुद्ग माष यवा अपि ॥
तण्डुलास्युर्तदर्द्धांशाः कोद्रवामुष्टि संमिताः ॥
गोधूम रक्त कमला विहिता मुष्टि मानतः ॥
तिलाश्चुलुक मात्राः स्युः सर्षपास्तत्प्रमाणकाः ॥
शुक्ति प्रमाणं लवणं मरीचान्येकविंशतिः ॥
पुरुर्बदर मानःस्याद्रामठं तत्समं स्मृतम् ॥
चन्दनागुरु कस्तूरी कर्पूर कुंकुमानि च ॥
तिन्तडी वीज मानानि समुद्दिष्टानिदेशिकः ॥
वैश्वानरं स्थितंध्यायेत्समिद्धोमेषु देशिकः ॥
शयानमाज्यहोमेषु निषण्णंशेषवस्तुपु ॥

अग्नेरास्यादीनां लक्षणम् ॥

सधूमोग्निः शिरोज्ञेयं निर्धूमश्चक्षुरेवहि ॥
ज्वलत् कृष्णो भवेत्कर्णः काष्टमग्रे मनस्तथा ॥
प्रज्वलोग्निस्तथाजिह्वा एतदेवाग्नि लक्षणम् ॥
आस्यान्तर्जुहुयादग्ने विपश्चित्सर्व कर्मसु ॥
कर्णे होमे भवेद्व्याधिर्नेत्रेऽन्धत्वमुदीरितम् ॥
नासिकायांमनः पीडा मस्तके धन संक्षयः ॥

स्वर्ण सिन्दूर वालार्क कुँकुमचौद्रसन्निभः ॥
सुवर्णरेतसोवर्णः शोभनः परिकीर्तितः ॥
भेरीवादित्र हस्तीन्द्र ध्वनिर्वह्नेः शुभावहः ॥
नाग चम्पक पुन्नाग पाटला यूथिका निभः ॥
पद्मेन्दी वर कल्हार सर्पिगुग्गुल सन्निभः ॥
पावकस्य शुभोगन्ध इत्युक्तं तन्त्रवेदिभिः ॥
प्रदक्षिणास्त्यक्त कम्पाश्छत्राभाः शिखिनः शिखाः ॥
शुभदायजमानस्य राज्यस्यापि विशेषतः ॥
कुन्देन्दु धवलोधूमोवन्हेः प्रोक्तः शुभावहः ॥
कृष्णः कृष्णगतेर्वर्णोः यजमानं विनाशयेत् ॥
श्वेतोराष्ट्रं निहन्त्याशु वायसस्वर सन्निभः ॥
खरस्वर समोवन्हे ध्वनिः सर्वविनाश कृत् ॥
पूतिगन्धो हुतभुजो होतुर्दुःखप्रदो भवेत ॥
छिन्नावर्ता शिखा कुर्यान्मृत्युं धनपरिक्षयम् ॥
शुक पत्तनिभो धूमः पारावतसमप्रभः ॥
हानिं तुरग जातीनां गवां च कुरुते चिरात् ॥
एवं विधेषु दोषेषु प्रायश्चित्तायदेशिकः ॥
मूलेनाज्येन जुहुयात्पञ्चविंशतिमाहुतीः ॥१३६॥

शारदायां ५ पटले

विशेष द्रष्टव्य ।

सम्पूर्ण उपासकों को विदित हो कि मन्त्र की उपासना के लिये पूर्व मे गुरु मुख द्वारा मन्त्रोपदेश ग्रहण करने के उपरान्त मन्त्र के १० संस्कार तदनन्तर सेतु, महासेतु, मुखशोधन, कुल्लुका, शापोद्धार, संजीवन, उत्कीलन, निर्मलीकरण, आदि विषयों को गुरु द्वारा जानकर प्रयोग करने से जल्दी सिद्धी होती है इसलिये इन सब भेदों को गुरु द्वारा जाने ॥

श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी
श्रीविद्याधर्म-वर्द्धिनी पाठशाला माईथान, आगरा ।



सेठ दुर्गादत्त भगत,
नवलगढ़ (जयपुर स्टेट)

श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी,
माईथान, आगरा

* श्रीगणेशायनमः *

॥ अथ दुर्गापूजने ॥

कलश स्थापन विधिः

जेतुं यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलिं बध्नता ।
स्रष्टुं वादि भवोद्भवेन भुवनं शेषेण धर्तुंधराम् ॥
पार्वत्या माहिषासुर प्रमथने सिद्धाधिपैः सिद्धये ।
ध्यातः पञ्चशरेण विश्व जितये पायात्स नागाननः ॥



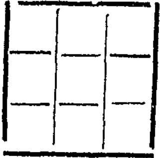
तत्र प्रतिपदि पूर्वाह्णे पुष्पतैलादिना कृतमङ्गल स्नानः* नित्यक्रियां कृत्वा नवेवाससी परिधाय चन्दन मृगमद कुंकुमैः सर्वाङ्गमनुलिप्य त्रिपुण्ड्रं ऊर्ध्वपुण्ड्रं वा कृत्वा †पूर्वाभिमुखो देवीमुखो वा समुपविश्य सोपग्रह-पाणिराचम्य ॥ ॐ मूलम् आत्मतत्त्वाय नमः ॥ १ ॥ ॐ मूलम् विद्यातत्त्वाय नमः ॥ २ ॥ ॐ मूलम् शिव-तत्त्वाय नमः ॥ ३ ॥ (मूलम् चात्रदुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहेति)

---

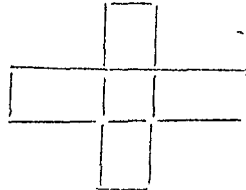
* रुद्रयामले ॥ स्नानं मांगलिकं कृत्वा ततो देवीं प्रपूजयेत् ।
शुभाभिर्मृत्तिकाभिश्च पूर्वं कृत्वा तु वेदिकाम् ॥ १ ॥

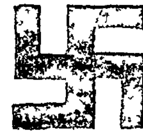
† देवतापूजने प्राची मध्ये पूजक पूज्ययोः ॥

ईशान
पूर्व
अग्नि
उत्तर
दक्षिण
वायव्य
पश्चिम
नैर्ऋत
पेज ३२ पर छपे हुए यन्त्र
पै प्रधान कलश स्थापन करना
वरुण कलश
नवग्रहाः

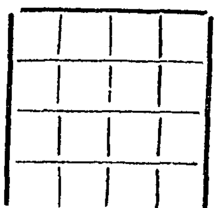


पंचोंकार





१२ गणेश
षोडशमातृ का



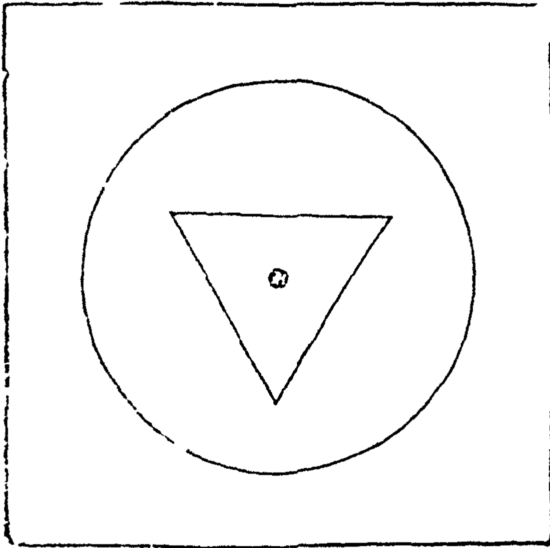
६४ योगिनी
५० क्षेत्रपाल
वास्तु

हाथों को धोकर प्राणायाम करै।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ ॐ पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलंछन्दः कूर्मोदेवता आसनोपवेशने विनियोगः॥ ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुनाधृता। त्वं चधारय मान्देवि पवित्रङ्कुरुचासनम्॥

---

(१) पूजागृहस्य ईशानदिशि पूजास्थानं कल्पयित्वा गोमयोपलिप्तायां धरायां विन्दु त्रिकोण षट्कोण अष्टदल षड्विंशतिदल भूपुरयुतं यंत्रं विलिख्य वा विन्दु त्रिकोण वृत्त चतुरस्रंलिखेत्॥



तस्योपरि तीर्थमृत्तिका शुभमृत्तिकाभिर्वेदीं रचयित्वा यवान् गोधूमान्वा वापयेत्। तत्समीपे काष्ठपीठोपरि श्वेतवस्त्रं प्रसार्य गणेशादीन्स्थापयित्वा पूजयेत्। पश्चात् कलशं संस्थाप्य दुर्गां पूजयित्वा स्तुवीत नवमीदिने॥ स्थापित देवानां उत्तर पूजनं कृत्वा विसर्जयेत्॥

जौ बोने से शुभाशुभ ज्ञान

सिद्धान्तशेखरोक्त यवांकुर परीक्षा

यजमानाभिवृद्ध्यर्थं अंकुराणिपरीक्षयेत्॥ सस्यगूद्ध्वं प्ररूढ़ानि कोमलानि सितानि च॥ धूम्रवर्णान्यपूर्वाणि तथातिर्यग्गतानि च॥ श्यामलानि च कुब्जानि वर्जयेदशुभानि च॥

फलानि

अवृष्टिंकुरुते कृष्णंधूम्राभं कलहं तथा॥ अपूर्णं जननाशं च दुर्भिक्षं श्यामलांकुरं॥ तिर्यग्गतेभवेद्व्याधिः कुब्जे शत्रुभयंतथा॥

यजमान के हाथ में फूल सुपारी और अक्षत लेकर स्वस्ति-वाचन बोलना।

ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ॥ हरिः ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ -हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ-हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ-हवामहे वसोमम ॥ आहमजानिगर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ॥ १ ॥ स्वस्तिनऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥ २ ॥ पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषुपयो दिव्यंतरिक्षेपयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ ३ ॥ विष्णोरराटमसिविष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा ॥३॥ अग्निर्देवता वातोदेवता सूर्योदेवता

अशुभेचांकुरे जाते शान्तिहोमंसमाचरेत् ॥ मूल मन्त्रेण जुहुयाद्गुरुमूर्तिं धरैः सह ॥ अघोरास्त्रेण चास्त्रेण शतं वाथ सहस्रकम् ॥

सारस्वतेपि

प्ररूढैरंकुरैः कर्तुर्निर्दिशेच्चशुभाशुभं ॥ श्यामैः कृष्णैरंकुरैरर्थहानि स्तिर्यग्रूढैर्व्याधिरांदोलि तैस्तैः ॥ कुब्जैर्दुःखं दुःष्प्ररूढैर्मृतिं च रोगाभुग्नैः स्थानदेशेष्ट हानिः ॥

यवांकुर रोपण नियमः

दीक्षादिवसात्प्राक् सप्तभिर्दिनैः ॥ एतेन दीक्षादिनमष्टमं यथा भवति तथा कर्त्तव्यमित्युक्तं ॥ विधिवदित्यनेन नवभिः त्रिभिः सद्योवेत्युक्तं ॥ तदुक्तं सिद्धान्तशेखरे ॥ प्रतिष्ठायां च दीक्षायां स्थापनेचोत्सवे तथा ॥ संप्रोक्षणे च शान्त्यर्थं विवाहेमौंजिबंधने ॥ सर्व मंगल कार्येषु कारयेदंकुरार्पणम् ॥ प्रतिष्ठादिवसात्पूर्वं नवमे सप्तमेदिने ॥ पंचमेवातृतीयेवासद्योवा चांकुरार्पणम् ॥ पुण्याहघोषणं कृत्वा ब्राह्मणैः सहदेशिकः ॥ मंगलांकुरस्य वपनं कुर्यात्तत्रैव चाहनि ॥ सप्तमाद्यवमाद्वापि प्रागेव यज्ञ कर्म्मणि ॥ इति

चन्द्रमादेवता वसवोदेवता रुद्रादेवता दित्यादेवता मरुतो-
देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रोदेवता वरुणो-
देवता ॥ ५ ॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ-शान्तिः-पृथिवी
शान्ति रापःशान्ति रोषधयः शान्तिः ॥ वनस्पतयः शान्ति-
र्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ-शान्तिः शान्तिरेव-
शान्तिः सामाशान्तिरेधि ॥६॥ विश्वानिदेवसवितर्दुरि-
तानि परासुव । यद्भद्रन्तन्नआसुव ॥ ७ ॥ एतन्ते-
देवसवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमवतेन
यज्ञपतिन्तेन मामव ॥ ८ ॥ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य
बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञꣳ-समिमन्दधातु ।
विश्वेदेवासऽइहमादयन्तामो३ प्रतिष्ठः ॥ ९ ॥ एषवै
प्रतिष्ठानाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेवप्रतिष्ठि-
तम्भवति ॥१०॥ ॐ शान्तिः सुशान्तिः सर्वारिष्ट
शान्तिर्भवतु ॥ ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलोगजकर्णकः ॥
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥११॥ धूम्र-
केतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ॥ द्वादशैतानि
नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥१२॥ विद्यारम्भे विवाहे च

तन्त्रान्तरेपि

उत्सवेषु विविधेष्वपि दीक्षास्थापनादिषु पवित्रविधौ च ॥
मंगलाङ्कुर विशेषणपूर्वमंगलं भवति कर्मकृतंतत् ॥ शस्तयोगदिवसात्तु
पुरस्तात्सप्तमेहनि शुभे नवमे वा ॥ पंचमेथ सुदिवसे सुमुहूर्ते
मंगलाङ्कुर विधिं विदधीतेति ॥ तत्र पूर्वेद्युरुपवासं कृत्वा स्वगृह्योक्त-
विधिना नान्दीश्राद्धं कृत्वा अङ्कुरार्पणमारभेत् ॥ तदुक्तं गुरुर्विशुद्धः
प्रागेव शुद्धाहात् प्रथमेहनि ॥ संकल्प्यो पोष्य कर्तव्यमंकुरारोपणं-
शुभम् ॥ कुर्यान्नांदी मुखं श्राद्धं पूर्वेद्युः स्वस्तिवाचनं ॥ स्वगृह्योक्त-
प्रकारेणं तदेतद्विदधीतवै ॥ इति ॥ संहितायामपि ॥ सर्वत्राभ्युदय-
श्राद्धमंकुरोत्पादनंतथा ॥ आदावेव प्रकुर्वीत कर्मणोभ्युदयात्मनः ॥ इति

प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्यन-
जायते ॥१३॥ शुक्लाम्बरधरन्देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्
प्रसन्नवदनंध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥१४॥ अभीप्सिता-
र्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ॥ सर्वविघ्नहरस्तस्मै
गणाधिपतये नमः ॥१५॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवेसर्वार्थ-
साधिके ॥ शरण्येत्र्यंबिके गौरि नारायणि नमोस्तुते ॥१६॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम् । येषां हृदिस्थो-
भगवान्मंगलायतनो हरिः ॥१७॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां
कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो
जनार्दनः ॥१८॥ विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्माविष्णुमहे-
श्वरान् । सरस्वतीं प्रणम्यादौ शान्तिकार्यार्थसिद्धये ॥१९॥
सर्वेष्वारंभकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः देवादिशन्तु नः
सिद्धिं ब्रह्मेशान जनार्दनाः ॥२०॥ वक्रतुण्ड महाकाय
सूर्यकोटिसमप्रभ । अविघ्नंकुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा
॥२१॥ ॐ सिद्धि बुद्धि सहित श्रीमन्महागणाधिपतये
नमः । ॐ लक्ष्मी नारायणाभ्यान्नमः ॥ ॐ उमामहेश्वरा-
भ्यान्नमः । ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यांनमः ॥ ॐ शची-
पुरन्दराभ्यान्नमः । ॐ मातापितृचरणकमलेभ्योनमः ॥ ॐ
कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः । ॐ ग्राम-
देवताभ्यो नमः । ॐ स्थानदेवताभ्योनमः ॥ ॐ वास्तुदेव-
ताभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्योदेवेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्योब्राह्म-
णेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो तीर्थेभ्यो नमः ॥ ॐ एतत्कर्म-
प्रधान श्रीदुर्गादेव्यै नमः । ॐ पुण्यंपुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ॥
वामेगुँ गुरुभ्यो नमः । दक्षिणे भँ भद्रकाल्यै नमः ॥
उपरि गँ गणपतये नमः ॥ हृदि दुँ दुर्गायै नमः । ॐ

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम ॥ भैरवाय नमस्तुभ्यं मनुज्ञांदातुमर्हसि ॥

हाथ के अक्षत फूलों को गणेशजी पर चढ़ाना फिर हाथ में संकल्प के लिए फूल अक्षत दक्षिणा, और सुपारी जल सहित लेकर संकल्प करना चाहिये।

ॐ स्वस्तिश्रीमन् मुकुन्दसच्चिदानन्दस्याज्ञयाप्रवर्तमानस्याद्य ब्रह्मणो द्वितीये प्रहरार्द्धे एकपंचाशत्तमेवर्षे प्रथमपक्षे प्रथम दिवसे अह्नो द्वितीयेयामे तृतीयेमुहूर्ते रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानांमध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे कृतत्रेताद्वापरकलिसंज्ञानां चतुर्युगानांमध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे तत्प्रथमचरणे तथा पंचाशत्कोटियोजनविस्तीर्णभूमंडलान्तर्गत सप्तद्वीपमध्यवर्तिनि जम्बूद्वीपे तत्रापि नवखंडानांमध्ये नवसहस्रयोजनविस्तीर्णे भरतखंडे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे कुमारिकाक्षेत्रे मथुरामण्डले[१] रेणुका समीप क्षेत्रे[२] श्री गंगायमुनयोः पश्चिमेतटे श्रीनर्मदाया उत्तरदेशे देवब्राह्मणानांसन्निधौ श्रीमन्नृपति वीर विक्रमादित्य राज्यातीत अमुकसंख्यापरिमिते प्रवर्तमानसंवत्सरे प्रभवादिषष्ठिसंवत्सराणां मध्ये अमुक नामसंवत्सरे अमुकायने अमुकगोले अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकयोगे अमुककर्णेअमुकराशिस्थे सूर्ये अमुकराशिस्थे चन्द्रे अमुकराशिस्थे देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथा

---

(१) समीपवर्ती मंडल। (२) समीपवर्ती क्षेत्र।

भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते ॥१॥ विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ॥ नागाननाय सितसर्पविभूषिताय गौरी सुताय गणनाथ नमोनमस्ते ॥ २ ॥ अनया पूजया सिद्धिबुद्धिसहित महागणपतिः सांगः सपरिवारः प्रीयताम् ।

अथ पूर्व में पंचोंकार का पूजनम् ॥ अक्षत लेकर ॥

ॐ आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वा नाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णुरथेष्ठाः सभेयोयुवास्य यजमानस्य वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्योनऽओषधयः पच्यन्ताँ योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पूर्वे ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि नमः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः दक्षिणे गायत्रि इहागच्छ इहतिष्ठ गायत्र्यै नमः ॥ गायत्रीमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पश्चिमे गोवर्द्धन इहागच्छ इहतिष्ठ गोवर्द्धनाय नमः गोवर्द्धनमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः उत्तरे पृथिवि इहागच्छ इहतिष्ठ पृथिव्यै नमः ॥ पृथिवीमावाहयामि स्थापयामि नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः मध्ये यज्ञपते इहागच्छ इहतिष्ठ यज्ञपतये नमः यज्ञपतिमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ इति प्रतिष्ठाप्य ॥

पूर्ववत् पाद्यादि से पूजन कराकर प्रार्थना ॥

ॐ ब्रह्मा देवी च गायत्री तथा गोवर्द्धनेश्वरः । पृथ्वी यज्ञपतिश्चैतान् पंचोङ्कारान्नमाम्यहम् । अनया पूजया सांगाः सपरिवाराः ब्रह्मादिपंचप्रणवाः प्रीणन्तु नमम ॥

तत्रैव गणेश समीपे—

अथ अग्निकोण में वक्रादिद्वादशगणेश का पूजन कराना चाहिये।

ॐ नमोगणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्रातेभ्योव्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्यश्चवोनमोनमोविरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्चवोनमो नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः वक्रादि द्वादशमूर्ति गणपा इहागच्छत इहतिष्ठत। वक्रादिद्वादशमूर्तिगणपेभ्यो नमः वक्रादि द्वादश गणपान् आवाहयामि स्थापयामि नमः।

पाद्यादि से पूजन कराना

॥ प्रार्थना ॥

ॐ नमो देवगणेशाय नमस्ते विघ्ननाशन ॥ नमो मूषकमारूढ़ शुभकर्त्रे नमोनमः। नमः कात्यायनीपुत्र नमः परशुपाणये ॥ रवेरुदयतेरूपं विद्याबुद्धि विचक्षण ॥ देहि मे रूप सौभाग्यं देहि मे पुत्रसम्पदः॥ इच्छासिद्धिप्रदो देव यथोक्तभव मे सदा ॥ अनया पूजया सांगाः सपरिवाराः वक्रादि १२ गणपाः प्रीणन्तु नमम ॥

अथ नैर्ऋत्य कोण में वास्तु पूजन कराना ॥

ॐ वास्तोष्पतेप्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशोऽअनमीवोभवानः यत्वेमहेप्रतितन्नोयुषस्वशन्नोभवद्विपदे शंचतुष्पदे। ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तुपुरुष इहागच्छ इहतिष्ठ वास्तु पुरुषाय नमः ॥ वास्तुपुरुषमावाहयामि स्थापयामि नमः।

पाद्यादि से पूजन कराकर प्रार्थना ॥

नागपृष्ठसमारूढं शूलहस्तं महाबलम् ॥ पाताल नायकंदेवं वास्तुदेवंनमाम्यहम् ॥ अनयापूजया सांगः सपरिवारः वास्तुदेवः प्रीणातु नमम ॥

पाद्यादि से पूजन कराकर—प्रार्थना

ॐ ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशीभूमिसुतोबुधश्च। गुरुश्चशुक्रश्शनिराहु केतवःसर्वेग्रहाःशान्तिकराभवन्तु । ॐ अधिदेवताभ्यो नमः । ॐशिवोगौरीतथास्कन्दो विष्णु ब्रह्मापुरन्दरः ॥ यमकालश्चित्रगुप्तश्चाधिदेवाइमेस्मृताः । ॐ प्रत्यधिदेवताभ्यो नमः ॥ ॐ अग्निरापोमहीविष्णुरिन्द्ररिन्द्राणिकातथा । प्रजापतिभुजंगश्च ब्रह्माप्रत्यधिदेवताः ॥ ॐ गणादिपंचलोकपालेभ्यो नमः ॥ ॐ विनायकस्तथादुर्गा वायुराकाशमेव च ॥ अश्विनौचैवपंचैतांल्लोकपालान्नमाम्यहम् । ॐ इन्द्रादिदशदिग्पालेभ्यो नमः ॥ ॐ इन्द्रो वन्हिः पितृपतिर्नैऋतो वरुणो मरुत् । कुबेर ईशो ब्रह्मा च अनन्तश्च दिगीश्वराः ॥ अनयापूजया सांगाः सपरिवाराः सूर्यादयः प्रीणन्तु नमम ।

अथ प्रधान कलशस्थापनम्

॥ अथ भूमिस्पर्शनम् ॥

ॐ भूरसिभूमिरस्यदितिरसिविश्वधायाविश्वस्यभुवनस्यधर्त्री ॥ पृथिवींयच्छपृथिवींदृ॑ठं—हपृथिवींमाहिं॑ठं—सीः ॥ महीद्यौः पृथिवि चनइमंयज्ञंमिमिक्षताम् ॥ पिपृतान्नोभरीमभिः ॥ इतिभूमिंस्पृष्ट्वा ।

अथ मृत्तिका की वेदी में जौ या गेहूँ मिलावे*

ॐ धान्यमसिधिनुहिदेवान्प्राणायत्वो दानायत्वाव्यानायत्वा ॥ दीर्घामनुप्रसिति मायुषेधान्देवोवः—सविता-

---

* यवान्वै वापयेत्तत्र गोधूमैश्चापि संयुतान् ॥ तत्र संस्थापयेत् कुम्भं विधिना मन्त्रपूर्वकम् ॥२॥

हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेणपाणिनाचक्षुषेत्वाम-हीनां पयोसि ॥ ओषधयः संवदन्तेसोमेनसहराज्ञाय-स्मैकृणोतिब्राह्मणस्तंराजंपारयामसि ॥ इतियवान्गोधू-मान्वाप्रक्षेपः ।

॥ अथ कलश रखना ॥

ॐ आजिघ्रकलशंमह्यात्वाविशंत्विन्दवः पुनरूर्जा-निवर्तस्वसानः सहस्रंधुक्ष्वोरुधारापयस्वतीपुनर्माविश-ताद्रयिः ॥ आकलशेषुधावतिपवित्रेपरिषिच्यते ॥ उक्-थैर्यज्ञेषुवर्द्धते ॥ इतिकलशंस्थाप्य ॥

अथ कलश में जल गेरना ॥

ॐ वरुणस्योत्तंभनमसिवरुणस्यस्कंभसर्जनीस्थोवरु-णस्यऽऋतसदन्यसिवरुणस्यऽऋतसदनमसिवरुणस्यऽऋ-तसदनमासीद ॥ इति जल प्रक्षेपः ॥

अथ कलशेतीर्थ गंगाजल या जमना जल गेरना ॥

ॐ इमंमेगंगेयमुनेसरस्वतिशुतुद्रिस्तोमेसचतापरु-ष्ण्यामरुद्वृधेवितस्तयाजीकीयेशृणुह्यासुसोमय ॥ इति तीर्थजलेनापूर्य ।

अथ गन्ध (चंदन) गेरना ॥

ॐ गंधद्वारांदुराधर्षांनित्य पुष्टांकरीषिणींईश्वरींसर्व-भूतानांतामिहोपह्वयेश्रियम्। इति कलशेगंधंप्रक्षेपः ॥

अथ सर्वौषधी गेरना*

ॐ याऽओषधीः पूर्वायातादेवेभ्यस्त्रियुगंपुरा ॥ मनै-नुवभ्रूणामहꣳ-शतंधामानिसप्तच ॥ इति सर्वौ-षधीप्रक्षेपः ॥

---

* कुष्टं मांसी हरिद्रे द्वे मुरा शैलेय चन्दनम् ॥ वचा चंपक मुस्ते च सर्वौषध्यः दशस्मृतः ॥

अथ दूर्वा गेरना ॥

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तिपरुषःपरुषस्परि ॥ एवानो दूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ इति दूर्वाप्रक्षेपः ॥

अथ कुशा गेरना ॥

ॐ पवित्रेस्थोवैष्णव्यौसवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्यरश्मिभिः ॥ तस्यतेपवित्रपतेपवित्रपूतस्ययत्कामः पुनेतच्छकेयम् ॥ इति कुशप्रक्षेपः ॥

अथ[1] सप्तमृत्तिका गेरना ॥

ॐ स्योनापृथिविनोभवान्नृक्षरानिवेशनीयच्छानः शर्मसप्रथाः ॥ इतिसप्तमृद्प्रक्षेपः ॥

अथ पुङ्गीफल गेरना ॥

ॐ याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्चंत्वꣳहसः ॥ इति पुङ्गीफल प्रक्षेपः ॥

अथ[2] पंचरत्नानिप्रक्षेपणम् पंचरत्नी गेरना ॥

ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानिदाशुषे । सहिरत्नानिदाशुषेसुवातिसविताभगः-तंभागंचित्रमीमहे ॥ इति पंचरत्नानिप्रक्षेपः ॥

१—गजाश्व रथ वल्मीक सङ्गमाद्धृत गोकुलात् ॥ मृदमानीय कुम्भेषु प्रक्षिपेच्चत्वरात्तथा ॥ गोकुलावधि सप्त चत्वरेणसहाष्टौभवेयुः ॥ २—कनकं कुलिशं नीलं पद्मरागं च मौक्तिकम् ॥ एतानि पंचरत्नानि रत्नशास्त्र विदो विदुः ॥

सोने के अभाव में दक्षिणा गेरना ॥

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽ आसीत् ॥ सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्मैदेवाय हविषा विधेम ॥ इति दक्षिणा प्रक्षेपः ॥

[1]अथ पंच पल्लव गेरना ॥

ॐ अश्वत्थेवो निषदनं पर्णेवोवसतिष्कृता ॥ गोभाजऽइत्किला सथयत्सनवथ पूरुषम् ॥ इति पंच पल्लवानि प्रक्षेपः ॥

अथ कलश के गले में मौली (सूत्र) बाँधना ॥

ॐ युवा सुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान् भवति जायमानः ॥ तन्धीरासः कवयऽउन्नयन्ति साध्यो मनसा देवयन्तः ॥ इतिकौसुम्भ सूत्र बंधनम् ॥

पात्र में चावल भर कर कलश के ऊपर रखना ॥

ॐ पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत ॥ वस्नेव विक्रीणा वहाऽइष मूर्जᳬशतक्रतो ॥ इति कलशोपरि तंडुल पूरित पूर्ण पात्र निधानम् ॥

अथ नारियल के ऊपर स्वस्तिक लगा सूत्र बाँधकर पूर्ण पात्र के ऊपर रखना ॥

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाण मुम्म ऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ॥ इति श्रीफलनिधानम् ॥

कलश में वरुण का पूजन करना ॥

ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो वरुणे हवोध्युरुशᳬस मानऽआयुः प्रमोषीः ॥ इत्यनेन पाद्यादिभिः वरुणं संपूज्य ॥

---

1 श्राद्धे ॥ अश्वत्थोदुम्बर लक्ष चूत न्यग्रोध पल्लवाः ॥
पञ्च भंगा इति ख्याता सर्व कर्मसु शोभनाः ॥१॥

ॐ अँ द्वादश कलात्मने सूर्य मण्डलायनमः ॥ [1]मूलेन तीर्थोदकैः पूरयेत् ॥ पुनः गंधादिभिः सम्पूज्य ॥ षोड़श कलात्मने सोममण्डलायनमः ॥ ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ॥ नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेस्मिन्सं-निधिं कुरु ॥ इत्यङ्कुश मुद्रया [2] तीर्थान्या वाह्य ॥ मूल मष्ट वारंजपित्वा धेनु[3] मत्स्य[4] कुम्भ[5] मुद्राः प्रदर्श्य तज्जलेन आत्मानं पूजा सामिग्रीञ्च सम्प्रोक्ष्य ॥ इति-कलशस्थापनम् ॥

पहिले श्री सूत्र के १६ मन्त्रों से अपने शरीर में देह न्यास करै ॥

इसी प्रकार भगवती की मूर्ति से फूल लगाकर भगवती की मूर्ति मे भी इन्हीं सब अंगों का ध्यान से न्यास करना चाहिये

ॐ हिरण्य वर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम् ॥ चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१॥ वाम करे ॥

ॐ ताम्म आवह जात वेदो लक्ष्मी मनप गामि-नीम् ॥ यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२॥ दक्ष करे ॥

१—ऐंह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे वा दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा ॥ २—ऋज्वीं मध्यमिकां कृत्वा तर्जनीं मध्य पर्वणि । संयोज्याकुञ्चये-त्किञ्चिन्मुद्रैषांकुश संज्ञिता; ३—वामांगुलीनां मध्येषु दक्षिणांगुलि संस्थिता ॥ नियोज्य तर्जनी दक्षा वाम मध्यमया तथा ॥ दक्ष-मध्यमया वामा तर्जनीञ्च नियोजयेत् । दक्षयानामयावामां कनिष्ठा-ञ्चनियोजयेत् ॥ पिहिताधोमुखी चैषा धेनु मुद्रा प्रकीर्तिता ॥ ४—वामो-परिशत्संस्थाप्य दक्ष हस्त प्रसारयेत् । अंगुष्ठौ युतयोः पार्श्वेमत्स्य मुद्रेयमीरिता ॥ ५—हस्तद्वयेन सावकाशिक मुष्टिकरणे कुम्भ मुद्रा ॥

ॐ अश्वपूर्णां (र्वां) रथमध्यां हस्तिनाद प्रबोधिनीम् ॥ श्रियंदेवी मुपह्वये श्रीर्मादेवीजुषताम् ॥३॥ वामपादे ॥

ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां-तर्पयन्तीम् ॥ पद्मे स्थितां पद्म वर्णां तामिहो पह्वये श्रियम् ॥५॥ दक्षपादे ॥

ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवि जुष्टामुदारां ॥ तां पद्मनी (ने) मीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मेनश्यतां त्वां वृणे ॥४॥ वामजानौ ॥

ॐ आदित्यवर्णे तपसोधि जातो वनस्पतिस्तववृक्षो थविल्व ॥ तस्यफलानि तपसानुदन्तु मायान्तरायाश्च-बाह्या अलक्ष्मीः ॥६॥ दक्षजानौ ॥

ॐ उपैतु मां देव सखः कीर्तिश्चमणिना सह ॥ प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७॥ वाम कुक्षौ ॥

ॐ क्षुतिपिपासामलाज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ॥ अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥८ दक्षकुक्षौ ॥

ॐ गन्धद्वारांदुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् ॥९॥ नाभौ ॥

ॐ मनसः काममाकूतिंवाचः सत्यमशीमहि ॥ पशूनां रूप मन्नस्य मयि श्रीः श्रयतांयशः ॥१०॥ हृदि ॥

ॐ कर्दमेनप्रजाभूता मयि संभ्रम कर्दम ॥ श्रियंवासय मे कुलेमातरं पद्ममालिनीम् ॥११॥ वामबाहौ ॥

ॐ आं ह्रीं क्रों यं र लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोऽहं अस्याः श्री दुर्गा प्रतिमायाः जीव इहस्थितः ॥

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हं सः सोऽहं अस्याः श्री दुर्गा प्रतिमायाः सर्वेन्द्रियाणि वाङ् मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्र जिह्वाघ्राणपाणि पाद पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखंचिरं तिष्टन्तुस्वाहा ॥

ॐ मनोजूति र्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञ मिमन्त-नोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमन्दधातु ॥ विश्वे देवास ऽइहमाद-यन्तामों ३ प्रतिष्ठः ॥ ॐ एषवै प्रतिष्ठा नामयज्ञो यत्रै तेन यज्ञे नयजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितस्भवति ॥ इति प्रतिष्ठाप्य ॥ अथ नेत्रोन्मीलनम् ॥ ॐ वृत्रस्यासि कनी न कश्चक्षुर्दा ऽअसिचक्षुर्मेदेहि ॥ गंधादि पंचोपचारान्द त्वा संस्कारसिद्धये षोड़षप्रणवावृत्तिं कुर्यात् ॥ अनेन अस्याः श्री दुर्गा प्रतिमायाः गर्भाधानादि षोडश संस्कारान्संपादयामि ॥ इति वदेत् ॥ ततः श्री दुर्गा प्रतिमां प्रधान कलशोपरिधृत्वा षोड़शोपचारैः यथो-पचारैर्वा पूजयेत् ॥

फूल हाथों में लेकर ध्यान करना ॥

ॐ जटाजूट समायुक्तामर्द्धेन्दु कृतलक्षणाम् ॥
लोचनत्रय संयुक्ताम्पद्मेन्दु सदृशाननाम् ॥१॥
अतसीपुष्प वर्णाभां सुप्रतिष्ठां सुलोचनाम् ॥
नवयौवन संपन्नां सर्वाभरण भूषिताम् ॥
सुचारुवदनां तद्वत्पीनोन्नत पयोधराम् ॥
त्रिभंगस्थान संस्थान महिषासुरमर्दिनीम् ॥३॥



दुर्गादत्त भक्त

ॐ जटाजूट समायुक्तामर्द्धेन्दु कृत लक्षणाम् ॥
लोचनत्रय संयुक्ताम्पद्मेन्दु सदृशाननाम् ॥
अतसीपुष्पवर्णाभां सुप्रतिष्ठां सुलोचनाम् ॥
नवयौवनसंपन्नां सर्वाभरण भूपिता मित्यादि ॥ १ ॥

त्रिशूलं दक्षिणेदद्यात्खड्गं चक्रं क्रमादधः ॥
तीक्ष्ण बाणं तथाशक्तिं वामतोपि निबोधत ॥४॥
खेटकं पूर्ण चापं च पाशमंकुशमूर्द्ध्वज्रम् ॥
घंटां वा परशुं वापि वामतः सन्निवेशयेत् ॥५॥
अधस्तान्महिषं तद्वच्छिरस्कं प्रदर्शयेत् ॥
शिरश्छेदोद्भवंतद्वद्दानवं खड्गपाणिनम् ॥६॥
हृदिशूलेननिर्भिन्नं निर्द्यन्त्र विभूषितम् ॥
रक्त रक्ती कृताङ्गञ्च रक्त विस्फारिते क्षणम् ॥७॥
वेष्ठितं नागपाशेन भृकुटी भीषणाननाम् ॥
सपाश वामहस्तेन धृतकेशंच दुर्गया ॥८॥
वमद्रुधिरवक्त्रञ्च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ॥
देव्यास्तु दक्षिणं पादं समंसिंहो परिस्थितम् ॥९॥
किंचिदूर्ध्वं तथा वाममंगुष्ठो महिषोपरि ॥
स्तूयमानञ्च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत् ॥१०॥

इति ध्यात्वा करस्थित पुष्पाणि कलशे मूर्तौ वा क्षिपेत् ॥

हाथ में फिर फूल लेकर प्रार्थना करै

ॐ महिषघ्नीं महादेवीं कुमारीं सिंह वाहिनीम् ॥
दानवांस्तर्जयन्तीञ्च सर्व काम दुघां शिवाम् ॥१॥
ध्यायामि मनसा दुर्गां नाभि मध्ये व्यवस्थिताम् ॥
आगच्छवरदे ! देवि ! दैत्य दर्प निपातिनि ! ॥२॥
पूजांगृहाण सुमुखि ! नमस्ते शङ्करप्रिये ! ॥
सर्व तीर्थमयं वारि सर्व देव समन्वितम् ॥३॥
इमं घटं समागच्छ तिष्ठ देवि ! गणैःसह ॥
दुर्गे ! देवि ! समागच्छ सान्निध्य मिह कल्पय ॥४॥

बलि पूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥
अस्मिन् घटे समागच्छ स्थितिं मत्कृपया कुरु ॥
रक्षां कुरु सदा भद्रे ! विश्वेश्वरि ! नमोस्तुते ॥
एह्येहि दुर्गे ! दुरितौघनाशिनि ! ॥
प्रचण्ड दैत्यौघ विनाश कारिणि ! ॥
उमे ! महेशार्द्ध शरीर धारिणि ! ॥
स्थिरा भव त्वं मम यज्ञ कर्मणि ॥

इति देवीं ध्यात्वा मूलाधारात्कुण्डलिनीमुत्थाप्य ॥ तयासह शिवेन संयोज्य वायुबीजेन नासापुटेन देवीं कुसुमाञ्जलावानीय ॥

एहि दुर्गे ! महाभागे ! रक्षार्थं मम सर्वदा ॥
आवाहयाम्यहं देवि ! सर्व कामार्थ सिद्धये ॥

इत्यनेन पुष्पांजलिं कलशे यन्त्रे वा निधाय ॥ देवी रूपं विभाव्य पूजयेत् ॥ तत्रमंत्राः ॥

अथ वेदोक्त दुर्गा पूजन विधिः

[1]अथ वाहनम् ॥

ॐ हिरण्य वर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां ॥ चंद्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥ ॐ सहस्र शीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ सभूमिर्ठ सर्वतस्पृत्वा-त्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१॥

ॐ आगच्छेहमहादेवि ! सर्वसम्पद्प्रदायिनि ! ॥
यावद्व्रतं समाप्येत तावत्त्वं सन्निधाभव ॥

टि० १ तत्रैववचवाचस्पतौ ॥ कुर्यादावाहनंमूर्तौमृण्मय्यां सर्व दैवहि॥ प्रतिमायां जले वन्हौ नावाहन विसर्जनम् ॥
आवाहनादि मुद्रायंत्र पूजन में लगाये जायँगे ।

इत्यावाहनम्

अनन्तर आसन के लिये पुष्प हाथ में लेकर

ॐ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ॥ यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ ॐ पुरुषऽ एवेदᳬं सर्वं यद्भूतंयच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्ये शानो-यदन्नेनातिरोहति ॥२॥ अनेकरत्न संयुक्तं नानामणि-गणान्वितम् ॥ कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ॥

इत्यासनम् ॥

भगवती के पैर धुलाने के लिये जल में नीचे लिखे पदार्थ मिलाना श्यामाक, विष्णु क्रान्ता, कमल पुष्प दूर्वा जल आदि

ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रबोधिनीम् ॥ श्रियंदेवीमुपह्वये श्रीर्मादेवीजुषताम् ॥ ॐ एतावानस्य महिमातोज्यायांश्च पूरुषः ॥ पादोस्यविश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३॥ गङ्गादि सर्व तीर्थेभ्योमया प्रार्थनयाहृतम् ॥ तोयमेतत्सुख स्पर्शं पाद्यार्थं प्रति-गृह्यताम् ॥

इतिपाद्यम् ॥

अर्घ्यम् ॥

दूर्वा. तिल. दर्भाग्र. सर्षप. यव. पुष्प. अक्षत. चन्दन जल में मिलाकर अर्पण करना ॥

ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीम् तृप्तांतर्पयन्तीम् ॥ पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः ॥ ततो विष्वंव्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ निधीनां सर्वं रत्नानां त्वमनर्घ्यं गुणाह्यसि ॥ सिंहोपरिस्थिते देवि ! गृहाणार्घ्यंनमोस्तुते ॥४॥

॥ इत्यर्घ्यम् ॥ अथाचमनम् ॥

ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसाज्वलन्तीं श्रियंलोकेदेवि जुष्टामुदारां ॥ तांपद्मनीमींशरणमहंप्रपद्ये अलक्ष्मीर्मेनश्यतां त्वां वृणे ॥

ॐ ततो विराडजायतविराजोऽअधिपूरुषः ॥ सजातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥ कर्पूरेणसुगंधेन सुरभिस्वादु शीतलम् ॥ तोयमाचमनीयार्थं देवि ! त्वंप्रतिगृह्यताम् ॥५॥

॥ इत्याचमनम् ॥

अथ स्नानम् पहले मलापकर्षण स्नान कराना ॥

ॐ आदित्यवर्णे तपसोधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोथबिल्वः ॥ तस्यफलानितपसानुदन्तु मायान्तराश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥५॥

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतंपृषदाज्यम् ॥ पशूँस्ताँश्चक्रेवायव्या नारण्याग्राम्याश्चये ॥

मन्दाकिन्याः समानीतैर्हेमांभोरुहवासितैः ॥ स्नानं कुरुष्वदेवेशि ! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ॥ इतिस्नानम् ॥६॥

[1]अथ मधुपर्कम् ॥

दधि मधु घृत समान भाग न हों ॥

ॐमधुव्वाताऽऋतायतेमधुक्षरन्तिसिन्धवः ॥ माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥ दधिमधुघृतसमायुक्तं पात्रयुग्म समन्वितम् ॥ मधुपर्कं गृहाणत्वं शुभदाभव शोभने ! ॥७॥

---

१ पाराशरः । सर्पिरेक गुणं प्रोक्तं शोधितं द्विगुणं मधु ॥
मधुपर्क विधौ प्रोक्तं सर्पिषा च समंदधि ॥
घी १ भाग छना हुआ शहद २ भा० दधि १ भाग ॥

पुनराचमनीयम् ॥

उच्छिष्टोप्यशुचिर्वापि यस्यस्मरणमात्रतः ॥ शुद्धि माप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ॥ स्नानवस्त्रो पवी-तान्ते पितितस्मृतम् ॥८॥

सुगन्धित तैल व इत्र मल कर स्नान कराना ॥

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ति परुषः परुषस्परि ॥ एवानो दूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेन च ॥ ॐ स्नेहंगृहाणस्ने-हेन लोकेश्वरि ! महानघे ! ॥ सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ! ददामिस्नेहमुत्तमम् ॥९॥

॥ अवपंचामृत से स्नान कराना ॥

पहिले दूध से स्नान कराना

ॐ पय : पृथिव्यांपयऽओषधी षुपयोदिव्यन्तरिक्षे-पयोधाः ॥ पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ कामधेनु-समुद्भूतं सर्वेषांजीवनं परम् ॥ पावनं यज्ञहेतुश्चपयः स्नानार्थमर्पितम् ॥१०॥ शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

दही से स्नान कराना ॥

ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः॥ सुरभि नो मुखा करत्प्रण आयू ५ षितारिषत् ॥ पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशि प्रभम् ॥ दध्यानीतं मयादे-वि ! स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥११॥

फिर शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

अव घृत से स्नान कराना ॥

ॐ घृतं घृत पावानः पिवतव्वसां वसापावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रदिशऽ आदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ नवनीत

समुत्पन्नं सर्व संतोष कारकम् ॥ घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१२॥

पुनः शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

शहद से स्नान कराना ॥

ॐ मधुनक्त मुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः ॥ मधु द्यौ रस्तुनः पिता ॥

तरु पुष्प समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ॥ तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१३

पुनः शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

अथ शर्करा (बूरा) से स्नान ॥

ॐ अपाꣳ रस मुद्वयसꣳ सूर्ये सन्तꣳ समाहितम् ॥ अपाꣳ रसस्य योरसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वा जुष्टं गृह्णाम्येषते योनिरिन्द्रायत्वा जुष्टतमम् ॥१३॥

इक्षुसार समुद्भूता शर्करा पुष्टिकारका ॥ संताप हारिका दिव्या स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१४॥

फिर शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

[1] पंचामृत मिलाकर स्नान कराना ॥

ॐ पंचनद्यः सरस्वति मपि यन्ति सस्रोतसः ॥ सरस्वती तु पंचधासो देशे भवत्सरित् ॥ पयोदधि घृतं चैव मधुच शर्करान्वितम् ॥ पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१५॥

---

१ स्कांदे—क्षीराद्दशगुणं दध्ना घृते नैवदशोत्तरम् ॥
मधुनातद्दशगुणंसितयातुततोधिकम् ॥
स्कान्दे—दूध १ तो० दही १० तो० घी १०० तो० शहद १००० तो० शर्करा १०००० तो०

फिर जल से शुद्ध स्नान कराना ॥
गंध (चन्दन) से स्नान कराना ॥

ॐ गंध द्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां करीषिणीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ मलयाचल सम्भूतं चन्दनागरु संभवम् ॥ चन्दनं देवि ! देवेशि ! स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१६॥

फिर शुद्ध जल से स्नान कराना ॥
सुगन्धित (उवटना) लगाकर स्नान कराना ॥

ॐ अꣳशुनाते ऽअꣳशुः पृच्यतां परुषापरुः ॥ गंधस्ते सो म मवतु मदाय रसोऽअच्युतः ॥
नाना सुगन्धित द्रव्यं च चन्दनं रजनी युतम् ॥
उद्वर्त्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥१७॥

अव शुद्ध जल से स्नान कराना ॥

ॐ शुद्ध वालः सर्व शुद्ध वालो मणि वालस्तऽ आश्विनाः श्येतः श्येताक्षो रुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामाऽअव लिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥

पुनराचमनीयं समर्पयामि नमः ॥ आगे श्री[1] सूक्त वा पुरुष सूक्त के १६ मन्त्रों से मूर्ति पर शंख से महाभिषेक करना चाहिये ॥ तिसके वाद दो वस्त्र (धोती दुपट्टा) वा लेंगा ओढ़नी आँगी धारण कराकर सिंहासन व कलश पर दुर्गा मूर्ति को स्थापित कर पूजन करना ॥

दो वस्त्र ॥

ॐ उपैतुमां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ॥
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेस्मिन् कीर्तिं वृद्धिं ददातुमे ॥
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि यज्ञिरे ॥
छन्दाꣳसि यज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

१—२० सफे में छपे हैं।

पट्टकूल युगं देवि ! कंचुकेन समन्वितम् ।
परिधेहि कृपां कृत्वा दुर्गे ! दुर्गति नाशिनि ! ॥

॥ इति युग्म वस्त्रम् ॥ पुनराचमनीयम् ॥

अथोपवीतम् ॥

ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहं ॥ अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् ॥
ॐ तस्माद् श्वाऽअजायन्त येकेचो भयादतः ॥ गावोहयज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥

स्वर्ण सूत्र मयं दिव्यं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि ॥

॥ इति यज्ञोपवीतम् ॥ आचमनम् ॥

अथ चन्दन चढ़ाना ॥

ॐ गन्ध द्वारां दुराधर्षांनित्य पुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्व भूतानां तामिहो पह्वयेश्रियम् ॥
ॐ तं यज्ञं बर्हिषिप्रौक्षन्पुरुषञ्जात मग्रतः ।
तेन देवा ऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये ॥
श्रीखण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं च देवेशि ! चन्दनं प्रति गृह्यताम् ॥

इति चंदनम् ॥ सौभाग्य सूत्र दानम् ॥

ॐ सौभाग्य सूत्रं वरदे ! सुवर्ण मणि संयुते ।
कंठे वध्नामि देवेशि ! सौभाग्यं देहि मे सदा ॥
कंठ सूत्रं समर्पयामि नमः ॥

अक्षत चढ़ाना

ॐ अक्षन्नमीमदन्तह्यवप्रिया ऽअधूषत । अस्तोषतस्व- भानवो विप्रानविष्ठयामतीयोजान्विन्द्रते हरी ॥

अक्षताञ्निर्मलां शुद्धां मुक्तामणि समन्विताम् । गृहाणेमान्महादेवि ! देहि मे निर्मलां धियम् ॥

इत्यक्षतान्समर्पयामि नमः

हरिद्रा चूर्ण चढ़ाना

हरिद्रारञ्जिते देवि ! सुख सौभाग्य दायिनि ॥ तस्मात्त्वांपूजयाम्यत्र दुःख शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

हरिद्रा चूर्ण समर्पयामि नमः

नोट—टिप्पणी १६ सफ़े की है ।

पंचगव्य मेलन प्रकारः

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धी- महि धियो योनः प्रचोदयात् ॥ गोमूत्रं ॥ ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ गोबर ॥

ॐ आप्यायस्व समेतुतेविश्वतः सोमवृष्ण्यम् ॥ भवावाजस्य संगथे ॥ दूध ॥

ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णो रश्वस्य वाजिनः ॥ सुरभिनोमुखाकर त्प्रण ऽआयूंषितारिषत् ॥ दही

ॐ तेजोसिशुक्रमस्यमृतमसिधामनामासि ॥ प्रियं देवानामना धृष्टंदेवयजनमसि ॥ घी इन सब को कुशा से एक पात्र में मिलाना ।

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यास्पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥

वाद में कुशा से अपने चारों ओर छिड़ककर यजमान और आचार्य आदि को भी पीना चाहिये ।

गुलाल चढ़ाना

कुङ्कमं कान्तिदं दिव्यं कामिनी काम संभवम् ॥ कुंकुमेनार्चिते देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

इति कुङ्कुमं (गुलाल) समर्पयामि नमः ॥

सिंदूर

सिंदूरमरुणाभासं जपाकुसुम सन्निभम् । पूजितासि मया देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

सिंदूरं समर्पयामिनमः ॥

कज्जल चढ़ाना

चक्षुर्भ्यां कज्जलंरम्यं सुभगे ! शान्ति कारके ! ॥ कर्पूर ज्योतिरुत्पन्नं गृहाण परमेश्वरि ! ॥

इति नेत्रे कज्जलं समर्पयामि नमः ॥

फूलों की माला धारण कराना

ॐ आपःस्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वसमे गृहे ॥ निचदेवीं मातरं श्रियं वासयमे कुले ॥

ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वैनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ॥

पद्म शंखज पुष्पादि शतपत्रैर्विचित्रताम् ॥ पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्वं सुरेश्वरि ! ॥

इति पुष्पमालां समर्पयामि नमः ॥

पुष्प चढ़ाना

ॐ मनसः काममाकूतिंवाचः सत्यमशीय ॥ पशूनां रूप मन्नस्य रसोयशः श्रीः श्रयतां यशः ॥

ॐ यत्पुरुषंव्यदधुः कतिधाव्य कल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहूकिमूरूपादाऽ उच्येते ॥ पुष्पैर्नानाविधैर्दिव्यैः कुमुदैरथचम्पकैः॥ पूजार्थंनीयते तुभ्यं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्॥

मंदारपारिजाता दि पाटली केतकानिच ॥
जाती चंपक पुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने ! ॥

इति पुष्पाणि समर्पयामि नमः ॥

दुर्गा प्रदेय पुष्पाणि

कुन्दमन्दार पुन्नाग पाटली नाग केशरम् । आरग्वधं कर्णिकारं जयन्ती नव मल्लिका ॥१॥ सौगन्धिकं सकंकोलं पुन्नागाशोक मल्लिका ॥ अन्यान्यपि सुगन्धीनि पुष्पपत्राणि देशिकैः ॥२॥

दूर्वाङ्कुर चढ़ाना

ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टीं पिंगलांपद्ममालिनीम् ॥ चन्द्रांहिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोम आवह ॥

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ति परुषः परुषस्परि ॥ एवानोदूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेनच ॥ दूर्वा दलेश्यामलेत्वं महीरूपेहरिप्रिये ! ॥ अतोदूर्वाभिर्भवतीं पूजयामिसदाशिवे ! ॥

इति दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि नमः

विल्व पत्र अर्पण करना ॥

ॐ आर्द्रांयः करिणींयष्टीं सुवर्णां हेममालिनीम् ॥ सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोम आवह ॥

ॐ नमो विल्मिनेच कवचिनेच नमोवर्मिणे च व्वरू-थिने चनमः ॥ श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्या-य चाहनन्यायच नमः ॥ अमृतोद्भवः श्री वृक्षो-महादेवि ! प्रियः सदा ॥ विल्वपत्रं प्रयच्छामि पवित्रं तेसुरेश्वरि ! ॥

इति विल्व पत्राणि समर्पयामि नमः

फल माला अर्पणकरना ॥

ॐ महादेवी च विद्महे विष्णु पत्नी च धीमहि । तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

ॐ याः फलनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः ॥ बृहस्पति प्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्वर्ठ हसः ॥ शरत्काले समुद्भूतां निशुम्भे मर्दिते त्वया ॥ फल मालां वरांदेवि ! गृहाणसुरपूजिते ! ॥

इति फल मालां समर्पयामि नमः ॥

पल्लव अर्पणकरना ॥

ॐ तांम आवह जातवेदो लक्ष्मीमनप गामिनीम् ॥ यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योश्वान् विन्देयं-पुरुषानहम् ॥

ॐ अश्वत्थेवो निषदनं पर्णे वोव्वसतिष्कृता ॥ गोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथ पूरुषम् ॥ गृह द्वारे चोग्रमपिदुष्टासुर निर्वाहिणि ॥ पूजां करोमिचा वंगि ! पल्लवैर्नंदनोद्भवैः ॥

इति पल्लवान्समर्पयामि नमः ॥

* रत्न माला धारण कराना

ॐ परिव्राजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् ॥ दध-द्रत्नानिदाशुषे ॥

ॐ कर्दमेनप्रजाभूतामधि संभव कर्दम ॥ श्रियं वासय मे गृहेमातरं पद्म मालिनीम् ।

मुक्ता फल युतां मालां रत्नवैडूर्य सुप्रभाम् ॥ माणिक्य स्वर्ण ग्रथितां गृह्यतां वरदे! नमः॥

इति रत्न मालां समर्पयामिनमः ॥

अलङ्कारम् ॥

हार कंकण केयूर मेखला कुंडलादिभिः ॥ रत्नाढ्यं कुंडलोपेतं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

अलंकारा भावे अक्षतान् समर्पयामि नमः

सुगन्धित इत्र चढ़ाना

ॐ अहिरिवभोगैः पर्येतिबाहुं ज्यायाहेतिंपरिबाध-मानः ॥ हस्तघ्नोविश्वाव्वयुनानिविद्वान्पुमान्पुमांसं परिपातविश्वतः ॥

चन्दनागरु कर्पूर कुंकुमं रोचनं तथा ॥ कस्तूर्यादि सुगन्धांश्च सर्वांगेषु विलेपयेत् ॥

इति परि मल (इत्र) द्रव्यं समर्पयामि नमः

इति मालान्त पूजन के बाद अंग पूजा करना ॥

ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि नमः ॥ ॐ महाकाल्यै नमः गुल्फौ पूजयामि नमः ॥ ॐ मंगलायै नमः जानुद्वयं-

---

* मुक्ता माणिक्य वैडूर्य गोमेदान्वज्र विद्रुमौ ॥

पुष्परागं मरकतं गरुडोद्गार (नीलम्) मेवच ॥

एभिस्तुग्रथिता 'स्वर्णोरत्नमालेति' कथ्यते ॥

शारदायां ॥

पूजयामि नमः ॥ ॐ कात्यायन्यै नमः ॥ ॐ हृदयं पूजयामि नमः ॥ ॐ भद्रकाल्यैनमः कटिं पूजयामि नमः ॥ ॐ कमलवासिन्यैनमः नाभिं पूजयामि नमः ॥ ॐ शिवायै नमः उदरं पूजयामि नमः ॥ ॐ क्षमायैनमः हृदयं पूजयामि नमः ॥ ॐ कौमार्यै नमः स्तनौ पूजयामि नमः ॥ ॐ उमायैनमः हस्तौ पूजयामि नमः ॥ ॐ महागौर्यै नमः दक्षिण बाहुं पूजयामि नमः ॥ ॐ वैष्णव्यै नमः वाम बाहुं पूजयामि नमः ॥ ॐ रमायैनमः स्कन्धौपूजयामि नमः ॥ ॐ स्कन्द मात्रेनमः कण्ठं पूजयामि नमः ॥ ॐ महिषमर्दिन्यैनमः नेत्रे पूजयामिनमः ॥ ॐ सिंहवाहिन्यै नमः मुखं पूजयामि नमः ॥ ॐ महेश्वर्यै नमः शिरः पूजयामि नमः ॥ ॐ कात्यायिन्यै नमः सर्वाङ्गं पूजयामि नमः ॥

इत्यङ्ग पूजनम् ॥

अथ धूप अर्पण करना व अक्षत छोड़ना ॥

ॐ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ॥ सूक्तंपंच दशर्चञ्च श्रीकामः सततंजपेत् ॥ ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तन्धूर्वतं योस्मान्धूर्वति तं धूर्वयं वयं धूर्वामः ॥ देवानामसिवन्हितमर्ठं सस्नितमं पप्रितमञ्जुष्टतमन्देवहूतमम् ॥ दशाङ्गगुग्गुलं धूपंचन्दनागरु संयुतम् ॥ समर्पितं मया भक्त्या महादेवि ! प्रगृह्यताम् ॥

धूप पात्रं देवता वामे

इति धूपमाघ्रापयामि नमः॥

अथ दीपक बलाना व अक्षत छोड़ना

ॐ सरसिजनिलयेसरोज हस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे ! ॥ भगवति ! हरिवल्लभे ! मनोज्ञे ! त्रिभुवन

भूतिकरि ! प्रसीद मह्यम् ॥ ॐ अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योति ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ अग्निर्वर्चो-ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥

घृतवर्तितसमायुक्तं महातेजोमहोज्वलम् ॥ दीपं दा-स्यामि देवेशि ! सुप्रीताभवसर्वदा ॥

इति दीपं दर्शयेत् घृतदीपं सितवर्ति युतं देवतादक्षभागे ।

तैल दीपं रक्तवर्ति युतं देवता वाम भागे

नैवेद्यं निवेदयामिनमः ॥ जलेनाभ्युदय ॥ गंध-पुष्पाभ्यामाच्छाद्य ॥ धेनु मुद्रया अमृतीकृत्य ॥ योनिमुद्रां प्रदर्श्य ॥ सत्यन्त्वर्तेन परिषिञ्चामि इति प्रातः (ऋतंत्वा-सत्येन परिषिञ्चामि) इति सायं । घंटांवादयेत्

ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, अंगुष्ठ अना-मिका कनिष्ठाभिः ॥ ॐ अपानाय स्वाहा अंगुष्ठ तर्जनी-मध्यमाभिः ॥ ॐ उदानाय स्वाहा अँगुष्ठ मध्यमानामि-काभिः ॥ ॐ व्यानाय स्वाहा अंगुष्ठतर्जनी मध्यमानामि-काभिः ॥ ॐ समानाय स्वाहा सर्वाङ्गुलीभिः ॥

ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेम मालिनीम् । सूर्यांहिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मआवह ॥

ॐ नाभ्याऽआसी दन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समव-र्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँऽ अकल्पयन् ॥

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ॥ नैवेद्यं गृह्यतां देवि ! भक्ति मेह्यचलां कुरु ॥

नैवेद्यं निवेदयामिनमः

मध्ये-मध्ये आचमनीयं समर्पयामिनमः। उत्तरा-
पोषणार्थें पुनर्नैवेद्यं निवेदयामिनमः ॥ पुनराचमनीयं
समर्पयामि नमः।। आचमनम् ॥

ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ॥
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जात वेदो म आवह ॥
ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवायज्ञ मतन्वत ॥
वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मःशरद्धविः ॥
आचम्यतां त्वया देवि! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ॥
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिम् ॥

आचमनं समर्पयामि नमः ॥

करोद्वर्तनार्थें गधं समर्पयामि नमः ॥
करोद्वर्तनकं देवि ! सुगन्धैः परिवासितैः ॥
ईप्सितं मे वरं देहि परत्रच पराङ्गतिम् ॥
करो द्वर्तनार्थें गंधं समर्पयामि नमः ॥

हस्त प्रक्षालनार्थे जलम् ॥

गंध तोय समानीतं सुवर्ण कलशे स्थितम् ॥
हस्त प्रक्षालनार्थाय पानीयं ते निवेदये ॥

ऋतु फलम् ॥

ॐ याः फलिनीयोऽ अफलाऽअ पुष्पा याश्चपुष्पिणीः॥
बृहस्पति प्रसूतास्ता नोमुञ्चन्त्वर्ठ हसः ॥ द्राक्षा खर्जूर
कदली पनसाम्र कपि त्थकम् ॥ नारि केलेक्षु जंबादि
फलानि प्रति गृह्यताम् ॥

ऋतु फलानि समर्पयामिनमः

ताम्बूल पुंगी फलम् ॥

ॐ तांमऽआवह जात वेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ॥ यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योश्वान्विदे यं पुरुषानहम् ।

ॐ सप्तास्या सन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ॥ देवा यद्यज्ञं तन्वानाऽअवध्नं पुरुषं पशुम् ॥ एला लवङ्ग कस्तूरी कर्पूरैः पुष्प वासितां ॥ वीटिकां मुख वासार्थमर्पयामि सुरेश्वरि ! ॥

दक्षिणा द्रव्यं ॥

ॐ हिरण्य गर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ॥ सदाधार पृथिवीं द्या मुतेमां कस्मै देवाय हविषाविधेम ॥

पूजा फल समृध्यर्थं तवाग्रे स्वर्णमीश्वरि ! ॥
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान्कुरु मनोरथान् ॥

ध्यानम् ॥

दुर्गे ! स्मृता हरसि भीति मशेषजन्तोः स्व स्थैःस्मृतामतिमतीव शुभां ददासि ॥ दारिद्र्य दुःख भय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार करणाय सदार्द्र चित्ता ॥

इति नत्वा ॥ ॐ देवा आयान्तु यातुधाना अपयान्तु दुर्गे ! देवि ! यजनं रक्षस्वेति । भूमौ प्रादेशं कृत्वा प्रणमेत् ।

नव दुर्गा पूजनम् ॥

प्रथमं शैल पुत्री पूजनम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः शैल पुत्रि ! इहा गच्छ इहतिष्ठ ॥

शैल पुत्र्यै नमः शैल पुत्रीमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ पाद्यादिभिः पूजनम्विधाय ॥

ॐ जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्व शक्ति स्वरूपिणि ! ॥ पूजां गृहाण कौमारि ! जगन्मातर्नमोस्तुते ॥१॥

ब्रह्मचारिणी पूजनम् ॥२॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मचारिणि ! इहागच्छ इह तिष्ठ ब्रह्मचारिण्यै नमः ॥ ब्रह्मचारिणीमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ पाद्यादिभिः पूजनम्विधाय ॥

ॐ त्रिपुरां त्रिगुणाधारां मार्गज्ञान स्वरूपिणीम् ॥ त्रैलोक्य वंदितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥२॥

चन्द्र घण्टा पूजनम् ॥३॥

ॐ भूर्भुवः स्वः चन्द्रघंट इहागच्छ इहतिष्ठ चन्द्र घंटायै नमः ॥ चन्द्र घंटामावाहयामि स्थापियामि नमः ॥ पाद्यादि पूजनम्विधाय ॥

ॐ कालिकां तु कलातीतां कल्याण हृदयां शिवाम्॥ कल्याण जननीं नित्यं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥३॥

कूष्माण्डा पूजनम् ॥४॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कूष्माण्ड इहागच्छ इहतिष्ठ कूष्माण्डा यैनमः ॥ कूष्माण्डामावाहयामि स्थापयामिनमः ॥ पाद्यादि पूजनम्विधाय ॥

ॐ अणिमादि गुणोदारां मकराकार चक्षुसम् ॥ अनन्त शक्ति भेदां तां कामाक्षीं पूजायाम्यहम् ॥४॥

स्कन्द माता पूजनम् ॥५॥

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्द मातः ! इहागच्छ इहतिष्ठ

स्कन्दमात्रे नमः स्कन्द मातरमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ पाद्यादि पूजनम्विधाय ॥

चण्डवीरां चण्डमायां चण्डमुण्ड प्रभञ्जनीम् ॥
तां नमामि च देवेशीं चण्डिकां पूजयाम्यहम् ॥५॥

कात्यायनी पूजनम् ॥६॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कात्यायनि ! इहागच्छ इहतिष्ठ कात्यायन्यै नमः ॥ कात्यायनीमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ पाद्यादि पूजनम्विधाय ॥

ॐ सुखानन्द करीं शान्तां सर्व देवैर्नमस्कृताम् ॥
सर्व भूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥६॥

काल रात्री पूजनम् ॥७॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कालरात्रि ! इहागच्छ इहतिष्ठ काल रात्र्यै नमः ॥ काल रात्रीमावाहयामि स्थापयामि नमः पाद्यादि पूजनं विधाय ॥

चण्डवीरां चण्डमायां रक्तबीज प्रभञ्जनीम् ॥
तां नमामि च देवेशीं गायत्रीं पूजयाम्यहम् । ७ ।

महा गौरी पूजनम् ॥८॥

ॐ भूर्भुवः स्वः महा गौरि ! इहागच्छ इहतिष्ठ ॥ महागौर्यै नमः ॥ महागौरीमावाहयामि स्थापयामि नमः ॥ पाद्यादि पूजनम्विधाय ॥

ॐ सुन्दरीं स्वर्णवर्णाङ्गीं सुख सौभाग्य दायिनीम् ॥
सन्तोष जननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥८॥

सिद्धि दा पूजनम् ॥९॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धि दे ! इहागच्छ इहतिष्ठ सिद्धि

गणेश पूजनम् ॥

ॐ गं गणपतये नमः ॥ पाद्यादि पूजनं विधाय ॥

ध्यानम् ॥

**ॐ उद्यद्दिनेश्वर रुचिं निज हस्त पद्मैः ।
पाशाङ्कुशाभय वरान्दधतं गजास्यम् ॥
रक्ताम्बरं सकल दुःख हरं गणेशं ।
ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम् ॥**

वटुक पूजनम् ॥

ॐ वं वटुकाय नमः ॥ पाद्यादि पूजनं विधाय ॥

ध्यानम् ॥

ॐ कर कलित कपालः कुण्डली दण्डपाणिस्तरुण तिमिर नील व्याल यज्ञोपवीती ॥ क्रतु समय सपर्या विघ्नविच्छेद हेतुर्जयति वटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

तार्थं फलाप्तये ॥ सुभद्रां पूजयेन्मर्त्यो दासी दासीविवृद्धये ॥ पूजा प्रकारश्च तत्रैव ॥ प्रातः काले विशेषेण कृताभ्यङ्गो विशेषतः ॥

॥ अथ वर्ज्य कन्या आह ॥

हीनाधिकाङ्गीं कुष्टादि विकारां कुकुलांतथा ॥ ग्रन्थि स्फुटित सर्वाङ्गीं रक्त पूय व्रणाङ्कितां ॥ जात्यन्धां केकरां काणां कुरूपां तनु रोमशाम् ॥ संत्यजेद्रोगिणीं कन्यां दासी गर्भ समुद्भवाम् ॥

अथ ज्ञाति भेदेन कामना भेदेषु तत्पूज्यतामाह ॥ ब्रह्माणीं सर्व कार्येषु जयार्थे नृप वंशजाम् ॥ लाभार्थे वैश्य वंशोत्थां सुतार्थे शूद्र वंशजाम् ॥ दारुणे चान्त्य जातीयां पूजयेद्विधिना नर ॥

अथ वर्ण भेदेन पूजाभेदः ॥ गौरीं सर्वेष्ट संसिद्ध्यै पीताङ्गीं जय कीर्तये ॥ लाभार्थेऽरुणवर्गाङ्गीमसितामारणादिष्विति क्वचित् ॥ एक वँश समुद्भूतां कन्यां सम्यक् प्रपूजयेदिति ॥ कौलावली तन्त्रे ॥

तत्रविधिः ॥

यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ॥ द्वि वर्षा द्यादशाब्दान्ताः कुमारीः परि पूजयेत् ॥१॥ अर्थादेक हायनाल्प वयस्का वर्ज्याः ॥ ता आसने उपवेश्यावाहयेत् मन्त्रेण ॥ अथावाहन मन्त्रः ॥ ॐ मन्त्राक्षर मयीं लक्ष्मीं मातृणां रूप धारिणीम् ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्या-मावाहयाम्यहम् ॥ अनेनैव मन्त्रेण नवापि आवाहयेत् ॥ अशक्तौ यथा शक्ति एकामपि पूजयेत् ॥ पाद्यादि पूजनं विधाय ॥

द्वि हायना कुमारी संज्ञा॥

सर्व स्वरूपे ! सर्वेशे ! सवशक्ति स्वरूपिणि ! ॥
पूजां गृहाण कौमरि ! जगन्मातर्नमोस्तु ते ॥१॥

त्रिहायना त्रिमूर्ति संज्ञा ॥

त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्षां ज्ञान रूपिणीम् ॥
त्रैलोक्य वन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥२॥

चतुर्वर्षा कल्याणी ॥

कलात्मिकां कलातीतां कारुण्य हृदयां शिवाम् ॥
कल्याण जननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥३॥

पंच वर्षा रोहिणी ॥

अणिमादि गुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ॥
अनन्त शक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥४॥

षड् वर्षा कालिका ॥

कामचारां शुभां कान्तां कालचक्र स्वरूपिणीम् ॥
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥५॥

सप्त वर्षा चण्डिका ॥

चण्डवीरां चण्डमायां चण्ड मुण्ड प्रभंजनीम् ॥ पूजयामिसदा देवीं चण्डिकां चण्ड विक्रमाम् ॥६॥

अष्ट वर्षा शांभवी ॥

सदानन्दकरीं शान्तां सर्व देव नमस्कृताम् ॥ सर्व भूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥७॥

नव हायना दुर्गा ॥

दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःख विनाशिनीम् ॥ पूजयामि सदा भक्तया दुर्गां दुर्गति नाशिनीम् ॥८॥

दश वर्षा सुभद्रा ॥

सुन्दरीं स्वर्ण वर्णाभां सुख सौभाग्य दायिनीम् ॥ सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥९॥

नित्य आरती यहाँ करना

कुमारी पूजनान्ते तद्धस्तादक्षतादिकं स्वशिरसि विधाय भक्त्या अनुव्रजेत् सुवासिनी—ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् इष्ट मित्र बांधवादिना सह स्वयमपि भुंजीत शेष कालं गीत वाद्यादिभिर्नयेत् ॥

इति कुमारी पूजनम् ॥

अष्ट रात्रे न दोषोऽयं नवरात्रे तिथिक्षये ॥ सूतके पूजनं प्रोक्तं जपदानं विशेषतः ॥

देवी मुद्दिश्य कर्त्तव्यं तत्र दोषो न विद्यते रजस्वलां तथा शौचे ब्राह्मणैश्च सुपूजैत् ॥ सभर्तृकाणां स्त्रीणां नवरात्रे गंधादि सेवनं न दोषाय ॥ तदुक्तं हेमाद्रौ ॥ गंधालंकार तांबूल पुष्पमाला नुलेपनैः ॥

कुमारी पूजने विशेषः कौलावली तन्त्रे ।

एवं प्रणवयोगेन चैतन्यं तत्तुमर्चयेत् ॥ वाणी माया तथा लक्ष्मी माया कूर्चद्वयं ततः ॥ एते च प्रणवाः ज्ञेया कुमार्याः परि पूजने ॥ चतुर्दश स्वरेणाढ्यो भृगुर्विन्द्विन्दु संयुतः ॥ चैतन्य बीजं कथितं साधकानां समृद्धिदम् ॥ एवं द्वाभ्यां त्रिभिश्चैव ससधानवधा पुनः ॥ नित्य क्रमेण नियतं पूजयेद्विधि पूर्वकम् ॥ वाग्भवेन जलंदेयं मायया पादशौचकम् ॥ लक्ष्म्याचार्घ्यं प्रदद्यात्तु कूर्चबीजेन चन्दनं ॥ शक्ति बीजेन पुष्पाणि धूपं षष्ठेन दापयेत् ॥ वाग्भवेन पुरस्तोभं मायया च गुणाष्टकम् ॥ श्री बीजेन श्रियोलाभः मायया शत्रु संक्षयः ॥ भैरवेण तु बीजेन खड्गत्वमनुगच्छति ॥ न्यासादिकं प्रकुर्वीत आदौस्वीय क्रमेण तु ॥ कुमार्याङ्गे ततः पश्चाद्विशेषन्यासमुत्तमम् ॥

ततोऽखण्ड दीपदानम् ॥
दीपादि विचारो डामर तन्त्रे ॥

सौवर्णं राजतं ताम्रं कांस्यं लोहं च मार्तिकम् ॥ गोधूम माष मुद्गानां चूर्णेन घटितं तथा ॥ सौवर्णे कार्यसिद्धिःस्याद्रौप्ये वश्यंजगद्भवेत् ॥ ताम्रं तयोरभावेऽपि कांस्ये विद्वेषणंभवेत् ॥ मारणं लौहपात्रेस्यादुच्चाटो मृण्मये तथा ॥ गोधूम-चूर्ण घटिते विवादे विजयो भवेत् ॥ माषजे शत्रुसंस्तंभो मौद्गेस्याच्छान्तिरुत्तमा ॥ सन्धिकार्ये नदीकूलद्वयमृत्स्ना समुद्भवम् । अलाभे-सर्व पात्राणां कुर्यात्ताम्रं च मार्तिकम् ॥

सुवर्णादिजे दीपे सुवर्णादि मानंतत्रैव ॥

सहस्र पल संख्यायां पात्रं शतपलैः स्मृतम् ॥ शतार्द्ध पल मानेतु त्रिशता पात्रमुत्तमम् ॥ पादोन शत संख्यायां षष्ठिकं पात्र मुच्यते ॥ शतमानेतदर्द्धं तदधिकं पल संयुतम् ॥ सहस्र संख्यके प्रोक्तं दिग्पले दिग्पलं स्मृतम् ॥ नित्य दीपे प्रमाणं हि पलैः सप्तभिरम्बिके ! ॥

अथ दीप स्वरूपम् ॥

वुध्नेषडङ्गुलं प्रोक्तमुच्छ्राये च षडङ्गुलम् ॥ षोड़शाङ्गुल मायामं सुन्दरं पात्रमुत्तमम् ॥ नित्य दीपेतदर्द्धार्द्धं मानं सर्वेषु कर्मसु ॥ (वुध्नंमूलम्) अथ घृत तैलयोर्विशेषस्तत्रैवोक्तः ॥ गोघृतेन प्रकर्तव्यो दीपः सर्वार्थ सिद्धये ॥ मारणेमाहिषं प्रोक्तमौष्ट्रं विद्वेषणे भवेत् ॥ आविकं शान्तिके प्रोक्तमाजं चोच्चाटने भवेत् ॥ तिलतैलेन वा-दीपः कार्यः सर्वार्थं सिद्धये ॥ घृताभावे महेशानि ! मारणे सार्षपेण चेति ॥

अथ वर्तिः ॥

अयुग्मा वर्तिका ग्राह्या एकोत्तर शतावधि ॥ गुरु कार्येऽधिका प्रोक्ता अल्पे अल्पा मता प्रिये ! ॥ सूत्रं श्वेतं तथा पीतं मांजिष्ठं च कुसुम्भकम् ॥ कृष्णं च कर्वुरं चेति षट्कर्मसु नियोजयेत् ॥ सर्वाभावे सिते नैव कुर्याद्वर्त्तीः पृथक् पृथक् ॥

अथ चालनार्थ शलाकापि तत्रैव ॥

षोड़शाङ्गुल माना च सौवर्णी तु शलाकिका ॥ राज तौदुम्बरी वापि सुलक्ष्णा वुध्नका तथा ॥ तीक्ष्णाग्रा सरला मध्ये त्रिशूलेनाङ्किता तथेति ॥

कलश स्थापने

घटार्गलयन्त्रम् ॥

"दुर्गार्चन सृतौ"

शारदायां नवमपटले ॥
श्लो० ९५ से १०० तक ॥

पूर्व

पश्चिम

इस यन्त्रके ऊपर कलश व दीपक स्थापन करना चाहिये ।

अथ दीप मुखं तत्रैव ॥

पूर्वाभि मुखे तु सर्वाप्तिः स्तम्भोच्चाटनयोस्तथा ॥ रक्षा विद्वेषयोः कार्यं पश्चिमास्य प्रदीपकम् ॥ लक्ष्मी प्राप्तावुत्तरास्यं मारणे दक्षिणामुखमिति ॥

अथ दीप दाने प्रतिज्ञा ॥

तत्र पूर्वं कलशाग्रे *घटार्गल यन्त्रं षट्कोण यन्त्रं वा विलिख्य ॥ तिथि वाराद्युच्चार्य ॥ अद्यहैतद्दीप शिखा सम संख्य वर्ष सहस्रावच्छिन्न समयपरिच्छिन्न दुर्गानुचरत्व प्राप्ति पूर्वक भगवती प्रीति कामोऽद्यारभ्य लक्ष्यन्त महर्निश वातादि दोष रहितमिमं दीपं श्री दुर्गा देवताकं श्री दुर्गायाः पुरतः प्रज्वालयिष्ये ॥ इति प्रतिज्ञाय ॥ उक्त कामेषु तत्तत्कामनामुच्चार्योक्त विधिना दीपं दत्त्वा तं गंधाक्षतादिभिः पूजयेत् ॥

दीप स्थापने शकुन विघ्नादयो डामर तन्त्रे ॥ तथाहि ॥

दीपस्य शकुनान्वच्मि शृणु देवि ! यथाक्रमम् ॥ येन विज्ञात मात्रेण जायते च फलाफलम् ॥ दीपारम्भे सुरेशानि ! वदेदशुभं वचः ॥ तस्मिन्काले यदुक्तं हि तत्तथैव भवेद्ध्रुवम् । वर्जयेदशुभां वाणीं तस्मिन्काले विशेषतः ॥ रक्ताम्बरो द्विजोऽव्यंगो रक्तमाल्यानुलेपनः ॥ दीपारम्भे समायाति तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥ शूद्र वर्णः समायाति सिद्धः प्रोक्तातु मध्यमा ॥ म्लेच्छस्य दर्शने प्रोक्तं बंधनं दीपदस्य वै ॥ मार्जार मूषकादीनां मध्यमं दर्शनं स्मृतम् । कृते दीप वरे देवि ! वीक्ष्यते च शुभाशुभम् ॥ दीपज्वाला समाश्लक्ष्णा जायते यदि सुन्दरि ॥

---

* घटार्गल यन्त्र प्रकारः ॥ शारदायां ६ पटले ६५ श्लोके । चित्र देखो ॥

अष्टाभिर्दिवसैस्तस्य कार्यसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ दीप ज्वाला तु देवेशि ! यदि वक्रा भवेत्तदा ॥ नाशस्तस्य च बन्धूनां प्रोक्तः सर्वार्थ नाशकः ॥ खरकङ्क प्रभाज्वाला यदि स्याच्च सुरेश्वरि ! ॥ दीपकर्तुः सविघ्नोवै मरणं जायते ध्रुवम् ॥ दीप ज्योत्स्नाम्बिके ! कृष्णा जायते च सुरार्चिते ! शत्रूणां जायते कार्यं दीपकर्तुर्निरर्थकम् ॥ कृते दीपेयदानाशस्तत्क्षणाज्जायतेऽम्बिके ! ॥ कार्यसिद्धिर्विलम्बेन भविष्यति न संशयः ॥ कृत दीपस्य नाशःस्यात्प्रहरत्रय मध्यतः ॥ मासे वर्षे तथा प्रोक्ता कार्य्य सिद्धि र्हि सुन्दरि ! ॥ दीपवर्यस्य नाशःस्याद्यदि रात्रौ कदाचन ॥ तस्य गेहे धनं वस्तु नष्टं भवति निश्चितम् ॥ दत्ते दीपे यदि पुनश्चट चटेति ध्रुवम्भवेत् ॥ तदा तस्य च कार्यं वै नष्टं याति तथादिशेत् ॥ वमतेदीपवर्य्यश्चेचौरतोभयमाददेत् ॥ दीपपात्रं यदि पुनः स्रवते देवि ! सुन्दरि ! ॥

गोनाशो जायते तस्य दीप कर्तुर्न संशयः ॥ दीपवर्यस्य पात्रं वे भग्नं वै दृश्यते यदि ॥ अष्टादश दिनादर्वाग्यजमानः सबांधवः ॥ श्राद्धदेवस्य सदनं गच्छति प्रिय कामिनि ! ॥ दीपेनष्टे पुनर्दीपंज्वालयेन्मूढ़ चेतनः ॥ दीप दाता दीप कर्ता मन्द चक्षुर्भवेत्सदा ॥ कृते दीपे पुनर्वार्ता कारयेद्यदि मानवः ॥ कार्य्य सिद्धि र्हि देवेशि ! षण्मासात्स्यादनन्तरम् ॥ प्रज्वालितं दीपवर्य्यमशुचिर्मानवः स्पृशेत् ॥ दीपकर्तुः शरीरे तु व्याधि र्वै जायते नृणाम् ॥ दीपकाष्ठामुमे ! श्वानो मार्जारो मूषकादयः ॥ यदि स्पृशन्ति कल्याणि ! ताडनं राजतो दिशेत् ॥ एवं दीप-

वरे विघ्ना: वहव: संभवन्ति हि ॥ तस्माद्दीपं सुरे-
शानि ! विलोक्यं तु पदे पदे ॥

अथ दीपविघ्ने शान्तिः ॥

तत्र शर्कराज्य तिल तंडुलैस्स घृतैः कमलैर्वा जयंती
मंत्रेण दशांशतो होमं कुर्यादित्यन्ये नवार्ण मन्त्रेणेत्य-
परे ॥ देवि ! प्रपन्नार्ति हरे प्रसीदेति, देवि ! प्रसीदेति,
करो तु सानः शुभति मन्त्राणामन्यतमेन पूर्वोक्त द्रव्येण
होमः कार्य इति साम्प्रदायिकाः ॥

कलश विसर्जन विधिः

स यजमानो स्वस्ति वाचन पूर्वकं संकल्पं विधाय ॥
देश कालौ संकीर्त्य प्रतिपदि गणपत्यादि स्थापितानां
देवानां नारिकेल वलिसहित उत्तर पूजन मह करिष्ये ॥
इति प्रतिज्ञां कृत्वा यथोपचार सहितं गणपत्यादि
देवान् प्रपूज्य ॥ ततो शुद्ध नारिकेलं, कूष्मांडं वा
गृहीत्वा तं संपूज्य तत्र जीव न्यासादिकं कृत्वा ॥
ॐ महामाये ! जगन्मातः ! सर्व काम प्रदायिनि ? ॥
ददामि नारिकेल (कूष्मांड) *वलिःप्रसीद वरदाभव ॥
अर्द्ध भागं देव्यग्रे संस्थाप्य पुनः ॐ प्राणाय स्वाहा ॥
ॐ अपानाय स्वाहा ॥ ॐ उदानाय स्वाहा ॥ ॐ
व्यानाय स्वाहा ॥ ॐ समानाय स्वाहा ॥ एभिः स्वा-
हान्त मन्त्रैः पंचाहुतिं ज्योतिरग्नौ जुहुयात् ॥

तत्र यथा कुलाचारमष्टम्यां नवम्यां दशम्यां वा देवी पूजान्ते तां प्रणम्य पुष्पाण्यादाय कृतांजलिः ॥ कुछ महानुभाव कलश के नारियल का वलि देते हैं यह शास्त्र विरुद्ध है।

* पूर्ण वलि विधान की टिप्पणी पेज नंम्बर ५५ में देखिये।

ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे ॥ उपप्रयन्तु मरुतः सुदानवऽइन्द्र प्राशूर्भवासचा ॥ १ ॥ ॐ ब्रह्मणस्पते त्वमस्ययन्तासूक्तस्य बोधितनयंच जिन्व ॥ विश्वन्तद्भद्रं यदवन्तिदेवाबृहद्वदेमविदथे सुवीराः ॥ यऽइमा विश्वा विश्व कर्म्माणोनः पिताऽन्नपतेनो देहि ॥ २ ॥

ओं सर्व रूप मयीदेवी सर्व देवीमयं जगत् ॥ अतोऽहं विश्व रूपां त्वां नमामि परमेश्वरीम् ॥

विधिहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदर्चितम् ॥ पूर्णं भवतु तत्सर्वं त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ? ॥ मातः क्षमस्वे त्युक्त्वा ॐ दुर्गायैनमः ॥ इत्यैशान्यामेक पुष्पनिक्षेपेण विसर्जयेत् ॥ ततोस्थापित कलशोदकेन यजमानाभिषेकः ॥ ततोमृदादिमूर्तिसत्वे स्रोतसि तत्प्रवाहणं कर्तु मुत्थापयेत् ॥

ॐउत्तिष्ठ देवि ! चण्डेशि शुभां पूजां प्रगृह्यच ॥ कुरुष्व मम कल्याण मष्टाभिः शक्तिभिः सहः ॥३॥ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं देवि ! चण्डिके ! ॥ व्रजस्रोतो जलंवृद्ध्यै स्थीयतां च जलेत्विह ॥ ४ ॥ दुर्गे ! देवि ! जगन्मातः स्वस्थानं गच्छ पूजिता ॥ सम्बत्सरे व्यतीते तु पुनरागमनाय वै ॥ ५ ॥ इमां पूजां मयादेवि ! यथा शक्त्योपपादिताम् ॥ रक्षार्थं त्वं समादाय व्रज स्थानमनुत्तमम् ॥ ६ ॥

इति स्रोतसि प्रवाह्य तन्मना गृहमेत्य हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य पूजा स्थाने यजमानः सपरिवार उपविश्य विप्रभोजनादि समाप्य

वन्धुभिः सहभुंजीत ॥ गीती शीघ्री शिरः कम्पी तथा लिखित पाठकः ॥ अनर्थज्ञोल्पकण्ठश्चषडेते पाठकाधमाः ॥ माधुर्यमक्षर व्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः । धैर्यं लयसमर्थ च षड़ेते पाठका गुणाः ॥ वेतन लेकर देवपूजा और पाठ करने वाला मनुष्य नरकगामी होता है अन्य नहीं ॥ भविष्य वचनात् ॥

अथ वलिदानम् ॥ १ ॥

अत्र पक्षत्रयं प्रत्यहञ्च वलिन्दद्यादित्येकः ॥ कन्या संस्थे रवौ शक्र ! शुक्लाष्टम्यां प्रपूज्य च ॥ द्रोण पुष्पैश्च विल्वाम्र जातो पुन्नाग चम्पकैः ॥ पञ्चाङ्गं लक्षणोपेतं गन्ध पुष्प समन्वितम् ॥ विधिवत्कालि ! कालोतिजप्त्वा खड्गं न घातयेदिति ॥ देवी पुराण वचनादष्टमो नवम्योरिति द्वितीयः ॥ नवम्यां वलि दानञ्च कर्तव्यं वै यथाविधीति ॥ नवम्यां च विधाना-च्छिष्ट समाचाराच्च नवम्यामेव कार्यमिति तृतीयः पक्षः । अत्रदेशाचारात्कुलाचाराद्वा पक्षत्रयान्यतमः पक्ष आदरणीयः अत्रापि पक्षत्रय पूर्वपक्षे पक्षत्रयं प्रतिपदमारभ्यनवम्यन्त प्रत्यहं* पूजाजप होम †वलि-दानाद्यनुष्ठानमित्येकः ॥

प्रतिपत्सः सप्तम्यन्तं केवलं पूजा जप वलिदाना-द्यनुष्ठानमष्टम्यान्त सहोममिति द्वितीयः ॥ प्रति पत्तोष्टम्यन्तं प्रत्यहं केवलं जप वलिदानाद्यनुष्ठानं न-वम्यां सहोममिति तृतीयः ॥ अत्र पूर्व पक्षमाश्रित्य

* टिप्पणी निरुत्तर तंत्रे ॥ पूजया लभते पूजां जपात्सिद्धिर्न संशयः ॥ होमेन सर्व सिद्धि स्यात्तस्मात्त्रित्यमर्चयेत् ॥

† वलिहीने तु दुर्भिक्षं गन्धहीने त्वभाग्यनाम् ॥
धूपहीने तथोद्वेगं वस्त्रहीने धनक्षयम् ॥
भविष्ये ॥

बलिदानस्य प्राथम्यमङ्गी कृतमुर्वरित पश्चाश्रयणे तु यन्नोचितं तत्रैव कार्यम् शिष्टैरिति ॥

अथ वलिदान प्रकारः

तत्र स्वस्तिवाचनं कृत्वा पशुमानीयाञ्जलिम्बध्वाप्रार्थ्य प्राणिनामुपकारार्थं पशुश्रेष्ठ मयाधुना ॥ प्रोक्षितश्चण्डिका प्रीत्या मामात्मानञ्च तारयेदितिपठेत् ॥ ततो मेघाकार स्तम्भमध्ये पशुवन्धे बध्वा ॥ उत्तराभिमुखो भूत्वा वलिं पूर्व मुखं तथेति ॥

कालिका पुराणे ॥

पूर्व मुखं पशुं शंखोदकेन स्नापयेत् ॥ वाराही यमुना गङ्गा करतोया सरस्वती ॥ कावेरी चन्द्र भागा च सिन्धु भैरव सागराः ॥ छाग स्नाने महेशानि ! सान्निध्य कल्पयन्त्विहेति मन्त्रेण ॥ ततः कुशोदकेन प्रोक्षयेत् ॥ सुरास्त्वां वसवो रुद्रा विमानोत्तम चारिणः॥ ग्रहा लोकेश्वराः साध्या अश्विनेयौभिषग्वरौ ॥ एतेचान्ये च ऋषयः प्रोक्षन्तु त्वां कुशोदकैः ॥ एवं प्रोक्ष्य ॥

पशोरङ्गेषु न्यासं कुर्याद्यथा ॥

वाचं ते शुन्धामि प्राणन्ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रन्ते शुन्धामि नाभिन्ते शुन्धामि मेदन्ते शुन्धामि पायुन्ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि यानि ते क्रूराणि तानि ते सह महोभ्यः प्रोक्षन्तु स्वाहा ॥

शिरो ललाटं हृदये च कर्णौ नाभिञ्च कण्ठं गुरु- सेफसोच ॥ क्रोडञ्च पादांश्च तथान्यदङ्गं मुञ्चन्तु

शीघ्रं पशु दैवतानि ॥ पशुयोनि प्रसूतोसि वलियोग्य विवृद्धये ॥ विमुच्य रोम कूटानि शीघ्रं गच्छन्तु देवताः ॥ इति ॥ तत्रस्थान्देवानुद्वास्य ॥ पञ्चोपचारैश्छाग पूजां कृत्वा शृंगयोः सिन्दूरमालिप्य माल्यानिवध्नीयात् ॥ ततोऽग्नि दैवतं पशुं दुर्गा प्रीति जनकं विभाव्य सर्वाङ्गे पिशिताशिन्यैनमः ॥ इत्यङ्गानि विशोध्य ॥ पशुरुत्पादितो दैवैर्यज्ञार्थेषु विधानतः ॥ धर्म्मार्थ काममोक्षार्थं पशो ! त्वां घातयाम्यहम् ॥ इति तं संप्रार्थ्य ॥ तत उत्तराभि मुखस्तत्कर्ता दक्षिण कर्णं धृत्वा पठेत् ॥ पशु ! त्वं वलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः ॥ प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं वलिरूपिणम् ॥ चण्डिका प्रीति दानेन दातुरापद्विनाशनम् ॥ चामुण्डा वलिरूपाय वले ! तुभ्यं नमोस्तुते ॥ यज्ञार्थं पशवः सृष्टा स्वयमेव स्वयम्भुवा ॥ अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोवधः ॥ ऐं ह्रीं श्रीं इति मंत्रेणमहत्स्वरूपं विचिन्तयित्वातन्मूर्द्धिन पुष्पं न्यस्य तत्र भैरवमभिषिच्य दक्षिण करं धृत्वा ॥ छागल ! त्वं महावाहो अग्नेर्देवस्य वाहनः ॥ पशो ! त्वद्वलिदानेन तुष्टामेस्तु हरेः प्रिया ॥ इदं रूपं परित्यज्य गन्धर्वत्वमवाप्नुहि ॥ सर्व काम प्रदानाय छागलाय नमोनमः ॥ इति पठेत् ॥ ततो दक्षिण कर्णं गृहीत्वा ॥ ॐ अद्येहामुक गोत्रस्य अस्य यजमानस्य सर्वाबाधा प्रशमन धन धान्य समृद्धिमत्व वपुरारोग्याचल लक्ष्मी प्राप्ति हेतुक पशु रोममित वर्षानवरत देवी लोक सुख सन्तति प्राप्ति कामः कात्यायनीय गोत्रायै भगवत्यै महामूर्त्यै श्री दुर्गायै इमं छागं (कूष्माण्डं

नारिकेलंवा) सुस्नापित मग्नि दैवतं घातयिष्ये ॥ इति संकल्प्य ॥ पशुगायत्रीं पठेत् ॥ ॐ पशुराजाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ॥ छागेतु ॥ ॐ छागलाग्नि दैवताय विद्महे शिरश्छेदाय धीमहि तन्नश्छागः प्रचोदयात् ॥ इत्येवं पठित्वा ॥ इमं छागं (बलिं) गृहाणत्वं शक्ति हेतोर्दिवौकसाम् ॥ शत्रु दर्प विनाशाय सर्वाभीष्ट प्रसिद्धये ॥ इति देव्यै निवेद्य ॥

ततः 'शृङ्ग' गृहीत्वा ॥ छाग शृङ्ग गृहीतोसि पशुत्वं विप्रहीयतामितिपठेत् ॥

ततः खड्ग पूजा ॥

तत्र प्रतिज्ञां पूर्वंस्तकृत्वा ॥ नन्दकस्य परामूर्ते, मम शत्रु निवर्हण ॥ नीलोत्पलदल श्यामकृत्स्न दुःस्वप्न नाशन ॥ असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ॥ श्री गर्भो विजयश्चैव धर्माधारस्तथैवच ॥ इत्यष्टौ तव नामानि स्वयमुक्तानिवेधसा ॥ नक्षत्रं कृत्तिका तन्तुगुरु-र्देवो महेश्वरः ॥ रोहिण्यश्च शरीरं ते दैवतं च जनार्दनः॥ पिता पितामहोदेवस्त्वां मां पालयतात्सदा ॥ इयं येन धृता क्षोणी हतश्च महिषासुरः ॥ तीक्ष्णधाराय शुद्धाय तस्मै खड्गाय ते नमः ॥ अग्र्यः प्रहरणानां त्वं खड्गो माहेश्वतो सुतः ॥ ॐ ह्रीं ह्रीं खड्ग इति ध्यात्वा ॥ ततो पद्यादि दत्वा ॥ ॐ कालि ! कालि ! यज्ञेश्वरि ! लोह-दण्डायै नमः ॥ मुष्टि देशे सरस्वती ब्रह्मभ्यां नमः ॥ मध्ये लक्ष्मी नारायणाभ्यां नमः ॥ अग्रे उमामहेशाभ्यां नमः ॥ इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य ॥ ॐ आं ह्रीं फट् इति मंत्रेण विमलं खड्गं गृहीत्वा ॥ एक हस्तेन द्वाभ्यां

वा एक च्छेदेनघातयेत् ॥ ततः खर्परं गृहीत्वा ॥ देश-कालादि स्मृत्वा दुर्गायै इमं छाग खर्परं मांस सहितं नानोपकरणान्वितं तुभ्यमहंसंप्रददे ॥ पयोमध्वाज्य सत्खण्ड भक्ष्य द्रव्य फलैर्युतम् ॥ खर्प्परं गृह्ण चा मुण्डे! सदीपं मांस संयुतम् ॥ इति दत्वा ॥ तदुत्थं रुधिरं गृहीत्वा नैर्ऋतेभ्यः प्रदातव्यम् ॥ महा कौशिकसंत्रित-मिति वचनात् ॥ ॐ ऐं ह्रीं कौशिक्यै नमो रुधिरेणा-प्यायता मिति सनैर्ऋताये तस्यै सदीपं दद्यात् ॥ अत्र ये ह्युपयुज्यन्ते प्राणिनो महिषादयः ॥ ते सर्वे स्वर्गतिं यान्ति हन्ता पापं न विन्दति ॥ यावन्न चालयेद्गात्रं पशु-स्तावन्न हन्यते ॥ इति चण्डिका बलि दाने तु सर्वत्रैवं विधिस्मृतः ॥ इति छेदानिष्टे सुवर्णं देयम् ॥ इदञ्च बलि-दानमग्नीषोमीय पशु हिंसा न्यायेन धर्म्यमपि क्षत्रि-यादि विषयमेवतदेतत्स्पष्टमुक्तम् ॥ देवी पुराणे ॥ तदर्द्ध-यामिनीशेषे विजयार्थं नृपोत्तमः ॥ पञ्चाहं लक्षणोपेतं गन्ध धूप स्रगर्च्चितम् । विच्चिविच्चकालि! कालीति जप्त्वा खड्गेन घातयेदिति ॥ ब्राह्मणस्यतु सात्त्विको जप यज्ञाद्यै-र्नैवेद्यैश्च निरामिषैरित्युक्त जपादि रूपा सात्विक्यैव पूजा भवति तस्य सात्विक कर्मण्येवाधिकारस्य श्रुति स्मृत्यादिषु प्रतिपादितत्वात् ॥ यत्तु-माष कल्माष मांसाद्यै-र्देयो दिक्षु बलिर्निशि ॥ कूष्माण्डमिक्षु दण्डश्च *मद्य मासव एव च ॥ एते बलि समाख्यातास्तुसौ छाग समा स्मृताः ॥ तथा-माषान्नेन बलिर्देयो ब्राह्मणेन विजानता इति ॥

* सुराभावे च गोक्षीरं द्विजो दद्यात्युगे युगे ॥
द्रव्याभावे चानुकल्पैः पूजयेत्परदेवताम् ॥
निरुत्तरतन्त्रे ५ पटले ॥

कालिका पुराणे ॥

रम्भेतु नारिकेलञ्च गुवाकं कण्टकी फलम् ॥ उर्वा-रुकं करञ्जंच छेदयेच्छुरिकादिनेति ॥ तथा—ओदनं मांस माष वदित्यन्नदाकल्प भगवन्त भास्कर धृत वचोभ्यां चाऽशक्त क्षत्रियादे ब्राह्मणस्य च वलि दातृत्व मायातं तत्राय विचारः ॥ ब्राह्मणश्चेद्राजसीं पूजां कर्तु मिच्छेत्तदा पार्श्वतर कूष्माण्डादि छेदयेदेवं सात्विको ऽशक्तश्च क्षत्रियादि रपि ॥ सात्विक ब्राह्मणस्यतु वलिदानं न युक्तं ॥ सात्विकी जप यज्ञाद्यैर्नैवेद्यैश्च निरामिषै रिति प्रागुक्तेः ॥ ब्राह्मणेन सदा देयं कूष्माण्ड वलि कर्मणि ॥ श्री फलं वा सुराधीश ! छेदं नैवतु कारयेदिति ॥ निर्णय-सिन्धूक्तं तच्छेदन निषेधाद्ज्ञापकाच्च ॥ अत एव सुरया स्वगात्र रुधिरेण च पूजा ब्राह्मणस्य न भवति ॥ स्वगात्र रुधिरं दत्वा ब्रह्म हत्यामवाप्नुयादिति ॥ तथा मद्यं दत्वा ब्राह्मणस्तु ब्राह्मण्या देव हीयते ॥ इति कालिका पुराणात् ॥

दुर्गारहस्य, श्यामा रहस्य, निरुत्तरतन्त्र, आदि अनेक तन्त्र के मत से भी ब्राह्मण को मद्य मांसादि पूजन निषेध है ।

घृत की बत्ती बनाकर कर्पूर सहित आर्ती में रखकर गंध पुष्प से पूजन कर नीचे लिखे मंत्रों से आर्ती खड़े होकर करना यथाशक्ति *बाजे बजते रहें ॥

आरती ॥

ॐ आरात्रि पार्थिव ठं॰ रजः पितुर प्रायि धामभिः ॥ दिवः सदा ᳪ सिवृहती वितिष्ठऽआत्वेषं वर्तते तमः चन्द्रादित्यौ च धरणी विद्युदग्निस्तथैवच ॥ त्व मेवसर्व ज्योतींषि आर्तिक्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

---

* शिवागारे झल्लकं च सूर्यागारे च शंखकम् ॥
दुर्गागारे वंशिवाद्यं मधुरीं च न वादयेत् ॥
झल्लकं कांस्य-निर्मित करतालं ॥ योगिनी तन्त्रे ॥

ॐ जय जय जगदम्बे ! मा जय जय जय जगदम्बे ! ॥ नीराजनमवलोचय २ मोचयभयमम्बे!॥ १॥ जय देवि २ ॥ कैलासोपरि सुन्दर मणिमय मंदिरगां ॥ मा मणिमय० ॥ त्वां ध्यायन्तिमहान्तः मा त्वां० परिशंकर सहिताम् ॥ दिव्यकुसुम शुभगंधै, मण्डित सुभगांगी मा मंडित सु० ॥ दिव्याम्बर वरभूषण भूषित, सर्वाङ्गीम् ॥ जय देवि० ॥२॥ विधि हरि हर शक्रादिक, सेवितमृदु-चरणे मा सेवित० ॥ विविध वधू पर मादर २ परि रचिता-भरणे ॥ धनदादिक सुरवन्दित, निरजर वर शरणे ॥ मा निर० ॥ तेषां मुकुटमणीचय, नीरा-जित चरणे ॥ जय देवि २॥४॥अप्सरसांसुरनिकरैः, कृत-पूजन समये मा कृत० ॥ ताण्डववेणुविवादन, कोमल-गानमये को०॥धिङ् धिङ् तां धिङ् धिट्तां मूर्च्छध्व निसहिते मामूर्च्छनध्व०॥झणणण झननन, नूपुर रवमुदिते ॥ जय देवि २॥३ विविधचतुश्च-क्रागत, शक्त्यर्चनसुखदे माशक्त्य० ॥ संशयपापविना-शिनि!, निन्दकजनदुःखदे नि०॥प्रौढोल्लहास विलासिनि, सेवकमनसुखदे ॥ मा सेवक० ॥ तस्मिन्मुदितसमाजे, मधुमुदिताहससे ॥ मधु० ॥जय०॥४॥ सावर्णवटुकादिक, गणपति वलि सहितं ॥ मा गणप० ॥ स्वीकार कुरु-पूजनमवमां, जयहितम् २ ॥ नरनिधिरचितविधानं, शृणुत्वं जगदम्बे ॥ मा शृणु०॥ कुरुमातवचरणानांशरणा-गतमम्बे ! ॥ माश० ॥ जयदेवि ! जयदेवि ! ॥ ५ ॥

———

भाषा की आर्ति ॥

जय अम्बेगौरी मैया जय श्यामागौरी ॥ मैया जय मंगलकरणी मैया जय आनन्द करणी ॥ तुमको निशदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव री । जय० ॥१॥ मांग सिन्दूर विराजत टीको मृग मद को ॥ मैया टीको० ॥ उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्र बदन नीको ॥ जय अम्बे० ॥२॥ कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै ॥ मैया रक्ता० ॥ रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै ॥ जय अम्बे० ३ ॥ केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी ॥मैया०॥खड्ग ख० सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुखहारी ॥ जय अम्बे० ॥४॥ कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती ॥ मैया नासा० ॥ कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योती जय अ० ॥५॥ शुंभ निशुंभ विदारे, महिषासुर घाती मैया महिषा० ॥ धूम्र विलोचन नैना, निशिदिन मद-माती ॥ जय अम्बे० ॥ ६ चण्ड मुण्ड संहारे शोणित बीज हरे ॥ माई शोणित० ॥ मधु कैटभ दोऊ मारे सुर भयहीन करे ॥ जय अं० ॥ ७ ॥ ब्रह्माणी रुद्राणी तुम कमला रानी ॥ माई तुम रा० ॥ आगम निगम बखानी तुम शिव पटरानी ॥ जय अं० ॥ ८ ॥ चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरों ॥ मैया नृ० ॥ बाजत ताल मृदंगा, और बाजे डमरू ॥ जय अ० ॥ ९ ॥ तुम ही जग की माता तुम ही हो भरता ॥ माई तुम० ॥ भक्तन की दुख हरता सुख संपति करता ॥जय अं० ॥ ॥ १० ॥ भुजा चार अति शोभित, वर अभय धारी ॥ मैया वर० ॥ मन वांछित फल पावत, सेवत नरनारी ॥

॥ जय० ॥ ११ ॥ कंचन थाल विराजत अगर कपुर बाती माई अग० ॥ श्रीमालकेतु में राजत कोटिरतन ज्योती ॥ जय अंबे० ॥ १२ ॥ अम्बेजी की आरति, जो कोई नर गावै ॥ मैयाजी० ॥ कहत शिवानन्द स्वामी, सुख संपति पावै ॥ जय अम्बे गौरी ॥ १३ ॥

देव्या आरार्तिक स्तोत्रं नीराजन समये पठनीयम् ॥

ॐ जयदेवि ! जयदेवि ! हे शङ्कर ललने !

मा हे शङ्कर ललने ! ॥ कुरु कुरु चेतः सदयं मयिमातर्विलिने ॥ १ ॥ मध्येस्थापित दीपै रालीशत यूथैऽर्मां आलीशतयूथैः ॥ निज करताल ध्वनि भिर्नादित दिग्पटलैः ॥ क्रीडन गायन हासैर्नन्दित मृदु हृदयां भावयचेतः सततं भुवनेशीं सदयां ॥ जयदेवि० २ ॥ भवभयसागरपारंकर्तुं दृषदुदिता, विदितादन्यत्प्रापयितुं मुदिता ॥ सर्वाप्येवंलीलाजनता जनतायै नकथं द्रवसे ॥ हृदये जगतो समतायै ॥ जयदेवि० २॥३॥ नाना मणिमयभूषामण्डित दोर्युगलेनूपुर मधुर ध्वनि भिर्नादित दिग्पटले ॥ उद्यद्दिनकर भानु प्रतिभट रुचिरास्ये-ध्यातुः ॥ किं किं दुर्लभ महमिह नहि जाने ॥ जयदेवि जयदेवि ॥४॥ जगतः सृष्टि स्थितयो हृतयः प्रतिकल्प, लोचन मीलन लीलोन्मेषणतः कुरुषे ॥ को वा प्रभवति तस्याः स्मृतये मनसा, यस्मिहि ता वेदा यत्र स्मृतिभिः सहचकिता, जयदेवि २ ॥५॥ पाशाऽभय वरहस्ता रजनी पतिभाला ॥ रक्ताम्बरपरिधाना सृणि भूषित हस्ता ॥ रवि शशि लोचन युग्मा हुतवह नयनैनां ॥ मानस भावय जननीं सततं भुवनैनाम् ॥ जयदेवि जयदेवि ॥ ६ ॥

सर्वं खल्विदमखिलं तदहं भुवनाधीशानी । नान्यत्किञ्चिन्मधुसूदन सततम् ॥ इति या सम्यक् शिशवे हरये वट पत्रे ॥ प्रवदति भुवना तस्यै नम एतत्कुर्मः जयदेवि जयदेवि ॥७॥ पद्यैरेतै रमलैर्मनुजो भुवनेश्याः कर्पूरात्याँ यजते परयाकिलभक्त्या ॥ तस्यक्षोणीपतयो वशगा धन धान्यं पुत्राः पौत्रागेहे विमलं पदमन्ते ॥ जयदेवि जयदेवि ॥८॥

श्री मच्छङ्कराचार्य विरचितं देव्या आरार्तिक स्तोत्रम् ॥

आर्ती रखकर शंख में जल भरकर उतारे और थोड़ा-थोड़ा दोनों ओर जल शंख से छोड़ता रहे । बाद में थोड़ा जल हाथ में लेकर उपस्थित भक्तों के ऊपर छिड़क कर नीचे लिखे मंत्र हाथों में पुष्प लेकर बोले ॥

मंत्र पुष्पाञ्जलिः ॥

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन् ॥ तेहनाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिदेवाः ॥ ॐ राजाधिराजायप्रसह्य साहिने नमोवयं वैश्रवणाय कुर्महे ॥ समे कामान्कामकामायमह्यं । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु कुबेरायवैश्रवणाय राजाधिराजाय महाराजयनमः ॥ ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्य माधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् ॥ पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति ॥ तदप्येष श्लोकोऽभिगीतोमरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या वसन्गृहे ॥ आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो वाहुरुत विश्व तस्पात् ॥ सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवएकः ॥ मन्त्र पुष्पाञ्जलिं समर्पयामिनमः ॥

सेवन्तिका वकुल चम्पक पाटलाब्जैः ॥
पुन्नाग जाति करवीर रसाल पुष्पैः ॥
विल्व प्रवाल तुलसीदल मञ्जरीभिः ॥
त्वां पूजयामि जगदीश्वरि ! मे प्रसीद ॥
पापोहं पाप कर्म्माहं पापात्मा पाप संभवः
त्राहि मां सर्वदा मातः सर्व पाप हरा भव ॥

दुर्गा गायत्री

ॐ महादेव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ एवं पुनः प्रणम्य स्तुवीत ॥

*प्रदक्षिणा

ॐ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्य मन्वहम् ॥
सूक्तं पञ्च दशर्चञ्च श्री कामः सततं जपेत् ॥
ॐ येतीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषङ्गिणः ॥
तेषाᳬंसहस्र योजने वधन्वानि तन्मसि ॥
नमस्ते देव देवेशि ! नमस्ते ईप्सित प्रदे ! ॥
नमस्ते जगतां धात्रि ! नमस्ते शंकर प्रिये ! ॥

इति प्रदक्षिणा

‡साष्टाङ्ग प्रणाम करना ॥

नमः सर्व हितार्थायै जगदाधार हेतवे ॥
साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

---

* एका चण्ड्यां रवौसप्त तिस्रो दद्याद्विनायके ॥
चतस्रः केशवे देया शिवस्यार्द्धं प्रदक्षिणा ॥
‡ उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा ॥
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोष्टाङ्ग ईरितः ॥
बाहुभ्यां च सजानुभ्यां शिरसा मनसाधिया ॥
पञ्चाङ्गकः प्रणामः स्यात् सर्वत्र प्रवराविमौ ॥
इति तन्त्रान्तरे

पूजा फलादि* कार्याद्यैः सुपूर्णं यदनुष्ठितम् ॥ तत्सर्वं फलदं मेऽस्तु सुरेश सुकृतं देहि मे ॥७॥ नमस्ते । त्वत्प्रसादान्नित्यं पूजापूजा त्वया कृता ॥ स्थिरा भव गृहेऽस्मिन्नम्ब त्वं मम कारिणे ॥८॥

विपद्गणस्य ध्वान्त सहस्रभानवः । समीहितार्थार्पितकामधेनवः ॥ अपार संसार समुद्र सेतवो मां पान्तु देवि चरणाब्जरेणवः ॥ इत्युच्चार्य मूलं मन्त्रेण पुष्पाञ्जलिमर्घ्यं दद्यात् ॥

अथ देव्यपराध क्षमापन स्तोत्रम् ॥

श्री गणेशाय नमः ॥ न मंत्रं नो यंत्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः । न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ॥ तदेतत्क्षन्तव्यं जननि । सकलोद्धारिणि शिवे । कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥ पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि । बहवः सन्ति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ॥ मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे । कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥ जगन्मातर्मातस्तव चरण सेवा न रचिता न वा दत्तं देवि । द्रविणमपि भूयस्तव मया । तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥ परित्यक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया मया पंचाशीतेरधिकमपनीते

---

* पूजाफल सुसार्याद्यैः ।

वयसि॥इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपानापि भविता निरालम्बो लम्बोदर जननि ! कं यामि शरणम् ॥५॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपम गिरा निरातंको रंको विहरति चिरं कोटि कनकैः ॥ तवापर्णे कर्णे विशति मनु वर्णे फलमिदं जनःकोजानीते जननि ! जपनीयं जप विधौ ॥६॥ चिताभस्मा लेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कण्ठे भुजग पतिहारी पशुपतिः ॥ कपाली भूतेशो भजति, जगदीशैकपदवीं भवानि ! त्वत्पाणि ग्रहण परिपाटी फलमिदम् ।७॥ न मोक्षस्या कांक्षा न च विभव वांछापि च न मे, नविज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः ॥ अतस्त्वां संयाचे जननि ! जननं यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव ! शिव ! भवानीति जपतः ॥८॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः किं रुक्ष चिन्तन परैर्न कृतं वचोभिः । श्यामे ! त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ॥९॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि । नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥ जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि । अपराध परम्परा परं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि । एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥ इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमच्छङ्कराचार्य विरचित देव्यपराधक्षमापन स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

दुर्गा आपदुद्धाराष्टकम् ॥

नमस्ते शरण्ये शिवे, सानुकम्पे नमस्ते जगद्व्यापिके ! विश्वरूपे ॥ नमस्ते जगद्वन्द्य पादारविन्दे नमस्ते जगत्तारिणि ! त्राहि दुर्गे ! ॥१॥ नमस्ते जगच्चिन्त्यमान स्वरूपे नमस्ते महायोगि विज्ञान रूपे ॥ नमस्ते नमस्ते सदानन्द रूपे नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥२॥ अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य भयार्त्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः ॥ त्वमेकागतिर्देवि निस्तार कर्त्री नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ! ॥३॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रुमध्ये जले संकटे राजगेहे प्रवाते ॥ त्वमेकागति देवि ! निस्तार हेतुर्नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ! ॥४॥ अपारे महादुस्तरेत्यन्तघोरे विपत्सागरे मज्जतां देहभाजां ॥ त्वमेकागति देवि निस्तार नौका नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ! ॥५॥ नमश्चण्डिके ! चण्ड दोर्दण्ड [illegible] समुत्खण्डिता खण्डिताशेषशत्रोः ॥ त्वमेकागति [illegible] सन्दाह हर्त्री नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे [illegible] त्वमेकासदाराधिता सत्यवादिन्यनेकाखिला [illegible] क्रोधनिष्ठा ॥ इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्णा च नाडी [illegible] जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥७॥ नमो देवि ! दुर्गे ! [illegible] भीतिनाशे ! महानन्द सिद्धि प्रदात्रि स्वरूपे ! ॥ [illegible] सनाकालरात्रि स्वरूपे नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥८॥ शरण्यमसि सुराणां सिद्ध विद्या [illegible] मुनि मनुज पशूनां व्याधिभिः पीडितानां [illegible]

नृपति गृहगतानां दस्युभिस्त्रासितानां [illegible]

त्वमसि शरण मेका देवि दुर्गे ! प्रसीद ॥९॥

शत्रूणां बुद्धि नाशोस्तु मित्राणामुदयस्तथा ॥ आयुष्कामो यशस्कामो पुत्र काम स्तथैवच ॥ आरोग्यं धन कामश्च सर्वो कामाः भवन्तु ते ॥

इत्यर्गलपुर निवासि गौड़ जातीय भारद्वाज वंशोद्भव विद्वद्वर गोस्वाम्युपाह्व पं० श्री बुलाखीराम सूनुना श्री विद्या धर्म्म वर्द्धिनी पाठशालायाः कर्मकाण्ड यजुर्वेदाध्यापकेन विद्याभूषण कर्मकाण्डमणीत्युपाधि विभूषितेन श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामिना दुर्गार्चन स्मृतौ वेदोक्त कलशस्थापन विधिः सम्पूर्णः ॥

प्रसङ्गात्स्तोत्र पाठ विधिः ॥

न च स्वयं कृतं स्तोत्रं तथान्येन च यत्कृतम् ॥
यतः कलौ प्रशंसंति ऋषिभि र्भाषितं तु यत् ॥

सरस्वती स्तोत्रम् ॥

श्री भैरव उवाच ॥ शृणुदेविप्रवक्ष्यामिस्तोत्रं परम दुर्लभम् ॥ वागीश्या मन्त्र गर्भंतु भुक्तिमुक्ति फलप्रदम् ॥

अस्य श्री वाग्वादिनी शारदा स्तोत्र मन्त्रस्य मार्कण्डेयाश्वलायन ऋषिः स्रग्धरानुष्टुप् छन्दः श्री सरस्वती देवता ह्रीं बीजं ॐ शक्तिऐ कीलकम्आशु वाग्विवृद्ध्यर्थेजपे विनियोगः ॥ ध्यानम् ॥ शुक्लां ब्रह्म विचार सार परमामाद्यां जगद्व्यापिनीम् । वीणा पुस्तक धारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ॥ हस्ते स्फाटिक मालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थिताम् वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धि प्रदां शारदाम् ॥१॥ ब्रह्मोवाच ॥
ह्रीं ह्रीं हृद्यैकबीजे शशि रुचि कमला कल्प विष्पष्ट शोभे। भव्ये भव्यानुकूले कुमति वनदहे विश्ववन्द्याङ्घ्रि पद्मे ॥

पद्मे पद्मोपविष्टे प्रणतजनमनो मोदसंपादयित्रि ॥ प्रो त्फुल्ला ज्ञान कूटे हरि निजदयिते देवि संसार सारे ॥२॥ ऐं ऐं ऐं इष्ट मंत्रे कमल भवमुखांभोजरूप स्वरूपे । रूपारूप प्रकाशे सकल गुणमये निर्गुणे निर्विकारे ॥ न स्थूलेनैव सूक्ष्मेऽप्यविदित विषये नापिविज्ञाततत्वे । विश्वे विश्वान्तराले सुर वर नमिते निष्कले नित्य शुद्धे ॥३॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं जाप तुष्टे हिमरुचि मुकुटे वल्लकी व्यग्रहस्ते ॥ मातर्मात र्नमस्ते दह-दह जड़तां देहि बुद्धि प्रशस्तां ॥ विद्ये वेदान्त गीते श्रुति परि पठिते मोक्षदे मुक्ति मार्गे ॥ मार्गातीत प्रभावे भव मम वरदा शारदेशुभ्रहारे ॥४॥ धीं धीं धीं धारणाख्ये धृतिमतिनुति भिर्नामभिः कीर्तनीये नित्येऽनित्ये निमित्ते मुनि गण नमिते नूतने वै पुराणे ॥ पुण्ये पुण्य प्रभावे हरिहर नमिते नित्य शुद्धे सुवर्णे, मन्त्रे मन्त्रार्थ तत्वेमति! मति! मतिदे माधव प्रीति नादे ॥५॥ ह्रीं क्लीं श्रीं ह्रीं स्वरूपे दह दह दुरितं पुस्तक व्यग्रहस्ते । संतुष्टाकारचित्ते स्मितमुखि सुभगे जृंभिनी स्तंभविद्ये ॥ मोहे मुग्ध प्रभावे मम कुरु विमतिं ध्वांत विध्वंसनीये । गीर्गीर्वाग् भारतीत्वं कवि वृषरसना सिद्धिदा सिद्ध विद्या ॥६॥ स्तौमि त्वां त्वां च वन्दे भज मम रसनां मा कदाचित्यजेथाः । मा मे बुद्धिर्विरुद्धा भवतु न च मनो देवि मे जातु पापम् ॥ मामे दुःखं कदाचिद्विपदि च समयेऽप्यस्तु मे नाकुलत्वं ॥ शास्त्रे वादे कवित्वे प्रसरतु ममधी र्मास्तु कुंठा कदाचित् ॥८॥ इत्येतैः श्लोक मुख्यै प्रति दिन मुषसि स्तौति यो भक्त नम्रो वाणीं वाचस्पते

कुलार्णवे १५ उल्लासे

मन्त्र जपे पाठे च भेदः

मनसा यः स्मरेत्स्तोत्रं वचसा वा मनुं जपेत् ॥
उभयं निष्फलं देवि ! भिन्न भाण्डोदकं यथा ॥

गुरुशब्दार्थः ॥

गुशब्दस्त्वन्धकारः स्या द्रुशब्द स्तन्निरोधकः ॥
अन्धकार निरोधित्वाद्गुरुरित्यभिधीयते ॥
गकाराद् ज्ञान संपत्ती रेफः पापस्य दाहकः ॥
उकारा च्छिवतादात्म्यं दद्यादिति गुरुः स्मृतः ॥

कुल चूड़ामणौ ॥

उदासीनो ह्युदासीनां वनस्था वन वासिनः ॥
यतीनाञ्चयती प्रोक्तो गृहस्था नां गुरुर्गृही ॥
वैष्णवे वैष्णवो ग्राह्यः शैवे शैवस्तथा पुनः ॥
शाक्ति के त्रितयं विद्याद्दीक्षास्वामी न संशयः॥

गुरुरपि गृहस्थ एव कुलार्णवे ॥

सर्व शास्त्रार्थ वेत्ता च गृहस्थो गुरु रुच्यते ॥

गुरु शब्दार्थः यामले ॥

गकारः सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य दाहकः ॥
उकारः शक्ति इत्युक्तस्त्रितयात्मा गुरुः स्मृतः ॥

मन्त्र शब्द व्युत्पत्ति माह

मननं विश्व विज्ञानं त्राणं संसार बंधनात् ॥
यतः करोति सं सिद्धो मन्त्र इत्युच्यते ततः ॥

पिंगलामते ॥

मननात्त्राणनाच्चैव मद्रूपस्यावबोधनात् ॥
मन्त्र इत्युच्यते सम्यङ् मदधिष्ठानतः प्रिये ॥
रुद्रयामले ॥

गुरोपदेश तो मन्त्रो मनना त्राणनादपि ॥
तन्त्रान्तरे ॥

तोड़ल तन्त्रोक्त मन्त्र चैतन्य विधिः ॥

सर्व मंत्रस्य चैतन्यं शृणु पार्वति सादरं ॥ सहस्रारे महापद्मे विन्दुरूपं परं शिवं ॥ कुण्डलिनीं समुत्थाप्य हंसेन मनुना सुधीः ॥ नासाग्रे या स्थिरा दृष्टिर्जायते परमेश्वरि ॥ तदैव मन्त्र चैतन्यं कुण्डली चक्रगं भवेत् ॥ सहस्रारे महापद्मे कुण्डल्या सहितं गुरुं ॥ भावयेत्सर्व मंत्राणां चैतन्यं जायते प्रिये ॥ तदैव प्रजपेन्मन्त्रं सिद्धिदं नात्रसंशयः ॥

देवी प्रतिमास्थापने विशेषः

याम्यास्या शुभदा दुर्गा पूर्वास्या जय वर्द्धिनी ॥
पश्चिमाभि मुखी नित्यं नस्थाप्या सौम्यदिङ् मुखी ॥

देवी भक्ति तरङ्गिण्यां, देवी पुराणे च

तोड़लतन्त्रे

श्रीशिव उवाच ॥ मूलाधारेकाम रूपं हृदिजालंधरं प्रिये ! ।पूर्णं गिरिमधोभागे उड्डियानंतदूर्ध्वके। वाराणसी भ्रुवोर्मध्ये ज्वलन्ती लोचनत्रये ॥ मायावती मुखवृत्ते कण्ठेचाष्ट पुरीतथा ॥ नाभिमूलेमहेशानि ! अयोध्यापुरी संस्थिता ॥ काँची पीठंकटीदेशे श्रीचक्रंपृष्ठदेशके ॥ मूलाधारात् शतारश्चैव अतलंपरिकीर्तितम् ॥ सुतलं च

कर्पूरतं तलातलगतं प्रिये ॥ रूपिवाखेन्दु कन्वीन्दं संस्थितं च महातलम् । सावधानतं पातालं प्रियां वै रसातलम् ॥ मूलाधारात् देवेशि ! ईकुली चाविकैस्थितं ॥ तयोर्मध्ये च पाताल तिष्ठन्ति परमेश्वरि ! ॥ इतिलोकांधिमनं कान्ते ! योगाखंडनागतः ॥ नन्दावायं परोपरत्रे प्राणान्तेपि कदाचन ॥

तोडलतन्त्रे १० उल्लासे ॥

तारादेवी नीलरूपा कमला कूर्म चंडिका ॥ धूमावती वराहः स्यात् छिन्नमस्ता नृसिंहिका ॥ भुवनेश्वरी-वामनः स्यान्मातंगी राम मातृका ॥ त्रिपुराजामदग्न्यः स्याद्बलभद्रस्तु भैरवी ॥ महालक्ष्मी भवेद्बुद्धो दुर्गास्यात् कल्किरूपिणी ॥ स्वयं भगवती काली कृष्ण मूर्तिः समुद्भवा ॥ इति ते कथितं देव्यवतारं दशमेवहि ॥ एतासां पूजना देवि महादेव समोभवेत् ॥

गन्धर्व तन्त्रे ॥

न दद्या द्भास्करायार्घं शंखतोयैर्महेश्वरि ॥
यावन्नदीयते चार्घो भास्कराय महेश्वरि ॥
तावन्न पूजये द्विष्णुं शङ्करं वा सुरेश्वरीम् ॥
सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्चवै ॥
एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः ॥
सर्वे देवा शरीरस्थाः मम मन्त्रस्य साक्षिणः ॥
पूर्व जन्मार्जितां विद्यां मम हस्ते प्रदापय ॥

जप फलं कुलार्णवे

गृहे शतगुणं विद्याद् गोष्ठे लक्षगुणं भवेत् ॥
कोटिर्देवालये पुण्यमनन्तं शिवसन्निधौ ॥

॥ ... उपचार शब्दार्थो ज्ञानमात्राख्य ॥ ...

संस्थाप्य चैवे कृता देवे साधकं देव सन्निधिम् ॥

चारयन्ति यतस्तस्मा दुच्यन्ते ह्युपचारकाः ॥

समीपे चारणार्हाणि फलानान्ते तथाविदाः ॥

अष्टत्रिंशत् षोडशोऽन्ये दश पञ्चोपचारकाः ॥

तान्विभज्य प्रवक्ष्यामि के के ते तैः कृतैश्च किम् ॥

आसनं प्रथमं तेषामावाहनमुपस्थितिः ॥

स्नानं नीराजनं वस्त्र माचामञ्चोपवीतकम् ॥

पुनराचाम भूषे च दर्पणालोकनं ततः ॥

गन्ध पुष्पे धूप दीपौ नैवेद्यं च ततः क्रमात् ॥

पानीयं तोय माचामं हस्तवासस्ततः परम् ॥

ताम्बूल मनुलेपञ्च पुष्प दानं पुनः पुनः ॥

गीतं वाद्यं तथा नृत्यं स्तुतिं चैव प्रदक्षिणम् ॥

पुष्पाञ्जलि नमस्कारावष्ट त्रिंशत्समीरिताः ॥

पुष्पाञ्जलि नमस्कारौ विष्णु प्रीत्यै भवन्त्यमी ॥

तन्त्रोक्तोपचाराः ॥

उपचारं प्रवक्ष्यामि शृणु पार्वति ! सादरम् ॥

विनोपचारैर्या पूजा सा पूजा न प्रसीदति ॥

अष्टा दशोपचारास्तु सर्वेषां सुसमाः प्रिये ! ॥

षोडशेति प्रधानाच्च दशधातदनुस्मृता ॥

पञ्चधातदनुप्रोक्ता कर्त्तव्यास्मृति निश्चिता ॥

फेत्कारिणी तन्त्रे ॥ अष्टादशोपचाराः ॥

आसना वाहनञ्चार्घ्यं पाद्यमाचमनन्तथा ॥

स्नानं वासोपवीतञ्च भूषणानि च सर्वशः ॥

गन्धं पुष्पं तथा दीपं धूपोन्नञ्चापि तर्पणम् ॥
माल्यानुलेपनञ्चैव नमस्कारो विसर्जनम् ॥
अष्टादशोपचारैस्तु मन्त्री पूजांसमाचरेत् ॥

षोडशोपचाराः तन्त्रे ॥

आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ॥
मधुपर्काचमनं स्नानं वसनं भरणानि च ॥
गन्धपुष्पे धूपदीपे नैवेद्यं चन्दनस्तथा ॥
प्रयोजयेदर्चनायामुपचारांश्च षोडश ॥

दशोपचाराः ॥

पाद्यार्घ्याचमनीयञ्च मधुपर्काचमनस्तथा ॥
गन्धाद्यो नैवेद्यान्ता उपचारा: दशात्मका: ॥

पञ्चोपचाराः ॥

गन्धं पुष्पञ्च धूपं च दीपं नैवेद्य मेवच ॥
प्रदद्यात्परमेशानि ! पूजा पञ्चोपचारिका ॥

पूजने वर्ज्य पदार्थाः

सर्वं पर्युषितं वर्ज्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम् ॥
अवर्ज्यं जान्हवी तोयमवर्ज्यं तुलसीदलम् ॥
अवर्ज्यं बिल्व पत्रं स्यादवर्ज्यं जलजं तथा ॥
पुष्पैः पर्युषितै र्देवि नार्चयेत्स्वर्णजैरपि ॥
बिल्वपत्रञ्चलार्घ्यं च तमालामलकीदलम् ॥
कल्हारं तुलसी पत्रं पद्मञ्च मणि पुष्पकम् ॥
एतत्पर्युषितं न स्यात् यच्चान्यत्कलिकात्मकम् ॥
तिष्ठे द्दिनत्रयं शुद्धं पद्ममामलकन्तथा ॥
दिनैकं करवीराणि ये न्यानि च तपोधन ॥
पद्मानि सितरक्तानि कुसुमान्युत्पलानि च ॥
एषांपर्युषिता शंका कार्या पंचदिनाद्धृतः ॥

गणेश स्तुतिः सद्धर्म चिन्तामणौ ॥

प्रातः स्मरामि गणनाथ मनाथ बन्धुं सिन्दूरपूर्ण परिशोभित गण्ड युग्मम् ॥ उद्दण्ड विघ्न परि खण्डन चण्ड दण्ड माखण्डलादि सुरनायक वृन्द वन्द्यम् ॥१॥ प्रातर्नमामि चतुरानन वन्द्यमानमिच्छानुकूल मखिलं च वरं ददानम् ॥ तन्तुन्दिलं द्विरसनाधिप यज्ञ सूत्रं पुत्रं विलास चतुरं शिवयोः शिवाय ॥२॥ प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्त शोक दावानलं गण विभुं वर कुंजरास्यम् ॥ अज्ञानकानन विनाशन हव्यवाहमुत्साह वर्धनमहं सुतमीश्वरस्य ॥३॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम् ॥
प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ॥

देवी स्तुतिः सद्धर्म चिन्तामणौ ॥

प्रातः स्मरामि शरदिन्दु करो ज्वलाभां सद्रत्नवन्म कर कुण्डल हारभूषाम् ॥ दिव्यायुधोर्जित सुनील सहस्रहस्तां रक्तोत्पलाभ चरणां भवतीं परेशाम् ॥१॥ प्रातर्नमामि महिषासुर चण्ड मुण्ड शुम्भासुर प्रमुख दैत्य विनाश दक्षाम् ॥ ब्रह्मेन्द्र रुद्र मुनि मोहन शीललीलां चण्डीं समस्त सुरमूर्तिमनेक रूपाम् ॥२॥ प्रातर्भजामि भजतामभिलाष दात्रीं धात्रीं समस्तजगतां दुरिताप हन्त्रीं ॥ संसार बंधन विमोचनहेतु भूतां मायां परां समधि गम्य परस्य विष्णोः ॥३॥

श्लोक त्रय मिदं देव्या श्चण्डिकायाः पठेन्नरः ॥
सर्वान्कामानवाप्नोति देवी लोके महीयते ॥

तथा च शारदायां भुवनेश्वरीं प्रति शिववाक्यम् ॥

अद्याप्य शेष जगतां नवयौवनासि शैलाधिराज तन-याप्यति कोमलासि ॥ समयातन्त्रे ॥ कदाचित्कस्थमुक्तिः स्यात्कदाचिद्भुक्तिरेवच ॥ एतस्याः साधक स्याथ भुक्तिर्मुक्तिः करे स्थिता ॥ रुद्रयामले ॥ यत्रास्ति भोगो न च तत्र मोक्षो यत्रास्ति मोक्षः न च तत्र भोगः ॥ शिवापदाम्भोज युगार्चकानां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ॥ योऽन्योभ्यो दर्शनेभ्यश्च भुक्तिं मुक्तिं च कांक्षति ॥ स्वप्न लब्ध धने नैव धनवान्सभवेद्यदि ॥ शुक्तो रजत विभ्रान्तिर्यथा जायेत पार्वति ! ॥ तथान्य दर्शनेभ्यश्च भुक्तिं मुक्तिं च कांक्षति ॥

दुर्गा १६ उपचाराः मानसिक पूजने ॥

उद्यच्चन्दन कुङ्कुमारुणपयो धाराभिराप्लावितम् ।
नानानर्घ मणि प्रवाल घटितां दत्तां गृहाणाम्बिके ! ॥
आमृष्टां सुर सुन्दरीभिरभि तो हस्ताम्बुजैर्भक्तितः ।
मातः सुन्दरि ! भक्त कल्प लतिके ! श्रीपादुकामादरात् ॥१॥
देवेन्द्रादिभिरर्चितं सुरगणैरादाय सिंहासनम् ।
चञ्चत्काञ्चन सञ्चयाभिरचितं चारु प्रभाभास्वरम् ॥
एतच्चम्पक केतकी परिमलं तैलं महा निर्मलम् ।
गन्धोद्वर्तनमादरेण तरुणी दत्तं गृहाणाम्बिके ! ॥२॥
पश्चाद्देवि ! गृहाण शम्भु गृहिणि ! श्री सुन्दरि ! प्रायशः ।
गन्ध द्रव्य समूह निर्भर भवं धात्री फलं निर्मलम् ॥
तत्केशान्परि शोध्य कङ्कतिकया मन्दाकिनी स्रोतसि ।
स्नात्वाप्रोज्वल गंधकं भवतु ते श्री सुन्दरि ! तन्मुखे ॥३॥
सुराधिपति कामिनी कर सरोजनाली धृताम् ।
स चन्दन सुकुङ्कुमागुरुतरेण विभ्राजिताम् ॥

महापरिमलोज्वलां सरस शुद्ध कस्तूरिकाम् ॥
गृहाण वरदायिनि ! त्रिपुर सुन्दरि ! श्रीपदे ॥४॥
गन्धर्वामर किन्नर प्रियतमा सन्तान हस्ताम्बुजे ॥
प्रस्तारैर्ध्रियमानमुत्तम तरं काश्मीरजापिञ्जरम् ॥
मातर्भास्वर भानु मण्डल लसत्कान्ती प्रदानोज्वलम् ॥
चैनं निर्मलमातनोतु वसनं श्री सुन्दरि ! त्वन्मुदे ॥५॥
स्वर्णाकल्पित कुण्डले श्रुतियुगे हस्ताम्बुजे मुद्रिका ॥
मध्येसारसना नितम्ब फल के मञ्जीरमंघ्रिद्वये ॥
हारो वक्षसि कङ्कनौक्कण रणत्कारौ कर द्वन्द्वके ॥
विन्यस्तं मुकुटं शिरस्यनुदिनं दत्तोन्मदं स्तूयताम् ॥६॥
ग्रीवायां धृत कान्ति कान्त पटलं ग्रैवेयकं सुन्दरम् ॥
सिन्दूरं विलसल्ललाटफलके सौंदर्य मुद्राधरम् ॥
राजत्कज्जल मुज्ज्वलोत्पलदलश्री मोचने लोचने ॥
तद्दिव्यौषधिनिर्मितं रचयतु श्री शाम्भवि श्रीपदे ॥७॥
अमन्द तर मन्दरोन्मथित दुग्ध सिन्धूद्भवम् ॥
निशाकर करोपमं त्रिपुर सुन्दरि ! श्रीपदे ॥
गृहाण मुखमीक्षितुं मुकुर बिम्बमाविद्रुमै- ॥
र्विनिर्मित मधुच्छदेरति कराम्बुज स्थायिनम् ॥८॥
कस्तूरी द्रव चन्दना गुरु सुधा धाराभिराप्लावितम् ॥
चञ्चच्चम्पक पाटलादि सुरभि द्रव्यैः सुगन्धी कृतम् ॥
देव श्री गण मस्तक स्थित महा रत्नादि कुम्भ व्रजै-
रम्भः शाम्भवि संभ्रमेण विमलं दत्तं गृहाणाम्बिके ! ॥९॥
कल्हारोत्पल नाग केशर सरोजाख्यावली मालती ॥
वल्ली कैरव केतकादि कुसुमैः रक्ताश्वमारादिभिः ॥
पुष्पै र्माल्य भरेण वै सुरभिना नाना रस स्रोतसा ॥

ताम्राम्भोजनिवासिनीं भगवतीं श्री चण्डिकां पूजये ॥१०॥
मांसी गुग्गुल चन्दनागुरु रजः कर्पूर शैलेयजैः ॥
माध्वी कैः सह कुङ्कुमैः सुरचितैः सर्पिर्भिरा मिश्रितैः ॥
सौरभ्यस्थिति मन्दिरे मणिमये पात्रे भवेत्प्रीयते ॥
धूपोऽयं सुरकामिनो विरचितः श्रीचण्डिके ! त्वन्मुखे ॥११॥
घृत द्रव परिस्फूरद्रुचिर रत्न यष्ट्यान्वितो ॥
महा तिमिर नाशनः सुर नितम्बिनी निर्मितः ॥
सुवर्ण चषक स्थितः सघन सारवर्त्यान्वितः ॥
तव त्रिपुर सुन्दरिः स्फुरति देवि ! दीपोमुदे ॥१२॥
जाती सौरभ निर्भवं रुचिकरं शाल्योदनं निर्मलम् ॥
युक्तं हिङ्गुमरीच जीर सुरभि द्रव्यान्वितै र्व्यञ्जनैः ॥
पक्वान्नेन सपायसेन मधुना दध्याज्य संमिश्रितः ॥
नैवेद्यं सुरकामिनी विरचितं श्री चण्डिके ! त्वन्मुखे ॥१३॥
लवङ्ग कलिकोज्वलं बहुलनाग वल्ली दलं ॥
सजातीफल कोमलं सघनसार पूगी फलम् ॥
सुधा मधुरि माकुलं रुचिर रत्न पात्र स्थितं ॥
गृहाण मुख पङ्कजे स्फुरित गन्ध ताम्बूलकम् ॥१४॥
शरत्युभव चन्द्रमः स्फुरित चन्द्रिका सुन्दरम् ॥
दलत्सुरतरङ्गिणी ललित मौक्तिकाडम्बरम् ॥
गृहाण नव काञ्चन प्रभव दण्ड खण्डो ज्वलम् ॥
महा त्रिपुर सुन्दरि ! प्रकटमातपत्रं महत् ॥१५॥
मातस्त्वन्मुद मातनोतु सुभग स्त्रोभिः सदान्दोलितम् ॥
शुभ्रं चामरमिन्दु कुन्द सदृशं प्रस्वेद दुःखापहम् ॥
सद्यो गस्त्य वशिष्ठ नारद शुकव्यासादि वाल्मीकिभिः ॥
स्वे चित्ते क्रियमाण एव कुरुतां शर्माणि वेद ध्वनिः ॥१६॥

स्वर्गाङ्गणे वेणु मृदङ्ग शंख भेरी निनादैरुपगीयमाना ॥
कोलाहलैराकुलिता तवास्त विद्याधरी नृत्यकलासुखाय ॥
देवी भक्ति रस भावित वृत्ते प्रियतां यदि कुतोपि लभ्यते ॥
तत्र नौन्यमपि सत्फल मेकं जन्म कोटिभि रपीह-
नलभ्यम् ॥१७॥

एतैः षोड़शभिः पदैरुपचारोप कल्पितैः ॥
यः परां देवतां स्तौति सतेषां फल माप्नुयात् ॥

मङ्गलाचरणम्

हे रम्बं विधुशेखरं निजगुरोर्हृद्यंचरम्यं पदम् ॥
ध्यात्वा विघ्नभवाब्धि पोत गहनं स्मृत्वामहेशं परम् ॥
विद्वद्वृन्द मनो विनोद सरणिर्लक्ष्मणनारायणः ॥
व्याकुर्वेऽवुधबोधनाय लतिकां दुर्गार्चनायाः स्मृतिम् ॥१॥

गुरुभ्यो नमः ॥

मायां भवानीं जगदीश्वरीं त्वाम् ।
नत्वा सदा हेऽम्ब दयार्द्रचित्ते ॥
स्वतः प्रकाशार्चनदीपिकां वै ।
दुर्गास्मृतिं लोक हिताय कुर्वे ॥२॥

प्रणम्य चंडिका पदारविन्द युग्म- मादरात् ॥
करोति कोपि पूजन प्रयोग संग्रहं बुधः ॥३॥

अथ पूजा विधिं वक्ष्ये सर्व सौभाग्यदायिनीम् ॥
ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय ध्यात्वा स्वे मस्तके गुरुम् ॥४॥

तत्र साधकः प्रात रुत्थाय शय्यायामेव बद्ध पद्मासनः । कुल* वृक्षं प्रणम्य स्व शिरसि श्वेत सहस्र दल

---

*टि० कुल वृक्ष । श्लेष्मातकं करंजं च निम्बाश्वत्थ कदम्बकम् ॥ विल्वं वटं शाल तालं शाखोट खर्जरं तथा ॥ कुलवृक्ष समुद्दिष्टा इति वस्तुतः ॥

कमल कर्णिका मध्य वर्त्ति चंद्र मंडलान्तर्गत स्वगुरुंध्या-
येत् ॥ श्वेतं श्वेत विलेप माल्य वसनं वामेन रक्तोत्पलं
बिभ्रत्या प्रिययेतरेण तरसा श्लिष्टं प्रसन्नाननम् ॥
हस्ताभ्यामभयं वरं च दधतं शम्भुः स्वरूपं-परम् ॥
हाला हेलित लोचनोत्पलयुगं ध्यायेच्छिरस्थंगुरुम् ॥
इति ध्यात्वा ॥ मानसोपचारैः सम्पूज्य ॥ ॐ लं
पृथिव्यात्मकं गुरवे गंधं विलेपयामि नमः अंगुष्ठ
कनिष्ठाभ्यां ॥ ॐ हं आकाशात्मकं गुरवे पुष्पाणि
समर्पयामि नमः ॥ अंगुष्ठ अनामिकाभ्यां ॥ ॐ यं
वाय्वात्मने गुरवे धूपं अघ्रापयामि नमः ॥ अंगुष्ठ मध्य-
माभ्यां ॥ ॐ रं वन्ह्यात्मकं गुरवे दीपं दर्शयामि नमः ॥
अंगुष्ठ तर्जनीभ्यां ॥ ॐ वं अमृतात्मकं गुरवे नैवेद्यं
निवेदयामि नमः ॥ अंगुष्ठ अनामिकाभ्यां ॥ ॐ सं सोमा-
त्मकं गुरवे तांबूलं स० अमुकानन्दनाथ श्री पादुकायै परि-
कल्पयामि नमः॥ इति संपूज्य ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें
हसक्ष मल वरयूं सहखफ्रें सहज मलवरयीं अमुकानं
दनाथ अमुकी देव्यं वा श्री पादुकां पूजयामि नमः ॥
इति गुरु पादुका मंत्रं दशधा सप्तधा वा प्रजप्य जपं गुरो-
र्दक्षिण करे ॥ ॐ गुह्याति गुह्य गोप्तात्वं ग्रहाणास्मत्
कृतंजपं ॥ सिद्धिर्भवतु मे देव! त्वत्प्रसादान्महेश्वर! ॥१॥
इति समर्प्य ॥ ऐं अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येनचरा
चरम् ॥ तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥२॥
नमोस्तु गुरवे तस्मै इष्ट देव स्वरूपिणे ॥ यस्य वाग-
मृतं हन्ति विषं संसार संज्ञकम् ॥३॥ इति प्रणम्य ॥ स्तु-
वीत ॥ नमस्ते नाथ! भगवन्! शिवाय गुरुरूपिणे ॥

विद्यावतार संसिद्ध्यै स्वीकृतानेकविग्रहः ॥४॥ नारायण स्वरूपाय परमार्थैक रूपिणे ॥ सर्वज्ञान तमोभेद भानवे चिद्घनायते ॥५॥ स्वतन्त्राय दयाक्लृप्त विग्रहायशिवा-त्मने ॥ परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्य रूपिणे ॥ विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिणाम् ॥ प्रकाशिनां प्रकाशाय ज्ञानिनां ज्ञान रूपिणे ॥ पुरस्तात्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः ॥ सदामच्चित्तरूपेण विधेहि भवदा सनम् ॥ त्वत्प्रसादहं देव ! कृत कृत्योस्मि सर्वतः ॥ मायामृत्यु महा पाशाद्विमुक्तोस्मि शिवोस्मिच ॥ इति स्तुत्वा ॥ प्रातः प्रभृति सायांतं सायादि प्रातरं ततः ॥ यत्करोमि जगन्नाथ ! तदस्तु तव पूजनम् ॥ इति सर्वं गुरवेनिवेद्य ॥ तदाज्ञां गृहीत्वा तत्पाद स्खलितामृत-धारयाक्षालितनिर्मलमात्मानं विचिन्तयेत् ॥ अथ मूला धारस्थ चतुर्दल कमल कर्णिकान्तर्गत †त्रिकोण मध्य-स्थिताधोमुख स्वयम्भूलिंग वेष्टिनीं प्रसुप्त भुजगाकारां शंखावर्ताकारेण सार्द्ध त्रिवलयां तडित्कोटि प्रभां विस तंतुनीयसीं मूल विद्या प्रकृति भूतां कुडलिनीं* इष्ट देवता स्वरूपां कूर्च बीजेन त्रिकोणाग्निना सचेतनां कृत्वा सुषुम्णावर्त्मना द्वादशांतं नीत्वा ब्रह्म रंध्रस्थ सहस्त्र दल कमलस्थेन परम सदा शिवेन संयोज्य

---

† टि० तंत्रान्तरे ॥ रहस्यं परमाश्चर्यं त्रिकोणानांच संसृणु ॥ वाम रेखा भवेद् ब्रह्मा विष्णुर्दक्षिण रेखिका ॥ अधो रेखा भवेद्रु द्रोमात्रा साक्षात्सरस्वती ॥

* अंकुशा कुण्डली यातु कोटि विद्युल्लता कृतिः ॥ कुण्डली अंकुशाकारा मध्यशून्यं सदा शिवः ॥ जवा पावक संकाशा वाम रेखा वरानने ॥ शरच्चन्द्र प्रतीकाशा दक्षरेखा च मूर्तिमान् ॥

तत्र चन्द्र मंडलाद्विगलिदमृत धारया संतर्प्य ॥ तत्रैव तत्प्रभायां कुलगुरुं ध्यायेत् ॥ कुलामृत रसोल्लोल हृदया घूर्ण लोचनान् ॥ कुलालिङ्गन संभिन्न चूर्णिता-शेषतापसान् ॥ कुल शिष्यैः परिवृतान् पूर्णान्तः करणो-द्यतान् । वराभययुतान्सर्वान् दुर्गा तन्त्रार्थ वेदिनः ॥ इति ध्यात्वा ॥ ह्रीं श्रीं प्रल्हादानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं सकलानन्दनाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं कुमारानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं वसिष्ठानंदनाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं क्रोधानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं असुरानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं ध्यानानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं बोधानन्द नाथाय नमः ॥ ह्रीं श्रीं शुकानन्द नाथाय नमः ॥ इति ध्यात्वा ॥ ततः ऋष्यादि कर षडंग न्यास पूर्वकं हृदय कमले द्वादश दले कुंडलिनी मानीय दुर्गा रूपेण वक्ष्यमाण प्रकारेण ध्यात्वामानसैरुपचारैः संपूज्य ॥ ॐ महादेव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ इति गायत्रीमष्टोत्तर शता वृत्यष्टा विंशति धा दश धा वा प्रजप्य ॥ मूल (नवार्ण) मन्त्रं शतवारं प्रजप्य ॥ गुह्याति गुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं ॥ सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ! ॥ इति देव्या वामकरे जपंसमर्प्य ॥ स्तुत्वा नत्वा देव्याज्ञां-प्रार्थयेत् ॥ त्रैलोक्य चैतन्यमयी त्रिशक्ते हे विश्व मात-र्भवदाज्ञयैव ॥ प्रातः समुत्थायतव प्रियार्थं संसार यात्रा मनुवर्तयिष्ये ॥ इति प्रार्थ्य ॥ कुंडलिनीं पुनस्तेनैव पथा मूलाधारमानीय ॥ अहं देवि न चान्यो स्मि ब्रह्मै-वाहं न शोक भाक् ॥ सच्चिदानन्द रूपोहमात्मानमि

ति चिंतयेत् ॥ गुरु देवतात्मान मैक्यं*भावयन् ॥ ब्रह्मै-वास्मी ति मत्वा ॥ भूमिं प्रार्थयेत् ॥ ॐ समुद्र मेखले देवि ! पर्वत स्तन मंडले ॥ विष्णु पत्नी नमस्तुभ्यं पाद स्पर्शं क्षमस्व मे ॥ इति श्वासानुसारेण भूमौ पादं दत्वा वहिर्गत्वावश्यकं कर्म कृत्वा शुचि देवी गृहं गत्वा निर्माल्यमप सार्य प्रणम्याज्ञां गृहीत्वा स्नानार्थं तीर्थं गच्छेत् ॥ अथ स्नानम् ॥ नद्यादौ गत्वा नवार्णेन मृत्तिकयांगं विलिप्य मूल मुच्चरन् मलापकर्षणं कृत्वा-चम्य जलपूर्णं ताम्र पात्रन्तिल अक्षत जवापुष्पाणि निक्षिपेत् ॥ तेन संकल्पयेत् ॥ ॐ अद्येत्यादि एतन्मंत्र प्रतिबंधकाशेष दुरितक्षय पूर्वकं श्री चंडिका प्रीतये मन्त्र स्नानमहं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य ॥ जले त्रिकोण चक्रं विलिख्य ॥ ॐ गंगेच यमुने चैव गोदावरि सर स्वति ॥ नर्मदे सिंधुकावेरिजलेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ॥ इति मंत्रेण सूर्य मंडलादंकुश मुद्रया तीर्थान्यावाह्य ॥ अंगुलीभिः सप्त छिद्राणि सं रुध्या ॥ मूलविद्ययात्रि-र्निमज्य ॥ मूलान्त आत्म तत्वाय स्वाहा ॥ विद्या

---

* त्रैलोक्य चैतन्य मयादि देवि ! भवानि दुर्गे ! भवदाज्ञयै व ॥ प्रातः समुत्थाय त व प्रियार्थं संसार यात्रा मनुवर्तयिष्ये ॥१॥ जानामि धर्म्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्य धर्मं न च मे निवृत्तिः ॥ के नापि देवेन हृदिस्थितेन यथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि ॥२॥

* अंकुश मुद्रा का लक्षण। ऋजुमध्या मध्यपर्वा क्रान्ता तर्जन्यधोमुखी ॥ विज्ञेयांकुश मुद्रे यं कुञ्चितामध्य पर्वतः ॥

दक्ष मुष्टि गृहीतस्य वाम मुष्टेस्तु मध्यमाम् ॥ प्रसार्य तर्जन्या कुञ्चेत्सेयमंकुश मुद्रिका ॥

तत्वाय स्वाहा ॥ शिव तत्वाय स्वाहा ॥ इति त्रिराचम्य ॥ मूलेन कुंभ मुद्रयात्रिमूर्द्धिन जले नाभिषिंचेदिति स्नानम् ॥ अथ संध्या विधिः ॥ ततः श्वेत वाससी परिधाय ॥ ॐ मणि धरणि वज्रिणि महा प्रति सरे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥ इति शिखां बध्वा ॥ सिंदूरेण तिलकं कृत्वाचम्य ॥ मूलेन प्राणायामत्रयं विधाय ॥ ऋष्यादि षडंग न्यासं विधाय वाम हस्ते जल मादाय दक्ष हस्तेन पिधाय ॥ लं हं यं रं वं इति पंच भौतिक बीजैरभिमन्त्र्य शिरसि मन्त्रेणां गुल्यान्तर्गत तदुद कबिंदुभिर्मूलमुच्चरन् सप्तधा तत्र मुद्रयामूर्न्द्धि प्रोक्षणं कृत्वा जल रेखां दक्षिणे कृत्वा नासा मुपनीय वाम नासयाकृष्य देहान्तर्वर्ति समस्त पापं तेन प्रक्षा-ल्य कृष्ण वर्णंतज्जलं वामनासा पुटेन हस्त प्रविष्टं संचिन्त्य पुरः कल्पित वज्र पाषाणेत्रिः अस्त्राय फट् इति क्षिप्त्वा आचम्य मूलेन निःश्वसन् सूर्यांजलित्रयं दत्वा ॥ ॐ महा देव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो देवी प्रचो-दयात् ॥ इति गायत्री मष्टोत्तर शता वृत्यष्टा विंश-तिधा वाष्टधा वा प्रजपेदिति संध्या विधिः ॥ अथ तर्प णम् ॥ जले यंत्रं विभाव्य तर्पणीय देवता इहा याचि त्वावाह्य ॥ ॐ ब्रह्मा भैरव स्तृप्यताम् ॥ ॐ विष्णु भैरवस्तृप्यताम् ॥ ॐ रुद्र भैरवस्तृप्यताम् ॥ ॐ ह्सक्ष मलवर यूं स्वधा देव्यै वौषट् आनन्द भैरवोतृप्यताम् ॥ एतद्देव तर्पणम् ॥ अथ ऋषि तर्पणम् ॥ ॐ महादेवी काली तृप्यताम् ॥ ॐ महादेवी लक्ष्मी तृप्यताम् ॥ ॐ महादेवी सरस्वती तृप्यताम् ॥ ॐ महादेवा नन्द

नाथ स्तृप्यताम् ॥ ॐ त्रिपुरांबा तृप्यताम् ॥ ॐ भैरवा
नन्द नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ ब्रह्मानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥
ॐ पूर्णानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ वन्दिनाथानन्द
नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ चलच्चित्तानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥
ॐ चंचलानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ कुमारानन्द
नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ क्रोधानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥
ॐ वरदानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ स्मरदीपानन्द
नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ मायाम्बा तृप्यताम् ॥ माया
वत्यम्बा तृप्यताम् ॥ॐ विमला नन्द नाथस्तृप्यताम् ।
ॐ कुशलानन्द नाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ गोरक्षानन्द
नाथ तृप्यताम् ॥ ॐ भोज देवानन्द नाथ स्तृप्यताम् ॥
ॐ प्रजा पत्या नन्द नाथ स्तृप्यताम् ॥
ॐ मूलदेवा नन्दनाथस्तृप्यताम् ॥ ॐ विघ्न
देवानंदनाथस्तृप्यताम्॥ ॐ हुताशनानन्दनाथस्तृप्यताम् ॥
ॐ समयानन्दनाथस्तृप्यताम्॥ ॐ संतोषा नन्दनाथ स्तृप्य-
ताम् ॥ अथ पितृ तर्पणम् ॥ गुरु परमगुरुपरापरगुरु परमेष्ठि
गुरुनाद नाथ शब्दान्त स्वनाम्ना तर्पयेत् ॥ गंधादिभिर-
भ्यर्च्य ॥ मूलान्ते सांगां सपरिवारां सायुधां ब्रह्मा विष्णु
रुद्र सहितां श्री चंडिकां तर्पयामि नमः ॥ दशधा त्रिधा-
वा तर्पयेत् ॥ एवं संध्या तर्पणाशक्तावपि त्रिकालदेवीं
ध्यात्वा यथाशक्ति मूलं वा गायत्रीं जपेत् ॥ ततः ॥ ॐ
ह्रीं हंसः मार्तण्ड भैरवाय प्रकाश शक्तिसहिताय इद मर्घ्यं
स्वाहेति त्रिः सूर्यार्घ्यं दत्वा सूर्यमंडले देवीं विभाव्य
मूलमुच्चार्य उद्यदादित्य मंडल वर्तिन्यै शिव चैतन्य मय्यै
ब्रह्मा विष्णु रुद्र सहितायै चण्डिकायै इदमर्घ्यं स्वाहेति

मंत्रेण रक्त चन्दन जगपुष्प कुशजलाक्षत परिपूर्णेन ताम्रपात्रेण सूर्यमंडलस्थायै अर्घ्यंदेव्यै दत्वा गायत्रीं यथा शक्ति प्रजप्य गुह्येति मंत्रेण समर्प्य सूर्यमंडले देवीं विसर्जयेदिति संध्याविधिः ॥

॥ अथ पूजा विधिः ॥

यथा कामनया वस्त्र युग्मं परिधाय तिलकं चंदनादिना कृत्वा पूजागृह समीपमागत्य ॥ सूर्यः सोमोयमः कालोमह्। भूतानि पंच च ॥ एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः ॥ देवि ! त्वं प्राकृतं चित्तं पापाक्रांत मभून्मम ॥ तन्निः सारयचित्तान्मे पापं फट् फट् ते नमः ॥ इति मन्त्रेण पापोत्सादनं कृत्वा ॥ वज्रो दके हूं फट् स्वाहा ॥

इति मंत्रेण जलमानीय आसनमभ्युदयोपविश्य ॥ ॐ विशुद्धे सर्व पापानि शमयाशेष विकल्पानयनपहं इति मंत्रेण हस्तौ पादौ प्रक्षाल्य ॥ ॐ ह्रीं स्वाहेत्या चम्य ॥ शिखाबंधनम् कृतं चैतेनैव मंत्रेण विधासामान्यार्घ्यं स्थापयेत् ॥ यथा स्ववामे त्रिकोण वृत्त चतुरस्र मंडलं कृत्वा ॥ ॐ ह्रीं आधार शक्तये नमः ॥ इति संपूज्याधारं संस्थाप्य ॥ ॐ क्रः अस्त्रायफट् ॥ इतिपात्रं प्रक्षाल्य आधारे निधाय ॥ ॐ क्रां हृदयायनम इतिजलेन संपूर्य ॥ तीर्थान्यावाह्य ॥ ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ॥ नर्मदे सिंधु कावेरि जलेस्मिन्संनिधिं कुरु ॥ इति मंत्रेणांकुशमुद्रया सूर्यमंडलात्तीर्थान्यावाह्य ॥ ॐ मिति गंधादि निक्षिप्य ॥ वमिति धेनु मुद्रां दर्शयेदिति सामान्यार्घ्यः ॥ ततस्तेन जलेन पूजा गृह द्वारं प्रोक्ष्य द्वार देवताः पूजयेत् ॥ द्वारोर्द्ध्वे गं गणपतये नमः॥ वामेक्षं क्षेत्रपालाय

नमः ॥ दक्षे व्रां बटुकाय नमः ॥ अधः यां योगिनीभ्यो नमः॥ एवंक्रमेणऊर्द्ध्वे गं गंगायै नमः ॥ वामे यं यमुनायै नमः ॥ दक्षे श्री लक्ष्म्यै नमः ॥ अधः ऐं सरस्वत्यैनमः ॥ एवं पूर्वादि द्वाराणि पूजयेत् ॥ द्वारश्रि इदमर्घ्यं परिकल्पयामि ॥ ततो ॥ द्वारपादेव देवस्य द्वारं रक्षत यत्नतः ॥ निवार्य विघ्न संघातमित्या ज्ञा पारमेश्वरी ॥ इति देवता ज्ञांश्रावयित्वा वामांगं संकोचयन्देहलीं लंघयन्दक्ष पाद पुरः सरमंतः प्रविश्य ॥ ॐ अपः क्रामन्तु भूतानि पिशाचाः प्रेत गुह्यकाः ॥ ये चानिवसंत्यन्ये देवता भुवि संस्थिताः ॥ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः ॥ ये भूता विघ्न कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ ॐ सर्व विघ्नानुत्सारयोत्सारय हूं फट् स्वाहा ॥ एभिरभिमंत्रेण वामपार्ष्णिघातेनोद्ध्र्वोद्धतालत्रयेणनिमेषरहित दृष्ट्या च भौमांतरिक्ष दिव्यान्विघ्नानुत्सार्य ॥ अर्घ्य जलेन तं गृहं प्रोक्ष्य ॥ नैऋतकोणे वास्तुपुरुषाय नमः॥ ईशान कोणे दीपनाथाय नमः ॥ इति सपूज्य ॥ ॐ तीक्ष्ण दंष्ट्र महाकाय कल्पान्त दहनोपम ॥ भैरवाय नमस्तुभ्यं मनुज्ञां दातुमर्हसि ॥ इति भैरवाज्ञां गृहीत्वा ॥ ॐ रक्ष रक्ष हुंफट् स्वाहेति भूमिं परिषिंच्य ॥ ॐ पवित्र हूं हूंफट् स्वाहेति भूमिमभि मंत्र्य ॥ ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हूंफट् स्वाहेति भूमौ त्रिकोणमंडलं कृत्वा ॐ *ह्रीं आधारशक्ति

* प्रथ में त्रिकोण के ऊपर ॐ कूर्मासनायनमः ॥ ॐ ह्रीं आधार शक्ति कमलासनाय नमः ॥ ॐ पृथिव्यै नमः ॥ गंधाक्षतः पुष्प से पूजन करके क्रम से तीन आसन बिछाना १ कुशासन २ कृष्णाजिन ३ कंबल फिर प्रत्येक के ऊपर विष्टर रख कर तीन नामों से पूजन करना ॥ ॐ अनन्तासनाय नमः ॥ ॐ विमलासनाय नमः ॥ ॐ पद्मासनायनमः ॥

(६४) वारं जपन् वायुं स्तंभयित्वा ॥ दक्षिण नासया द्वात्रिंशद्वार ३२ जपन् रेचये दित्येकः ॥ पुनस्तेनै व मानेन दक्षिण नासापुटं प्रपूर्य कुंभयित्वा वामेन रेचये दिति द्वितीयः ॥ पुन राद्यस्तृ तीयः ॥ मूलेन चैदेकेन पूरकं चतुर्भिः कुंभकं द्वाभ्यां रेचक मित्येवं प्राणायामं विधाय॥

* भूत शुद्धिं कुर्यात् ॥

यथा हूंकारेण मूलाधारात्कुंडलिनीमुत्थाप्य जीवात्मना संयोज्य हंस इति मंत्रेण परमात्मनिविलापयेत् ॥ ततः पादादि जानुपर्यन्तं स्थितां पृथ्वीं जान्वादि नाभि पर्यन्तं स्थितास्वप्सु प्रविलाप्य ताः ॥ नाभ्यादि हृदयान्त स्थिते वन्हौ तं च हृदयादिभ्रू मध्यांत प्रकृतौ तां च ब्रह्मणि विलापयेत् ॥ ततः पुरुष निभं पापमनादि भवसंचितं ॥ ब्रह्महत्या शिर स्कन्धं स्वर्णस्तेय भुजद्वयम् ॥ सुरापान हृदायुक्तं गुरुतल्प कटिद्वयम् ॥ तत्संयोगिपद द्वंद्व मंग-प्रत्यंग पातकम् ॥ उपपातक रोमाणं रक्तश्म श्रुविलोचनम् ॥ खड्गचर्म धरं पापमंगुष्ठ परिमाणकम् ॥ अधोमुखं कृष्णवर्णं वाम कुक्षौ विचिंतयेत् ॥ इति पाप पुरुषं विचिंत्य यमिति बीजेन षोडशवार मावृत्तेन वाम नासया वायुमापूर्य नाभौ संयोज्य तत्र यं तं संचिंत्य सपापं देहं विशोष्य रमिति चतुष्षष्ठि वारमा वृतेनबीजेन कुंभक प्रयोगेन मूलाधारे संयोज्य रं संचिंत्य सपापं देहं

---

* भूत शुद्धौ ॥ सर्वासु वाह्यपूजासु अन्तः पूजा विधीयते ।
अन्तः पूजा महेशानि ! वाह्य कोटि फलं लभेत् ॥ १ ॥
भूतशुद्धि लि पिन्यासौ विनायस्तु प्रपूजयेत् ॥
विपरीत फलं दद्यादभक्त्या पूजने यथा ॥ २ ॥

भस्मान्तं संदह्य पुनर्यमिति बीजेन द्वात्रिंशद्वार मावृत्तेन दक्षिण नासया पापपुरुष भस्मं रेचयेत् ॥ ततो वमिति बीजजपात् ललाटे चन्द्राग्मातृका वर्णमयीममृत वृष्टिं निपात्य भस्माप्लाव्य न्यासक्रमेणावयवान् निष्पाद्य ॥ लमिति जपाद्दृढीकृत्य ॥ परमात्मनः प्रकृतिं तस्याः महतत्वं ततोहंकारं तस्मादाकाशं ततो वायुं तस्मात्तेजस्तस्माज्जलं तस्मात्पृथिवीं निर्गम्य स्व स्व स्थाने स्थापयित्वा ब्रह्मरंध्रस्थ परमात्म सकाशात् सोहमिति मंत्रेण जीवात्मानं प्रदीप कलिकाकारं कुण्डलिनी द्वार हृदय कमल मानीय कुंडलिनीं मूलाधारे स्थापयित्वा स्वशरीरं निरस्त समस्त किल्विषं देवताराधन योग्यं विभावयेदितिभूतशुद्धिः ॥ एवंभूत शुद्धिं कृत्वा स्वशरीरे चण्डिकायाः प्राणान्प्रतिष्ठापयेत् ॥

अथ यामलोक्त भूतशुद्धिः प्रारभ्यते ।

भूतशुद्धि लिपिन्यासौ विना यस्तु प्रपूजयेत् । विपरीत फलंदद्यादभक्त्या पूजने यथा ॥ १ ॥

ॐ सूर्यः सोमो यमः कालः संध्या भूतानि पंच च ॥ एते शुभाशुभस्येह कर्मणो मम साक्षिणः ॥ १ ॥ भो देव! प्राकृतं चित्तं पापाक्रांतमभून्मम ॥ तन्निःसारय चित्तान्मे पापं तेस्तु नमो नमः ॥ २ ॥ इति प्रार्थ्य स्वदक्षिणभागे ॐ गुं गुरुभ्योनमः ॥ स्ववाम भागे ॐ गं गणपतये नमः ॥ इति नत्वा भूतशुद्धिं कुर्यात् ॥ तथा च कुंभक प्राणायामे मूलाधारात् कुंडलनीं परदेवतां विसतंतुनिभां समुत्थाप्य ब्रह्मरंध्रगतांस्मृत्वा हृदयस्थं जीवं प्रदीप कलिकाकारं गृहीत्वा सुषुम्णामार्गेण ब्रह्मरंध्रं गत्वा हं सः सोहँ इति मंत्रेण जीवं ब्रह्मणि संयोजयेत् ॥ ततः पादादि जानुपर्यन्तं चतुष्कोणं वज्रलांछितं स्वर्णवर्णं पृथ्वीमंडलं (ॐ लं) इति भूबीजाढ्यं स्मरेत् ॥ १ ॥ जान्वादि नाभि-

॥ अथ स्व प्राणप्रतिष्टा प्रकारः ॥

ॐ अस्य स्व प्राणप्रतिष्ठामंत्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा- ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्दैवता

पर्यन्तं अर्द्धचन्द्राकारं पद्मद्वयाङ्कितं श्वेतवर्णं अपांस्थानं सोममंडलं "ॐ वं" इति वरुणबीजाढ्यं स्मरेत् ॥ २ ॥ नाभ्यादि हृदयपर्यन्तं त्रिकोणं स्वस्तिकांकितं रक्तवर्णमग्निमंडलम् "ॐ रँ" इति वन्हि बीजाढ्यं स्मरेत् ॥ ३ ॥ हृदयादि भ्रू मध्यपर्यन्तं वृत्तं षड्बिन्दुलांछितं धूम्राभं वायुमंडलं "ॐ यँ" बीजाढ्यंस्मरेत् ॥ ४ ॥ भ्रू मध्यादारभ्यब्रह्मरंध्रान्तं वृत्तं स्वच्छमनोहरमाकाश- मंडलं "ॐ हँ" बीजाढ्यं स्मरेत् ॥ ५ ॥ एवं भूतगणं स्मृत्वा ततः पूर्वोक्त मध्य (मंडले) पादेन्द्रियं १ गगनं २ घ्राणं ३ गंधः ४ ब्रह्मा ५ निवृत्तिः ६ समानः ७ गंतव्यदेशः ८ च एवमष्टौपदा- श्चिन्त्याः ॥ १ ॥ जलमध्ये (मंडले) हस्तेन्द्रिय १ ग्रहण २ ग्राह्य ३ रसना ४ रस ५ विष्णुः ६ प्रतिष्ठो ७ दानाः ८ ध्येयाः ॥ २ ॥ तेज (मंडले) मध्ये वायु १ विसर्ग २ विसर्जनीय ३ चक्षु ४ रूप ५ शिव ६ विद्या ७ व्याना ८ ध्येयाः ॥ ३ ॥ वायुमंडले- उपस्था १ नन्द २ स्त्री ३ स्पर्शन ४ स्पर्श ५ ईशान ६ शान्त्यु ७ पानाः ८ ध्येयाः ॥ ५ ॥ आकाशमंडले वाक् १ वक्तव्य २ वदन ३ श्रोत्र ४ शब्द ५ सदाशिव ६ शान्त्यतीताः ७ प्राणाः ८ इत्यष्टौ चिन्त्याः ॥ ५ ॥ एवं भूतानि संचिन्त्य पूर्वं पूर्वं कार्यस्यो त्तरं कारणे विलापनं ब्रह्मपर्यन्तंकार्यम् ॥ तथा च—ॐ लँ हुँ फट् इत्यनेन पंचगुणां पृथ्वीमप्सु उपसंहरामि इति जले भुवं विलापयेत् ॥ १ ॥ ॐ वँ हुँ फट् । इति चतुर्गुणा अपोग्नौ उपसंहरामि ॥ इति अपश्रग्नौ विलापयेत् ॥ ॐ रँ हुँ फट् इति त्रिगुणां तेजो वायावुपसंह- रामि इति वन्हि वायौ विलापयेत् ॥ ३ ॥ ॐ यँ हुंफट् इति द्विगुणं वायुमाकाश उपसंहरामि इति वायुमाकाशे विलापयेत् ॥ ४ ॥ ॐ हँ हुं फट् इत्येकगुणमाकाशमहंकार उपसंहरामि ॥ इत्याकाशमहंकारे विलापयेत् ॥ ५ ॥ ॐ ॐ अहंकारं महत्तत्व उपसंहरामि ॥ इत्यहंकारं महत्तत्वे विलापयेत् ॥ ६ ॥ ॐ मह- तत्वं प्रकृतावुपसंहरामि ॥ इतिमहत्तत्वं प्रकृतौ विलापयेत् ॥

आँवीजं ह्रींशक्तिः क्रों कीलकं स्वशरीरे चंडिका देवता प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः॥ अथ ऋष्यादिन्यासः ॥ॐ

---

७ ॥ ॐ प्रकृतिमात्मन्युपसंहरामि ॥ इत्यनेन मायामात्मनि विलापयेत् ॥ ८ ॥ एवं शुद्धसंच्चिन्मयो भूत्वा पापपुरुषं चिन्तयेत् ॥ तथा च ॥ वासनामयं वामकुक्षिस्थितं कृष्णमंगुष्ठपरिमाणकं । ब्रह्महत्या शिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकं ॥ मदिरापान हृदयं गुरुतल्प कटीयुतं । तत्संसर्गि पदद्वंद्व मुपपातक मस्तकं खड्गचर्मधरं दुष्टमधोवक्त्रं सुदुःसहमेवं पापपुरुषं चिन्तयित्वा पूरकप्राणायामे "ॐ यँ" इति वायु वीजेन द्वात्रिंशद्वारं (३२) षोडश (१६) वारं वा आवर्त्तितेन पापपुरुषं शोषयेत् ॥ १ ॥ ततः स्वशरीरयुतं पापं कुंभके "ॐ रँ" इति वन्हिवीजेन चतुष्षष्टि (६४) द्वात्रिंशद (३२) वारमावर्त्तितेन तदुत्थाग्निना दहेत् ॥ २ ॥ ततो रेचक प्राणायामे ॐ यँ" इति वायुवीजेन षोड़श वारं अष्ट वारं वा जपित्वा दक्षिणनाड्या तद्भस्मं स्वशरीराद्वहिः रेचयेत् ॥ ३ ॥ ततो देहोत्थं भस्म "ॐ वँ" इत्युच्चारितेन सुधावीजेन तदुत्थामृतेन संप्लाव्य पश्चात् "ॐ लँ" इति भू वीजेत तद्भस्म घनीभूतं पिंडं कृत्वा कनकांडवत् भावयेत् ॥ ४ ॥ ततः "ॐ हँ" इति आकाश वीजं जपन् तत्पिंडं मुकुराकारं भावयित्वा तस्यमूर्द्धादि नखान्ता अवयवाः मनसा रचनीयाः ॥ ५ ॥ ततः पुनरपि सृष्टिमार्गेण ब्रह्मणः सकाशात् आकाशादीनि भूतान्युत्पादयेत् ॥ तथा च ब्रह्मणः प्रकृतिः १ प्रकृतेर्महत् २ महतोऽहँकारः ३ अहंकारादाकाशः ४ आकाशाद्वायुः ५ वायोरग्निः ६ अग्नेरापः ७ अद्भ्यः पृथ्वी ८ पृथिव्या ओषध्यः ९ ओषधीभ्योऽन्नम् १० अन्नाद्रेतः ११ रेतसः पुरुषः १२ इत्युत्पाद्यः॥ ॐ हँ सः सोहम् इति मंत्रेण ब्रह्मणैकं भूतं जीवं स्वहृदयांवुजे संस्थाप्य कुंडलिनीं मूलाधारगतां स्मरेत् ॥ अथध्यानम् ॥ ॐ रक्ताम्भोधिस्थपोतो ल्लसदरुणसरोजाधिरूढाकराब्जैः पाशं कोदंडमिक्षूद्भवमथचाप्यंकुशं पंचवाणान् ॥ विभ्राणा सृक्कपालं त्रिनयनलसितापीनवक्षोरुहाढ्या । देवी बालार्कवर्णा भवतुसुखकरी प्राणशक्तिः परानः ॥१॥ इति भूतशुद्धिः॥

ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि ॥ॐ ऋग्यजुस्सामानि छन्दोभ्यो नमः मुखे। ॐ प्राणशक्त्यैनमो हृदि॥ ॐ आँ वीजाय नमो गुह्ये। ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः॥ ॐ क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे। इति ऋष्यादि न्यासः॥ अथ करन्यासः॥ ॐ ङं कंखंघंगं नाभौ वाय्वग्निवाभूभ्यात्मने अंगुष्ठाभ्यान्नमः॥ (हृदयायनमः) ॐञं चंछंभंजं शब्द स्पर्श रूप रस गंधात्मने तर्जनीभ्यान्नमः॥ (शिरसे स्वाहा) ॐ णं ठं ढं डं श्रोत्र त्वङ् नयन जिह्वा प्राणात्मने मध्यमाभ्यां नमः (शिखायैवषट्)॥ ॐ नंतंथंधंदं वाक्पाणिपायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यान्नमः॥ (कवचायहुँ) ॐमंपफंभंवं वक्तव्यादान गमन विसर्गानन्दात्मने कनिष्ठकाभ्यांनमः॥ (नेत्र त्रयायवौषट्) ॐ शंयंरंवंलंहं षंत्रंसंलं वुद्धिमनो हंकारचित्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्रायफट्) इति षडंग न्यासः एवं हृदयादि कर षडंग न्यासान् कृत्वा नाभेरारभ्य पादान्तम् (आँ) इतिपाश वीजं स्मरेत्॥ हृदयादारभ्य नाभ्यन्तम् (ह्रीं) इतिशक्ति वीजं न्यसेत् ॥२॥ मस्तकादारभ्य हृदयान्तम् (क्रों) इति सृणि वीजं स्मरेत् ॥३॥ ॐयँ त्वगात्मने नमः ॐ रँ असृगात्मने नमः॥ ॐ लँ मांसात्मने नमः॥ ॐ वं मेदात्मने नमः॥ ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः॥ ॐ गं मज्जात्मने नमः॥ ॐ सं शुक्रात्मनेनमः॥ ॐ हौं ओजात्मने नमः॥ ॐ हं प्राणात्मने नमः॥ ॐ सं जीवात्मने नमः॥ इति दृष्ट्वा हृदि विन्यसेत्॥ ॐ यंरं लंवंशंषंसंहंलंक्षं इति मूर्द्धादि चरणावधि व्यापकं कुर्यात् ॥४॥ ततः ओं मंडकादि परतत्वांत पीठदेवताभ्यो

नमः ॥१॥ ॐ जयादि शक्तिभ्यो नमः ॥२॥ इति नत्वा ॥ ॐ आँ ह्रीं क्रों पीठाय नमः ॥ इति पीठे प्राणशक्तिंदेवीं ध्यायेत् ॥ ध्यानम् ॥ ॐ पाशंचापः सृक्कपाले शृणिषू-ण्कूलं हस्तैर्विभ्रतीं रक्तवर्णाम् । रक्तोदन्वत्पोतरक्तांबुज-स्थां देवीं ध्याये प्राणशक्तिं त्रिनेत्रां ॥ इतिध्यात्वा हृदि करं निधाय ॥ ॐ आं ह्रीं क्रों यंरंलंवंशंषंसं हौं हंसः ॐ ममशरीरे चण्डिका देवतायाः प्राणा इह स्थितः (प्राणाः) ॥२॥ ॐ आं क्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हं सः ॐ मम शरीरे चण्डिका देवतायाः जीव इह स्थितः (जीवः) ॐ आं ह्रीं क्रों यँरँलंवंशंषंसं हौं हंसः ॐ मम शरीरे चण्डिका देवतायाः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्र जिह्वा घ्राण पाद पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ॥३॥ इति वार त्रयेण स्वशरीरे चण्डिका देवतायाः प्राणान् प्रतिष्ठाप्य ॥ ततः ॐ इति प्रणवेन १५ पञ्चदशावृत्तिं कृत्वा अनेन मम देहाथा चण्डि-कायाः गर्भाधानादि पञ्चदश संस्कारान्संपादयामि ॥ एवं प्राणान्प्रतिष्ठाप्य ॥ देवी भूत्वा देवींयजेत् ॥ चण्डिकारूपमात्मानं भावयेदितिप्राणप्रतिष्ठा ॥

अथ अन्तरमातृका* न्यासः ॥

अथान्तरमातृका न्यास मन्त्रस्य ब्रह्मऋषिः गायत्री-छन्दः मातृकासरस्वतीदेवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः क्षं कीलकं अखिलाप्तये न्यासे विनियोगः ॥

*—टि० भविष्ये ॥ ना देवी कीर्तये देवीं नादेवी तां समर्चयेत् ॥ न्यासात्तदात्मकोभूत्वा देवोभूत्वा तु तं यजेत् ॥ १ ॥ आग्नेये ॥ शक्त्यादिः शक्ति पूजनात् ॥ शक्ति पूजनात् शक्त्यादि पूजनात् ॥

इति जलं भूमौ निक्षिप्य प्राणायामं कुर्यात् ॥ तथा च इड़या ॥ अइउऋऌएऐ ओ औ अं अः एभिःस्वरैः पूरयेत् ॥ पुनः कुचुटुतुपु इति पंचवर्गकेन कुंभयेत् ॥ पुनः यरलवशषसह एभिरष्टवर्णैः रेचयेत् ॥ इति प्राणायामं कृत्वा ऋष्यादि न्यासं कुर्यात् ॥ तथा च ॥ ॐ अं ब्रह्मणेऋषये नमः आंशिरसि ॥ ॐ इं गायत्रीछन्दसे नमः ईं मुखे ॥ ॐ उँ सरस्वती देवतायै नमः ऊं हृदये ॥ ॐ एं हलभ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं गुह्ये ॥ ॐ ओं स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः औं पादयोः ॥ ॐ अं क्षं कीलकाय नमः अः सर्वाङ्गे ॥ इति ऋष्यादि न्यासः ॥ ॐ अं कंखंगंघंङं आँ अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ इं चंछंजंझंञं ईं तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ उं टंठंडंढंणं ऊं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ एंतंथंदंधंनं ऐं अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ओं पंफंबंभंमं औं कनिष्ठकाभ्यां नमः ॥ ॐ अं यंरंलंवंशंषंसंहंलंक्षं अः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इति करन्यासः । एवं हृदयादि ॥ ॐ अं कं ५ आं हृदयाय नमः ॥ ॐ इं चं ५ ईं शिरसे स्वाहा ॥ ॐ उं टं ५ ऊं शिखायैवषट् ॥ ॐ एं तं ५ ऐं कवचायहुँ ॥ ॐ ओं पं ५ औं नेत्र त्रयायवौषट् ॥ ॐ अँ यँरँलँवँशँषँसँहँलँक्षँ अः अस्त्रायफट् ॥ इति हृदयादिन्यासः ॥ ततः कण्ठस्थ षोडष दल पद्मे (ॐ अं नमः एवं क्रमेण सर्वत्र) ॐ आं इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ ऌँ ॡँ एं ऐं ओंऔंअँअः इति षोडषस्वरान्न्यसेत् ॥ पुनः हृदिस्थ द्वादशदले ॐ कँ नमः एवँ खंगंघंङं चंछंजंझंञं टंठं नमः ॥ इतिद्वादशवर्णान् विन्यसेत् ॥ ततः नाभौ

दशदले—ॐ डं नमः इति एवं ढंणंतंथंदंधंनं पंफं नमः इति दशवर्णान्न्यसेत् ॥ तदधोलिंगे षड्दले—ॐ वं नमः एवं ॐ भंमंयंरंलं इति षड्वर्णान् विन्यसेत् ॥ आधारे (गुदे) चतुर्दले—ॐ वं नमः एवं शंषंसं इति चतुर्वर्णान्न्यसेत् ॥ पुनः ललाटे द्विदले—ॐ हं नमः ॐ क्षं नमः द्वौवर्णौ न्यसेत् ॥ इति न्यासं कृत्वा ध्यायेत् । आधारे लिंगनाभौ प्रकटित हृदये तालुमूले-ललाटे द्वेपत्रे षोडशारे द्विदश दले द्वादशार्द्धचतुष्के ॥ वासान्तेवालमध्ये डफकरसहिते कंठदेशेस्वराणां हंसंत-त्वार्थं युक्तं सकल दलगतं वर्णरूपं नमामि ॥ इत्यंतर्मातृकान्यासः ॥

अथ वहिर्मातृका न्यासः ॥

जपार्थं सर्वदेवानां विन्यासे च लिपेर्विना ॥ कृतेतद्विफलं विद्यात्तदादौतु लिपिंन्यसेत् ॥ ॐ अस्यश्री वहिर्मातृकान्यासमंत्रस्य ब्रह्माऋषिः गायत्रीछन्दः मातृका सरस्वती देवीदेवता हलोबीजानि स्वराः शक्तयः क्षं कीलकं अखिलाप्तये न्यासे विनियोगः । प्राणायामं-कुर्याद् ॥ तथा च इड़या अ इ उ ऋ लृ ए ओ अं अः एभिः स्वरैः पूरयेत् ॥ पुनः कु चु टु तु पु एभिः पंचवर्गान् कुम्भयेत् ॥ पुनः अष्टभिः । य र ल व श ष स ह आदिना रेचयेत् । इति प्राणायामं कृत्वा ऋष्यादि-न्यासं कुर्यात् ॥ तथा च ॐ अं ब्रह्मणे ऋषये नमः आं शिरसि ॥ ॐ इं गायत्रीछन्दसे नमः ईं मुखे ॥ ॐ उं सरस्वती देवतायै नमः ऊं हृदि ॥ ॐ एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं गुह्ये ॥ ॐ ओं स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो

नमः औं पादयोः ॥ ॐ अं क्षं कीलकाय नमः अः सर्वांगे ॥ इति ऋष्यादिन्यासः ॥ ॐ अं कं ५ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः, हृदयाय० ॥ ॐ इं चं ५ ईं तर्जनीभ्यां० शिरसे स्वाहा ॥ॐ उं टं ५ ऊं मध्यमाभ्यां० शिखायैवषट् ॥ ॐ एं तं ५ ऐं अनामिका० कवचायहुँ ॥ ॐ ओं पं ५ औं कनिष्ठकाभ्यां० नेत्र त्रयाय वौषट् ॥ ॐ अं यंरंलंवंशंषं- संहंलंक्षं अः करतल करपृष्ठाभ्यां०, अस्त्रायफट् ॥ मृगवालं वरं विद्यामक्ष सूत्रं दधत् करैः ॥ माला विद्या लसद्धस्तां वहन् ध्येयः शिवो गिरः ॥ ततः वहिर्मातृकान्यासं कुर्यात् ॥ ॐ अं नमः शिरसि ॥ ॐ आं नमः मुखे । ॐ इं नमः दक्षिण नेत्रे ॥ ॐ ईं नमः वामनेत्रे ॥ ॐ उं नमः दक्षिण कर्णे ॥ ॐ ऊं नमः वामकर्णे ॥ ॐ ऋं नमः दक्षिणनासापुटे ॥ ॐ ॠं नमः वामनासा पुटे ॥ ॐ लृं नमः दक्षिणकपोले ॥ ॐ लॄं नमः वामकपोले ॥ ॐ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे ॥ ॐ ऐं नमः अधरोष्ठे ॥ ॐ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ ॥ ॐ औं नमः अधोदंतपंक्तौ ॥ ॐ अं नमः मूर्द्धि्न ॥ ॐ अः नमः मुखवृत्ते ॥ ॐ कं नमः दक्षिण बाहुमूले ॥ ॐ खं नमः द० कूर्परे ॥ ॐ ॐ गं नमः द० मणिबंधे ॥ ॐ घं नमः द० हस्तांगुलिमूले ॥ ॐ ङं नमः द० हस्तांगुल्यग्रे ॥ ॐ चं नमः वाम बाहु मूले ॥ ॐ छं नमः वा० कूर्परे ॥ ॐ जं नमः वा० मणिबंधे ॥ ॐ झं नमः वा० हस्तांगुलिमूले ॥ ॐ ञं नमः वामहस्तांगुल्यग्रे ॥ ॐ टं नमः दक्षिण पाद मूले ॥ ॐ ठं नमः द० जानुनि ॐ डं नमः द० गुल्फे ॥ ॐ ढं नमः द० पादांगुलिमूले ॥

ॐ णं नमः द० पादांगुल्यग्रे ॥ ॐ तं नमः वामपाद-मूले ॥ ॐ थं नमः वाम जानुनि ॥ ॐ दं नमः वाम गुल्फे ॥ ॐ धं नमः वा० पादांगुलिमूले ॥ ॐ नं नमः वा० पादांगुल्यग्रे ॥ ॐ पं नमः दक्षिण पार्श्वे ॥ ॐ फं नमः वाम पार्श्वे ॥ ॐ बं नमः पृष्ठे ॥ ॐ भं नमः नाभौ ॥ ॐ मं नमः उदरे ॥ ॐ यं त्वगात्मनेनमः हृदि ॥ ॐ रं असृगा-त्मनेनमः दक्षांसे ॥ ॐ लं मांसात्मनेनमः ककुदि ॥ ॐ वं मेदात्मनेनमः वामांसे ॥ ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्षहस्तांतम् ॥ ॐ षं मज्जात्मनेनम हृदयादि वामहस्तांतम् ॥ ॐ सं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्षपा-दान्तम् ॥ ॐ हं आत्मने नमः हृदयादि वाम पादान्तम् ॥ ॐ ळं परमात्मने नमः जठरे ॥ ॐ क्षं प्राणात्मने नमः मुखे ॥ इति विन्यस्य ॥

॥ अथ ध्यानम् ॥

पचाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोः पत्संधिवक्षस्थलां भास्वन्मौलिनिबद्ध चन्द्रशकलामापीनतुंगस्तनीम् ॥ मुद्रामक्ष गुणंसुदाढ्यं कलशंविद्यां च हस्तांबुजै र्बिभ्राणां-विशद प्रभां त्रिनयनांवाग्देवतामाश्रये ॥ १ ॥

इति वहिर्मातृकान्यासः ॥

अथ सृष्टिन्यास क्रमः

तत्र तु विसर्गान्वितः प्रणवपुटितो वा माया लक्ष्मी वीजपुटितो वा वाग्भवाद्योवा न्यस्तव्यः ॥ ध्यानम् ॥ पञ्चाशद्वर्णैर चिताङ्गभागां धृतेन्दु खण्डा कुमुदावदा-ताम् ॥ वराभये पुस्तकमक्षसूत्रं भजेगिरं संदधतीं

त्रिनेत्राम् ॥ १ ॥ तत्र वाग्भवाद्यो यथा[1] ऐं अं नमः ललाटे ॥ ऐं आं नमः मुखवृत्ते ऐं इं नमः दक्ष नेत्रे । ऐं ईं नमः वाम नेत्रे ॥ ऐं उँ नमः दक्ष कर्णे ॥ ऐं ऊं नमः वाम कर्णे ॥ ऐं ऋं नमः दक्ष नासायां ॥ ऐं ॠं नमः वाम नासायां ॥ ऐं ऌं नमः दक्ष गंडे ॥ ऐं ॡं नमः वाम गंडे ॥ ऐं एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे ॥ ऐं ऐं नमः अधरोष्ठे ॥ ऐं ओं नमः ऊर्ध्व-दन्तपंक्तौ ॥ ऐं औं नमः अधोदन्तपंक्तौ ॥ ऐं अं नमः मूर्द्धिन ॥ ऐं अः नमः मुखे ॥ ऐं कं नमः द० बा० मूले ॥ ऐं खं नमः द० कूर्परे ॥ ऐं गं नमः द० मणिबंधे ऐं घं नमः द० हस्तांगुलि मूले ॥ ऐं ङं नमः द० हस्तांगुल्यग्रे ॥ ऐं चं नमः वाम बाहु मूले ॥ ऐं छं नमः वाम कूर्परे ॥ ऐं जं नमः वाम मणिबंधे ॥ ऐं झँ नमः वाम हस्तांगुलि मूले ॥ ऐं ञं नमः वाम हस्तांगुल्यग्रे ॥ ऐं टं नमः दक्षिणपाद मूले ॥ ऐं ठं नमः दक्षिण जानुनि ऐं डं नमः दक्षिण गुल्फे ॥ ऐं ढं नमः द० पा० गुलि मूले ॥ ऐं णं नमः द० पा० गुल्यग्रे । ऐं तं नमः वाम पाद मूले ॥ ऐं थं वाम जानुनि ॥ ऐं दं नमः वाम गुल्फे ॥ ऐं धँ नमः वा० पा० गु० मूले ॥ ऐं नं वाम पादां-गुल्यग्रे ॥ ऐं पं नमः दक्षिण पार्श्वे ॥ ऐं फं नमः वाम पार्श्वे ॥ ऐं बं नमः पृष्ठे ॥ ऐं भं नमः नाभौ ॥ ऐं मं नमः उदरे ॥ ऐं यं त्वगात्मने नमः हृदि ॥ ऐं रं असृ-गात्मने नमः दक्षांसे ॥ ऐं लं मांसात्मने नमः ककुदि ॥ ऐं वं मेदात्मने नमः वामांसे ॥ ऐं शं अस्थ्यात्मने नमः

---

[1] वीर चूड़ामणि तन्त्रानुसारतः

हृदयादि दक्ष भुजान्तम् ॥ ऐं षं मज्जात्मने नमः हृदयादि वाम भुजान्तम् ॥ ऐं सं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्ष पादान्तम् ॥ ऐं हं आत्मने नमः हृदयादि वाम पादान्तम् ॥ ऐं लं परमात्मने नमः हृदयादि मस्तकान्तम् ॥ इति सृष्टिक्रम न्यासः ॥

अथ स्थिति न्यासः ॥ ऋषिश्छन्द पूर्ववत् ॥

ध्यानम् ॥ सिंदूरकान्ति मसिताभरणां त्रिनेत्रां विद्याक्षसूत्र मृगपोतवरंदधानां ॥ पार्श्वस्थितांभगवतीमपि कांचनांगीं ध्याये कराब्जधृत पुस्तक वर्णमालाम् ॥ ॐ टं ठं डं नमः ललाटे ॥ ॐ टं ठं डं नमः मुख वृत्ते ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्ष नेत्रे ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम नेत्रे ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्षिण कर्णे ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम कर्णे ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्षनासायां ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम नासायां ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्षिण गण्डे ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम गण्डे ॥ टं ठं डं नमः ऊर्ध्वौष्ठे ॥ ॐ टं ठं डं नमः अधरोष्ठे ॐ टं ठं डं नमः ऊर्ध्व दन्त पंक्तौ ॐ टं ठं डं नमः अधो दन्त पंक्तौ ॥ ॐ टं ठं डं नमः शिरसि ॥ ॐ टं ठं डं नमः मुखे ॥ ॐ टं ठं डं नमः जिह्वाग्रे ॥ ॐ टं ठं डं नमः कण्ठ देशे ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्ष बाहु मूले ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्ष कूर्परे ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्षिण मणि बंधे ॥ ॐ टं ठं डं नमः द० ह० गु० मूले ॥ ॐ टं ठं डं नमः द० ह० गुल्यग्रे ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम बाहु मूले ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम कूर्परे ॥ टं ठं डं नमः वाम मणि बन्धे ॥ ॐ टं ठं डं नमः वाम हस्तांगुल्यग्रे ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्ष पाद मूले ॥ ॐ टं ठं डं नमः दक्ष जानुनि ॥ ॐ टं ठं डं नमः

विनियोगः ॥ उों प्रजापति ऋषये नमः शिरसि । उों गायत्री छन्दसे नमः मुखे । उों श्री मातृका शारदा देवतायै नमः हृदि । उों हल्भ्योबीजेभ्यो नमः गुह्ये । उों स्वरेभ्योशक्तिभ्यो नमः पादयोः ॥ उों विनियोगाय नमः सर्वांगे ।

॥ कर न्यासः ॥

उों अं उों आं अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदयाय नमः)
उों इं उों ईं तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा)
उों उं उों ऊं मध्यमाभ्यां नमः (शिखायैवषट्)
उों एं उों ऐं अनामिकाभ्यां नमः (कवचायहुं)
उों ओं उों औं कनिष्ठका नमः (नेत्र त्रयाय वौषट्)
उों अं उों अः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्रायफट्)

॥ ध्यानम् ॥

ओं शंख चक्राब्जपरशुकपालेनाक्षमालिकाः ।
पुस्तकामृतकुंभौच त्रिशूलंदधती करैः ॥
सितपीतास तश्वे त रक्त वर्णै स्त्रिलोचनैः ।
पंचास्यैः संयुतां चन्द्र स कांतिशारदां भजे ॥१॥
उों ह्रीं अं निवृत्यै नमः ललाटे ॥
उों ह्रीं आं प्रतिष्ठायै नमः मुखवृत्ते ॥
उों ह्रीं इं विद्यायैनमः दक्षनेत्रे ॥
उों ह्रीं ईं शान्त्यै नमः वामनेत्रे ॥
उों ह्रीं उं इन्धिकायै नमः दक्ष कर्णे ॥
उों ह्रीं ऊं दीपिकायै नमः वामकर्णे ॥
उों ह्रीं ऋं रेचिकायै नमः दक्षनासापुटे ॥

ओं ह्रीं ॠं मोचिकायै नमः वामनासापुटे ॥
ओं ह्रीं लृं पराभिधायै नमः दक्षगण्डे ॥
ओं ह्रीं लॄं सूक्ष्मायै नमः वामगण्डे ॥
ओं ह्रीं एं सूक्ष्मामृतायै नमः ऊर्ध्वौष्ठे ॥
ओं ह्रीं ऐं ज्ञानामृतायै नमः अधरोष्ठे ॥
ओं ह्रीं ओं आप्यायन्यै नमः ऊर्ध्वदंतपंक्तौ ॥
ओं ह्रीं औं व्यापिन्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ ॥
ओं ह्रीं अं व्योमरूपायै नमः शिरसि ॥
ओं ह्रीं अः अनन्तायै नमः मुखे ॥
ओं ह्रीं कं सृष्ट्यै नमः जिह्वाग्रे ॥
ओं ह्रीं खं ऋद्धिकायै नमः कण्ठदेशे ॥
ओं ह्रीं गं स्मृत्यै नमः दक्षबाहुमूले ॥
ओं ह्रीं घं मेधायै नमः दक्षकूर्परे ॥
ओं ह्रीं ङं कान्त्यै नमः दक्षमणिबन्धे ॥
ओं ह्रीं चं लक्ष्म्यै नमः दक्षहस्ताङ्गुलिमूले ॥
ओं ह्रीं छं द्युत्यै नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥
ओं ह्रीं जं स्थिरायै नमः वाम बाहुमूले ॥
ओं ह्रीं झं स्थित्यै नमः वामकूर्परे ॥
ओं ह्रीं ञं सिध्द्यै नमः वाम हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥
ओं ह्रीं टं जरायै नमः वामहस्ताङ्गुलिमूले ॥
ओं ह्रीं ठं पालिन्यै नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥
ओं ह्रीं डं क्षान्त्यै नमः दक्षपादमूले ॥
ओं ह्रीं ढं ईश्वरिकायै नमः दक्षजानुनि ॥
ओं ह्रीं णं रत्यै नमः दक्षपादगुल्फे ॥
ओं ह्रीं तं कामिकायै नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे ॥

ओं ह्रीं थं वरदायै नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे ॥
ओं ह्रीं दं आल्हादिन्यै नमः वामपादमूले ॥
ओं ह्रीं धं प्रीत्यै नमः वामजानुनि ॥
ओं ह्रीं नं दीर्घायै नमः वामगुल्फे ॥
ओं ह्रीं पं तीक्ष्णायै नमः वामपादाङ्गुलिमूले ॥
ओं ह्रीं फं रौद्र्यै नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे ॥
ओं ह्रीं बं भयायै नमः दक्षपार्श्वे ॥
ओं ह्रीं भं निद्रायै नमः वामपार्श्वे ॥
ओं ह्रीं मं तन्द्रिकायै नमः पृष्ठे ॥
ओं ह्रीं यं क्षुधायै नमः उदरे ॥
ओं ह्रीं रं क्रोधिन्यै नमः हृदि ॥
ओं ह्रीं लं क्रियायै नमः दक्षांसे ॥
ओं ह्रीं वं उत्कार्यै नमः ककुदि ॥
ओं ह्रीं शं समृत्युकायै नमः वामांसे ॥
ओं ह्रीं षं पीतायै नमः हृदयादि दक्षहस्तान्तम् ॥
ओं ह्रीं सं श्वेतायै हृदयादिवाम हस्तान्तम् ॥
ओं ह्रीं हं अरुणायै नमः हृदयादिदक्षपादान्तम् ॥
ओं ह्रीं लं सितायै नमः हृदयादि मस्तकान्तम् ॥
ओं ह्रीं क्षं अनन्तायै नमः हृदयादिमस्तकान्तम् ॥

शिव कला ॥*

ॐ अस्य श्रीशिवकला मातृकान्यास मंत्रस्य दक्षिणा मूर्ति ऋषिर्गायत्री छन्दः अर्द्धनारीश्वरो देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः स्वाभीष्टसिद्ध्ये जपे विनियोगः ॥

*—टि० कोई २ आचार्य देवीकला के स्थान पर शिव कला मातृ का न्यास करते हैं। वह भी लिख दिया है।

ॐ दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः शिरसि ॥ ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे । ॐ अर्द्धनारीश्वरो देवतायै नमो हृदि ॥ ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमो गुह्ये ॥ ॐ स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः पादयो ॥ ॐ विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ॥ इति ऋष्यादि न्यासः ॥

॥ अथ हृदयादि न्यासः ॥

ॐ ह्सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ हृदयाय नमः ॥ ॐ ह्सीं तर्जनीभ्यां नमः, शिरसे स्वाहा ॥ ॐ ह्सूं मध्यमाभ्यां नमः, शिखायै वषट् ॥ ॐ ह्सैं अनामिकाभ्यां नमः, कवचाय हुम् ॥ ॐ ह्सौं कनिष्ठकाभ्यां नमः, नेत्र त्रयायवौषट् ॥ ॐ ह्सः करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः, अस्त्रायफट् ॥

॥ अथ ध्यानम् ॥

पाशाङ्कुशवराक्षस्रक्पाणि शीतांशु शेखरम् । त्र्यक्षं-रक्त सुवर्णाभमर्द्ध नारीश्वरं भजे ॥ ॐ ह्सौं अं श्रीकण्ठे-शपूर्णोदरीभ्यां नमो ललाटे । ॐ ह्सौं आं अनन्ताय विरजयाभ्यां नमः मुखवृत्ते ॥ ॐ ह्सौं इं सूक्ष्मेश शाल्मलीभ्यां नमः दक्ष नेत्रे । ॐ ह्सौं ईं त्रिमूर्तीश

॥ न्यासे मुद्रा विधानम् ॥

ललाटे मध्यमानामाभ्यां ।
मुख वृत्ते प्रादक्षिणेन ।

॥ सर्वत्र दक्षिणादि क्रमः ॥

नेत्रयोः तर्जन्यनाभ्यां । मुद्रया यत्कृतं कर्म ।
कर्णयोरंगुष्ठेन । तदक्षय फलप्रदम् ॥

लोलाक्षीभ्यां नमः वाम नेत्रे ॥ ॐ ह्सौं उं अमरेश वर्तुलाक्षीभ्यां नमः दक्षकर्णे। ॐ ह्सौं ऊं अर्घीश घोषणाभ्यां नमः वाम कर्णे ॥ ॐ ह्सौं ऋं भारभूतेश दीर्घमुखीभ्यां नमः दक्ष नासा पुटे। ॐ ह्सौं ॠं तिथीश गोमुखीभ्यां नमः वाम नासा पुटे ॥ ॐ ह्सौं लृं स्थाण्वीश दीर्घ जिह्वाभ्यां नमः दक्ष गंडे ॥ ॐ ह्सौं ॡं हरः श्रीकंठेश कुण्डोदरीभ्यां नमः वाम गंडे ॥ ॐ ह्सौं एं झिंटीश ऊर्ध्वकेशीभ्यां नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ह्सौं ऐं भौतिकेश विकृत मुखीभ्यां नम अधरोष्ठे ॥ ॐ ह्सौं ॐ सद्योजात ज्वालामुखीभ्यां नमः ऊर्ध्वं दन्त-पंक्तौ। ॐ ह्सौं औं अनुग्रहेश उल्कामुखीभ्यां नमः अधो दन्त पंक्तौ ॥ ॐ ह्सौं अं अक्रूरेश श्रीमुखीभ्यां नमः शिरसि। ॐ ह्सौं अः महासेनेश विद्यामुखीभ्यां नमः मुखे। ॐ ह्सौं कं क्रोधीश महाकालीभ्यां नमः जिह्वाग्रे ॥ ॐ ह्सौं खं चण्डेश सरस्वतीभ्यां नमः कण्ठदेशे। ॐ ह्सौं गं पञ्चान्तकेश सर्वसिद्धि गौरीभ्यां नमः दक्ष बाहु मूले। ॐ ह्सौं घं शिवोत्तमेश त्रैलोक्येश विद्याभ्यां नमः दक्ष कूर्परे। ॐ ह्सौं ङं एकरुद्रेश मन्त्र

नसोः कनिष्ठांगुष्ठाभ्यां।
गंडयोः मध्यमया।
ओष्ठयोः मध्यमया।
दंत पंक्तयोः अनामया।
शिरसि मध्यमया।
मुखे अनामामध्यमाभ्यां।

मुद्राव्युत्पत्तिः ॥ 'रादाने" मुदं राति ददातीति मुद्रेतिनिर्वचनम् ॥ इदमेव मोदन्तेसर्वदेवता ॥ इत्यनेनसूचितम् तदुक्तम् ॥ अर्चनेजपकाले तु ॥ ध्यानेकाम्ये च कर्माणि ॥ तत्तन्मुद्राः प्रयोक्तव्या देवता सन्निधापिका ॥

शक्तिभ्यां नमः दक्ष मणिबंधे । ॐ ह्सौं चं कूर्मेश आत्म-शक्तिभ्यां नमः दक्ष हस्ताङ्गुलिमूले ॥ ॐ ह्सौं छ एकनेत्रेश भूतमातृभ्यां नमः दक्ष हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ ॐ ह्सौं जं चतुरा-ननेश लम्बोदरीभ्यां नमः वाम बाहु मूले ॥ ॐ ह्सौं झं अजेश द्राविणीभ्यां नमः वाम कूर्परे ॥ ॐ ह्सौं ञं सर्वेश नागरीभ्यां नमः वाम मणि बंधे ॥ ॐ ह्सौं टं सोमेश खेचरीभ्यां नमः वाम हस्ताङ्गुलि मूले ॥ ॐ ह्सौं ठं लाङ्गलीश मंजरीभ्यां नमः वाम हस्तांगुल्यग्रे ॥ ॐ ह्सौं डं दारकेश रूपिणीभ्यां नमः दक्ष जानुनि ॥ ॐ ह्सौं ढं अर्द्धनारीश वीरिणीभ्यां नमः दक्षपाद मूले ॥ ॐ ह्सौं णं उमाकान्तेश काकोदरीभ्यां नमः दक्षपाद गुल्फे ॥ ॐ ह्सौं तँ आषाढ़ीश पूतनाभ्यां नमः दक्ष पादाङ्गुलि मूले ॥ ॐ ह्सौं थं चंडीश भद्रकालीभ्यां नमः दक्ष पादाङ्गुल्यग्रे ॥ ॐ ह्सौं दँ अन्त्रीश योगिनीभ्यां नमः वाम पाद मूले ॥ ॐ ह्सौं धं मीनेश शङ्खिनीभ्यां नमः वाम जानौ ॥ ॐ ह्सौं नं मेशेष तर्जनीभ्यां नमः वाम गुल्फे ॥ ॐ ह्सौं पँ लोहितेश कालरात्रीभ्यां नमः वाम पादाङ्गुलि मूले ॥ ॐ ह्सौं फँ शिखीश कुब्जिनीभ्यां

इतः सर्वत्रकनिष्ठा नामामध्यमाभिः ।

हृदयादि दक्षकरांगुल्यग्रपर्यन्तं करतलेन

अग्रेपि करतलेन

अनादेशे सर्वत्र अनामांगुष्ठाभ्यां न्यसेत्॥

शक्ति षडङ्ग मुद्रा आगमे ॥

अंगुष्ट वर्ज मंगुल्यश्चतस्रो हृदिमूर्द्धनि । शिखायां मुष्टि रेवस्यादंगुष्ट कृत नासिका ॥ सर्वाङ्गु ल आनाभेः पाण्योः कवच वन्धनम् ॥इति॥

नमः वाम पादाङ्गुल्यग्रे ॥ ॐ ह्सौं बं छागलंडेश कपर्दिनीभ्यां नमः दक्ष पार्श्वे ॥ ॐ ह्सौं भं द्विरंडेश वज्रीभ्यां नमः वाम पार्श्वे ॥ ॐ ह्सौं मं महाकालेश जयाभ्यां नमः पृष्ठे ॥ ॐ ह्सौं यं त्वगात्मभ्यां वालीश सुमुखेश्वरीभ्यां नमः उदरे ॥ ॐ ह्सौं रं असृगात्मभ्यां भुजगेश रेवतीभ्यां नमः हृदि ॥ ॐ ह्सौं लं माँसात्मभ्यां पिनाकीश माधवीभ्यां नमः दक्षांसे ॥ ॐ ह्सौं वं मेद्आत्मभ्यां खड्गीश वारुणीभ्यां नमः ककुदि ॥ ॐ ह्सौं शं अस्थ्यात्मभ्यां वकेश वायवीभ्यां नमः वामांसे ॥ ॐ ह्सौं षं मज्जात्मभ्यां श्वेतेश रक्षो विदारिणीभ्याँ नमः हृदयादि दक्ष हस्तान्तम् ॥ ॐ ह्सौं सं शुक्रात्मभ्यां भृग्वीश सहजयाभ्याँ नमः हृदयादि वाम हस्तान्तम् ॥ ॐ ह्सौं हं प्राणात्मभ्यां नकुलीश लक्ष्मीभ्यां नमः हृदयादि दक्ष पादान्तम् ॥ ॐ ह्सौं लं शिवेश व्यापिनीभ्यां नमः हृदयादि वाम पादान्तम् ॥ ॐ ह्सौं क्षं क्रोधात्मभ्यां संवर्तकेश महामायाभ्यां नमः हृदयादि मस्तकान्तम् ॥

श्रीकण्ठादीन्छम्भुभक्तः कुर्यान्न्यासादिकन्तथा मंत्र महोदधौ २१ तरंगे ॥

षोढान्यास प्रकारः

तत्र प्रथम शुद्ध मातृका न्यासः

अं आँ इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं नमो हृदि ॥ एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमो दक्ष भुजे ॥ ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमो वाम भुजे ॥ णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमो दक्षपादे ॥ मं यं रं लं वं

शं षं सं हं लं क्षं नमो वाम पादे ॥ इति शुद्ध मातृ का न्यासः प्रथमः ॥

अथ द्वितीय न्यासः

ॐ अं ॐ अं ॐ अं नमो ललाटे ॥ ॐ आं ॐ आं ॐ आँ नमो मुख वृत्ते ॥ ॐ इं ॐ इं ॐ इं नमो दक्ष नेत्रे ॥ ॐ ईं ॐ ईं ॐ ईं नमो वाम नेत्रे ॥ ॐ उं ॐ उं ॐ उं नमो दक्ष कर्णे ॥ ॐ ऊं ॐ ऊं ॐ ऊं नमो वाम कर्णे ॥ ॐ ऋं ॐ ऋं ॐ ऋं दक्ष नासायाँ ॥ ॐ ॠं ॐ ॠं ॐ ॠं नमो वाम नासायाँ ॥ ॐ लृं ॐ लृं ॐ लृं नमो दक्ष कपोले ॥ ॐ लॄं ॐ लॄं ॐ लॄं नमो वाम कपोले ॥ ॐ एं ॐ एं ॐ एं नम ऊर्ध्वोष्ठे ॥ ॐ ऐं ॐ ऐं ॐ ऐं नम अधरोष्ठे ॥ ॐ ओं ॐ ओं ॐ ओं नम ऊर्ध्वं दन्त पंक्तौ ॥ ॐ औं ॐ औं ॐ औं नम अधः दंत पंक्तौ ॥ ॐ अं ॐ अं ॐ अं नमो मूर्द्धनि ॥ ॐ अः ॐ अः ॐ अः नमः मुखे ॥ ॐ कं ॐ कं ॐ कं नमो दक्षिण बाहु मूले ॥ ॐ खं ॐ खं ॐ खं नमो दक्षिण कूर्परे ॥ ॐ गं ॐ गं ॐ गं नमो दक्षिण मणि बंधे ॥ ॐ घं ॐ घं ॐ घं नमो दक्षिण हस्ताङ्गुलि मूले ॥ ॐ ङं ॐ ङं ॐ ङं नमो दक्षिण हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ ॐ चं ॐ चं ॐ चं नमो वाम बाहुमूले । ॐ छं ॐ छं ॐ छं नमो वाम कूर्परे ॥ ॐ जं ॐ जं ॐ जं नमो वाम मणि बंधे ॥ ॐ झं ॐ झं ॐ झं नमो वाम हस्ताङ्गुलि मूले ॥ ॐ ञं ॐ ञं ॐ ञं नमो वाम हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ ॐ टं ॐ टं ॐ टं नमो दक्षिण पाद मूले ॥

श्रीं ठं श्रीं ठं श्रीं ठं नमो दक्ष जानुनि ॥ श्रीं डं श्रीं डं श्रीं डं नमो दक्ष गुल्फे ॥ श्रीं ढं श्रीं ढं श्रीं ढं नमो दक्ष पादाङ्गुलिमूले ॥ श्रीं णं श्रीं णं श्रीं णं नमो दक्षपादाङ्गुल्यग्रे ॥ श्रीं तं श्रीं तं श्रीं तं नमो वामपाद मले ॥ श्रीं थं श्रीं थं श्रीं थं नमो वाम जानुनि ॥ श्रीं दं श्रीं दं श्रीं दं नमो वाम गुल्फे ॥ श्रीं धं श्रीं ध श्रीं धं नमो वाम पादाङ्गुलिमूले ॥ श्रीं न श्रीं नं श्री नं नमो वाम पादाङ्गुल्यग्रे॥ श्रीं प श्रीं पं श्रीं पं नमो दक्ष पार्श्वे । श्रीं फं श्रीं फं श्रीं फं नमो वाम पार्श्वे ॥ श्रीं बं श्रीं बं श्रीं बं नमो पृष्ठे ॥ श्रीं भं श्रीं भं श्रीं भं नमो नाभौ ॥ श्रीं मं श्रीं मं श्रीं मं नमो उदरे ॥ श्रीं यं श्रीं यं श्रीं यं त्वगात्मने नमः हृदि ॥ श्रीं रं श्रीं रं श्रीं रं असृगात्मने नमः दक्षांसे ॥ श्रीं लं श्रीं लं श्रीं लं मांसात्मने नमः ककुदि ॥ श्रीं वं श्रीं वं श्रीं व मेदात्मने नमः वामांसे ॥ श्रीं शं श्रीं शं श्रीं शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्ष हस्तान्तम् ॥ श्रीं षं श्रीं षं श्रीं षं मज्जात्मने नमः हृदयादि वाम हस्तान्तम् ॥ श्रीं सं श्रीं सं श्रीं सं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्ष पादान्तम् ॥ श्रीं हं श्रीं हं श्रीं हं आत्मने नमः हृदयादि वाम पादान्तम् ॥ श्रीं लं श्रीं लं श्रीं लं परमात्मने नमः जठरे ॥ श्रीं क्षं श्रीं क्ष श्रीं क्षं प्राणात्मने नमः हृदयादि मस्तकान्तम् ॥ इति द्वतीय न्यासः ॥

॥ अथ तृतीय न्यासः ॥

क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो ललाटे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो मुख वृत्ते ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष नेत्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम-

नेत्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष कर्णे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम कर्णे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष नासायाम् ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वामनासायां ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष कपोले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम कपोले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नम ऊर्ध्वोष्ठे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नम अधरोष्ठे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नम ऊर्ध्व दंत पंक्तौ ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नम अधो दन्त पङ्क्तौ ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो मूर्द्धिन॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो मुखे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्षिण बाहुमूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष कूर्परे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष मणि बंधे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष हस्ताङ्गुलि मूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम बाहुमूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम कूर्परे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाममणि बन्धे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम हस्ताङ्गुलि मूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम हस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्षिण पाद मूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष जानुनि ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष गुल्फे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष पादाङ्गुलि मूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्ष पादाङ्गुल्यग्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम पादमूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम

जानुनि ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वामगुल्फे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम पादाङ्गुलिमूले ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वाम पादाङ्गुल्यग्रे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो दक्षपार्श्वे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो वामपार्श्वे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो पृष्ठे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो नाभौ ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो उदरे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं त्वगात्मने नमः हृदि ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं असृगात्मने नमः दक्षांसे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं मांसात्मने नमः ककुदि ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं मेदात्मने नमः वामांसे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्ष हस्तान्तम् ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं मज्जात्मने नमः हृदयादि वाम हस्तान्तम् ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्ष पादान्तम् ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं आत्मने नमः हृदयादि वाम पादान्तम् ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं परमात्मने नमः जठरे ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं हृदयादि मस्तकान्तम् ॥ इति तृतीय न्यासः

अथ चतुर्थ न्यासः

ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं नमः ललाटे ॥

सृष्टिन्यास के अनुसार स्थानों पर पंचम न्यास तथा मुद्रा भी वही ।

पंचमः

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ह्रां ह्रां स्रं स्रं क्लूं नमः ललाटे ॥

सृष्टि न्यास के अनुसार तथा मुद्रा भी वही

षष्ट अनुलोमः

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः ललाटे ॥ उन्हीं स्थान तथा मुद्रा से

विलोम न्यासः

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः हृदयादि मस्तकान्तम् ॥

१०८ पेज में छपे हुए संहार न्यास के अनुसार होगा मुद्रा सहित

तत्वन्यासः

ऐं ह्रीं क्लीं आत्म तत्वाय नमः पादादि नाभिपर्यन्तम् ॥ चामुण्डायै विद्यातत्वाय नमः नाभ्यादि हृदय पर्यन्तम् ॥ विच्चे शिव तत्वाय नमः हृदयादि शिरः पर्यन्तम् ॥

अक्षर न्यासः

ऐं नमः ब्रह्मरंध्रे ॥ ह्रीं नमः भ्रुवोर्मध्ये ॥ क्लीं नमः ललाटे ॥ चां नमः हृदि ॥ मुं नमोकुक्षौ ॥ डां नमः नाभौ ॥ यैं नमो लिंगे ॥ विंनमो गुह्ये ॥ च्चें नमोवक्रे ॥ इति

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायैं विच्चे ॥

ततो नवधा सप्तधा पञ्चधा वा मूल मुच्चरन् व्यस्त्य हस्ताभ्यां व्यापक न्यासं विधाय ॥ ततो यथोक्त विधिना विन्दु त्रिकोण षट् कोण अष्ट दल चतुर्विंशति दल भूपरयुतं यंत्रंनिर्माय पीठे धृत्वा ॥ पीठ न्यासं कुर्यात् ॥ ॐ आधार शक्त्यै नमः ॥ ॐ प्रकृत्यै

नमः ॥ ॐ कूर्माय नमः ॥ ॐ सुधांबुधये नमः ॥ ॐ मणिद्वीपाय नमः ॥ ॐ चिन्तामणि गृहाय नमः ॥ ॐ श्मशानाय नमः ॥ ॐ पारिजाताय नमः ॥ तन्मूले ॥ ॐ रत्नवेदिकायैनमः ॥ ॐ मणि पीठाय नमः ॥ एतावद्धृदि न्यसेत् ॥ चतुर्दिन्न ॥ ॐ नाना मुनिभ्यो नमः ॥ ॐ नाना देवेभ्यो नमः ॥ ॐ शवेभ्यो नमः ॥ ॐ शवमुण्डेभ्योनमः ॥ ॐ बहुमांसास्थि मोदमान शवेभ्यो नमः ॐ धर्म्माय नमः दक्षांसे ॥ ॐ ज्ञानाय नमः वामांसे ॥ ॐ वैराग्याय नमः वामोरौ ॥ ॐ ऐश्वर्याय नमः दक्षोरौ ॥ ॐ अध-र्म्मायनमोमुखे ॥ ॐ अज्ञानाय नमो वाम पार्श्वे ॥ ॐ अवैराग्याय नमः नाभौ ॥ ॐ अनैश्वर्याय नमः दक्षिणपार्श्वे ॥ ततो हृदि ॥ ॐ आनन्द कन्दाय नमः ॥ ॐ संविन्नालाय नमः ॥ ॐ सर्व तत्वात्मक पद्माय नमः ॥ ॐ प्रकृति मय पत्रेभ्यो नमः ॥ ॐ विकार मय केसरेभ्यो नमः ॥ ॐ पञ्चाशद्वीजाढ्य कर्णिकायै नमः ॥ ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्य मंडलाय नमः ॥ ॐ षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नमः ॥ ॐ मन्दशकलात्मने वन्हि मण्डलाय नमः ॥ ॐ सं सत्वायनमः ॥ ॐ रं रज से नमः ॐ तं तमसे नमः ॥ ॐ आं आत्मने नमः ॥ ॐ अं अन्तरात्मने नमः ॥ ॐ पं परमात्मने नमः ॥ ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ॥ अष्टदिक्षु ॥ ॐ इं इच्छायै नमः ॥ ॐ ज्ञां ज्ञानायै नमः ॥ ॐ क्रिं क्रियायै नमः ॥ ॐ कां कामिन्यै नमः ॥ ॐ कां कामदायिन्यै नमः ॥ ॐ रं रत्यै नमः ॥ ॐ रं रति

प्रियायै नमः ॥ ॐ आं आनन्दायै नमः ॥ मध्ये ॥ ॐ मं मनोन्मन्यै नमः ॥ ॐ ऐं परायै नमः ॥ ॐ पं परापरायै नमः ॥ ॐ ह्सौः ब्रह्मा विष्णु रुद्रमहाप्रेत पद्मासनाय नमः ॥ इति पीठ न्यासं कृत्वा तत्र दुर्गां ध्यायेत् ॥

ओं शंखं चक्रं गदां बाणान् चापं परिघ शूलके ॥ भुशुण्डीं च शिरः खड्गं दधतीं दश वक्त्रकाम् ॥ १ ॥ तामसीं श्यामलां नौमि महाकालीं दशांघ्रिकाम् ॥ मालाञ्च परशुं बाणान् गदां कुलिशमेवच ॥ २ ॥ पद्मं धनुः कुण्डिकां च दंडं शक्तिमसिं तथा ॥ खेटकंजलजं घण्टां सुरापात्रं च शूलकम् ॥ ३ ॥ पाशं सुदर्शनं चैव दधतीं लोहित प्रभाम् ॥ पद्मे स्थितां महालक्ष्मीं भजे महिष मर्दिनीम् ॥ ४ ॥ घंटां शूलं हल शंखं मुसलारि धनुः शरान् ॥ दधतीमुज्वलां नौमि देवीं गौरीं अष्टभुजाम् ॥ ५ ॥ इति ध्यात्वा मानसै रुप चारैरभ्यर्च्य स्थापयेत् ॥

*॥ विशेषार्घ्य स्थापन विधिः ॥

आत्म श्री चक्रयोर्मध्ये विन्दु त्रिकोण चतुरस्रं कृत्वा । शंखमुद्रया[1] स्तंभयेत् ॥ मध्ये । घण्टां संपूज्य वादयेत् ॥ ओं आगमार्थंतुदेवानां गमनार्थंतु रक्षसाम् । घण्टारवं प्रकुर्वीत देवता प्रीति कारकम् ॥

मध्ये नवार्ण इतिमंत्रं विलिख्य सामान्यार्घ्योदकेनाभ्युक्ष्य ततः चतुरस्रकोणेषु ॐ पूर्ण गिरि पीठाय नमः

टिप्पणी—* अर्घ्य पाद्याचमनीयमधुपर्काचमस्य च ।
पञ्चपात्राणिपुष्पादीन् स्थापयेत्तस्वीय दक्षिणे ॥
मंत्र महोदधौ २१ त० ७५ श्लोक ।
[1] शंखमुद्रा का लक्षण १२४ सफे में है ।

पूर्वे । ॐ उड्डीयान पीठाय नमः दक्षिणे ॥ ॐ जालंधर पीठाय नम उत्तरे ॥ ॐ कामरूप पीठाय नमःपश्चिमे । त्रिकोणं मूल खंडत्रयेण संपूज्य ॥ ॐ ह्रीं आधार शक्तय नम इति संपूज्य, षट्कोणेषु षडङ्गानि संपूज्य । तत्राधारे अर्घ्यपात्रं संस्थाप्य नम इति सामान्यार्घो-दकेनाभ्युक्ष्य ॥ मंदशकलात्मने वन्हिमंडलाय नमः ॥ ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः । ॐ रं ऊष्मायै नमः ॥ ॐ लं ज्वलिन्यै नमः । ॐ वंज्वालिन्यै नमः ॥ ॐ शं विस्फु-लिंगिन्यै नमः । ॐ षं सुश्रियै नमः ॥ ॐ सं स्वरूपायै नमः । ॐ हं कपिलायै नमः ॥ ॐ लं हव्यवाहायै नमः इति संपूज्य । ॐ फडिति पात्रं प्रक्षाल्य ॥ श्री दुर्गा विशेषार्घ्यपात्रं संस्थापयामि नमः इति पात्रं संस्थाप्य । ॐ अं अर्कमंडलाय द्वादशकलात्मने अर्घ्यं पात्राय नमः ॥ ॐ कं भं तपिन्यै नमः । ॐ खं बं तापिन्यै नमः । ॐ गं फं धूम्रायै नमः ॥ ॐ घं पं मरीच्यै नमः । ॐ ङं नं ज्वालिन्यै नमः ॥ ॐ चं धं रुच्यै नमः । ॐ छं दं सुषु-म्णायै नमः ॥ ॐ जं खं भोगदायै नमः । ॐ झं तं

धर्म्मसारे ॥ कलशं शङ्ख घण्टे च पाद्यार्घ्याचमनीयकम् ।
संपूज्यप्रोक्ष्यचात्मनं पूजासंभार मेवच ॥
पूजासागरे ॥ सुवासितजलैःपूर्णं सव्येकुम्भं प्रपूजयेत् ।
कलशस्येतिमन्त्रेण तीर्थान्यावाहयेत्ततः ॥
वामेऽम्बुपात्रं छत्रमादर्शचामरे ।
कृताञ्जलिर्वामदक्षं गुरूनगणपतिंनमेत् ॥
१ शंख मुद्रा लक्षणम् ॥ वामाङ्गुष्ठन्तुसंगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमङ्गुष्ठन्तु प्रसारयत् ॥
वामाङ्गुल्यस्तथाश्लिष्टाः संयुक्ताः सुप्रसारिताः ।
दक्षिणाङ्गुष्ठकेलग्ना मुद्राशङ्खस्यभूतिदा ॥

विश्वायै नमः ॥ ओं ञं णं बोधिन्यै नमः। ओं टं ढं धारिण्यै नमः ॥ ओं ठं डं क्षमायै नमः। इति सम्पूज्य ॥ मूले न विलोम मातृकां पठन् अर्घ्यपात्रं पूरयामीति जलेन (तीर्थोदकेन) कलशं पूरयित्वा। तत्र रक्तचंदन पुष्पादि निक्षिप्य ॥ ओं षोडश कलात्मने सोममंडलाय नमः। ओं अं अमृतायै नमः। ओं आं मानदायै नमः। ओं इं पूषायै नमः ॥ ओं ईं तुष्ट्यै नमः। ओं उं पुष्ट्यै नमः ॥ ओं ऊं रत्यै नमः। ओं ऋं धृत्यै नमः ॥ ओं ॠं शशिन्यै नमः। ओं लृं चंडिकायै नमः ॥ ओं लॄँ कान्त्यै नमः। ओं एं ज्योत्स्नायै नमः ॥ ओं ऐं श्रियै नमः। ओं ओं प्रीत्यै नमः ॥ ओं औं अंगदायै नमः ओं अं पूर्णायै नमः ॥ ओं अः पूर्णामृतायै नमः। इति सम्पूज्य ॥ कुशेन त्रिकोण वृत्त षट्कोणं लिखित्वा तन्मध्ये त्रिकोण रेखायां अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं इति विलिख्य त्रिकोण रेखायां मध्ये हं लं क्षं इति विलिख्य मूलखण्डत्रयेण त्रिकोणं संपूज्य ॥ षट्कोणेषु षडंगं च पूजयित्वा। ओं गंगे च यमुनेचैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥ ओं ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः-स्पृष्टेन ते रवे। तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ! ॥ इति मन्त्रेण अंकुश[1] मुद्रया सूर्यमंडला त्तीर्थान्यावाह्य वौषट् इति पुष्पं वषट् इति गालिनी[2] मुद्रां प्रदर्श्य ॥

---

१ अंकुश मुद्रा का लक्षण ८६ पृष्ठ में देखिये।
टिप्पणी२ गालिनी मुद्रा यथा—कनिष्ठांगुष्ठकौयुक्तौ करयोरितरेतरम्। तर्जनी मध्यमा नामासंहतासुग्न वर्जिताः ॥

श्री त्रिगुणात्मक दुर्गा देव्यै नमः ॥ इति ध्यात्वा सम्पूज्य ॥ ततःमंत्रेण पूर्वादिक्रमेण रत्नानि प्रपूजयेत् । ओं ग्लूं गगन रत्नेभ्यो नमः ॥ ओं स्लूं स्वर्ग रत्नेभ्यो नमः। ओं म्लूं मर्त्य रत्नेभ्यो नमः ॥ ॐ न्लूं नागरत्नेभ्यो नमः । ओं त्लूं पाताल रत्नेभ्यो नमः ॥ इति संपूज्य ॥ आनन्दभैरवानन्द भैरव्यौ ध्यायेज् ॥ सूर्य कोटि प्रतीकाशं चन्द्र कोटि शुशीतलम् ॥ अष्टादशभुजं देवं पञ्च वक्त्रं त्रिलोनम्॥ अमृतार्णव मध्यस्थं ब्रह्म पद्मोपरिस्थितम्॥ वृषारूढं नीलकठं सर्वाभरणभूषितम्॥ कपालखट्वाङ्गधरं घंटाडमरुवादिनम्॥ पाशांकुशधरं देवं गदामुसलधारिणम्॥ खड्ग खेटक पट्टीश मुग्दरं शूल दंडकम् ॥ विचित्र खेटकं मुडं वरदा भयपाणिकम् ॥ लोहितं देव देवेशं भावयेत्साधको तमः ॥ वं इति धेनु* मुद्रयामृतो कृत्य । तज्जलेन स्वात्मानं पूजा सामग्रीं च प्रोक्षयेत्। इति विशेषार्घ्यविधिः ॥

अथ क्षेत्र कीलनम् ॥ जप स्थाने गत्वा पृथ्वी ग्रहणं कुर्यात् ॥ तद्यथा गृहीतस्यास्य मंत्रस्य पुरश्चरण सिद्धये ॥ मयेयं गृह्यते भूमिमंत्रोऽयं-सिद्धिमाप्नुयात् ॥ इति भूमिंसंगृह्य । अश्वत्थोदुंवर प्लक्षाणामन्यतम वितस्तिमात्रान् दशकीलान् ओंनमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट् इति मंत्रेण अष्टोत्तरशत-कृत्वाभिमंत्रितान् ॥ ओंचात्र विघ्नकर्तारो भुविदिव्यं-तारक्षगाः ॥ विघ्नभूताश्च ये चान्ये मम मंत्रस्य सिद्धिषु ।१। मयैतत्कीलितं क्षेत्रं परित्यज्यविदूरतः । अपसर्पन्तु ते

१—वामाङ्गुली र्दक्षिणानामङ्गुली नां च सन्धिषु ।
प्रवेश्य मध्यमाभ्यान्तु तर्जन्यौद्वौ प्रयोजयेत् ॥
कनिष्ठे द्वे नामि काभ्यांयुज्यात् साधेनु मुद्रिका ।

सर्वं निर्विघ्नासिद्धिरस्तु मे ॥२॥ इति मंत्रद्वयेन १० दिक्षु १० कीलान्निखनेत् ॥ ततस्तेषु ॥ ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय-फट् । इति मंत्रेण प्रत्येक कीलं संपूज्य दिक्पालेभ्यः क्षेत्रपाल गणपतिभ्यश्च माषभक्तबलिं दत्वा॥ तद्बाह्ये भूत (*पंचमहाभूत)बलिंदद्यात्। तत्रमंत्राः-ये रौद्राःरौद्रकर्माणो रौद्रस्थाननिवासिनः ॥ मातरोप्युग्ररूपाश्च गणाधिपत-यश्चये ॥१॥ भूचराः खेचराश्चैव तथा चैवांतरिक्षगाः ॥ ते सर्वे प्रीतिमनसाः प्रतिगृह्णन्त्विमंबलिम् ॥२॥ इति मंत्रद्वयेन दशदिक्षु बाह्ये माषभक्तबलिंदद्यात् ॥ ततो वामकरांगुलिभिरर्घ्यजलेनोत्सृज्य पुष्पांजलिं गृहीत्वा ॥ ॐ भूतानि यानीह वसन्तिभूतले बलिं गृहीत्वा विधि-वत्प्रयुक्तम् । संतोषमासाद्य व्रजन्तु सर्वे क्षमन्तुतान्य-त्रनमोस्तुतेभ्यः ॥ इतिपुष्पांजलिंदत्वा प्रणम्य हस्तौपादौ प्रक्षाल्याचामेत् ॥ इति क्षेत्रकीलनम् ॥

---

* आचम्य प्राणानायम्य ॥ अद्येहेत्यादि मम (यजमानस्य) संकल्पोक्त फलावाप्तये श्री दुर्गा देव्याःपुरश्चरण सिद्धये चतुर्दिक्षुवटुकादि देवताभ्यो दधि माषान्नद्रव्यैः पंच महाभूत बलिदानं करिष्ये ।

चक्रस्य पूर्वे भूमौ सिंदूरेण विन्दुत्रिकोणवृत्तचतुर-स्रात्मक यंत्रं विलिख्य ॥ वटुक बलिपात्राधार मंडलाय नमः, इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥ अन्नव्यंजनयुतमाधारं बलि च निधाय ॥ ॐ बलिद्रव्याय नमः इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥ पूर्वे वं वटुकाय नमः इति संपूज्य ॥

बलिमुपनीय ॥ ॐ एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभार-भास्वर त्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशय २ सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण २ स्वाहा ॥ इति वामांगुष्ठानामिकाभ्यांबलि मुत्सृजेत् ॥ दक्षहस्तेन जलंत्यजेत्॥प्रार्थना ॥ ॐ करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणिस्तरुण तिमिरनीलव्यालयज्ञोपवीती ॥ क्रतुसमयसपर्या विघ्नविच्छेदहेतुर्जयति वटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

यंत्र पूजन प्रकारः

मध्ये (प्रधानयंत्रे) चक्रस्थ प्रेतासनोपरि मूलेन मूर्तिं विचिन्त्य ॥ आत्मानं कामकलारूपं विभाव्य करक च्छ-

---

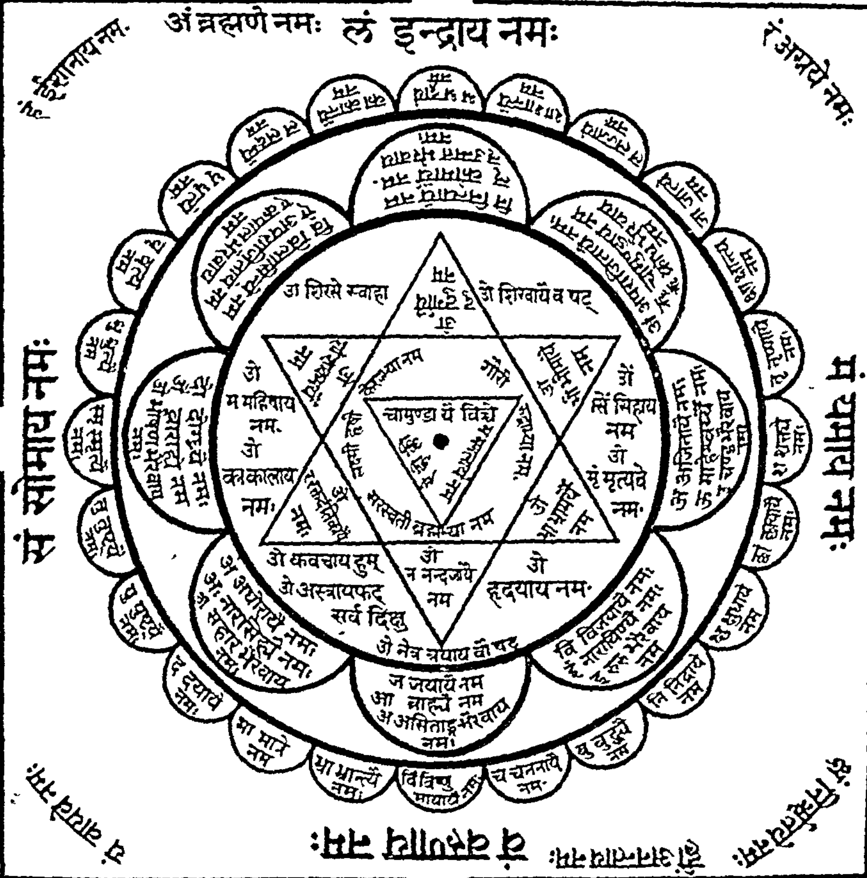
चक्रस्य दक्षिणे पूर्ववत्यंत्रं विलिख्य, योगिनी बलिपात्राधार मंडलाय नमः ॥ इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥ तदुपरि अन्नव्यंजनयुत-माधारं बलि च निधाय ॥ ॐ बलिद्रव्याय नमः, इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥ दक्षिणे यां योगिनीभ्यो नमः इति संपूज्य बलिमुपनीय । ॐ सर्ववर्ण योगिनीभ्य इमं बलि गृह २ हुं फट् स्वाहा इति वामांगुष्ट मध्यमानामिकाभिः बलिमुत्सृजेत् ॥ दक्षहस्तेनजलं त्यजेत् ॥प्रार्थना॥ ॐ ऊर्ध्व ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा पाताले वा ऽनले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्रस्थिता वा क्षेत्रेपीठोपपीठा दिशि च कृतपदा धूपदीपादिकेभ्यः प्रीता देव्या सदा नः शुभविधिबलिनः पांतु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥

चक्रस्य पश्चिमे पूर्वविधिना यंत्रंविलिख्य। क्षेत्रपालबलि पात्राधार मण्डलाय नमः, इति गंधपुष्पाव्यां सपूज्य ॥ अन्नव्यंजनयुतमाधारं बलिं च निधाय ॥ ॐ बलिद्रव्याय नम इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥ क्षेत्रपालाय नम इति संपूज्य ॥ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रपालाय नमः ॥ बलिमुपनीय भो क्षेत्रपाल इमं बलिं गृह २ सर्वकामान् पूरय २ स्वाहा ॥ वामांगुष्ट तर्जनीभ्यां बलिमुत्सृजेत् ॥ दक्षहस्तेन जलं त्यजेत् ॥ प्रार्थना ॥ योस्मिन् क्षेत्रेभिवासी च क्षेत्रपालः सकिंकरः ॥ प्रीतोयं बलिदानेन सर्वरक्षां करोतु मे ॥

चक्रस्य उत्तरे पूर्व विधिना यंत्रं विलिख्य, गणेशबलि पात्राधार मंडलाय नमः, इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य तदुपरि अन्नव्यंजनयुतमाधारं बलिं च निधाय ॥ ॐ बलि द्रव्याय नमः, इति गंधपुष्पाभ्यां संपूज्य ॥

गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण २ स्वाहा ॥ इति वामांगुष्ट मध्यमाभ्यांबलि मुत्सृजेत्, ॥ दक्ष हस्तेन जलमुत्सृजेत् ॥ प्रार्थना ॥ सर्वदा सर्व-कार्याणि निर्विघ्नं साधयेन्मम । शान्ति करोतु सततं विघ्नराजः स्वशक्तितः ॥

दुर्गार्चन सृतौ, सप्तशती पूजन यन्त्रम्



पिकया पुष्पादिकं गृहीत्वा ॥ मूलाधारात्कुण्डलिनीं* ब्रह्मरन्ध्रपथेन शिरस्थां विभाव्य तत्रत्यामृत लोलीभूतां हृदयस्थाष्ट दलरक्तपंकजेमानीय देवीं ध्यायेत्॥ खड्गं चक्रग-देषु चापपरिघानिति ॥ अक्षस्रगिति॥ घंटाशूलमित्यादि क्रमेणध्यात्वा ॥ यमिति (यं) बीजेन वामनासया कर पुष्पे समारोप्य ॥ मूलं ॥ देवेशि ! भक्तसुलभे ! परिवार समन्विते ॥ यावत्वांपूजयिष्यामि तावद्देवि ! इहावह ॥ इति मंत्रं पठन्पुष्पं कृसमूर्तौ १ यन्त्रे वा निधाय ॥

स्ववामे चतुष्कोण यंत्रं विलिख्य ह्रीं सर्वभूतेभ्यो नम इति गंध-पुष्पाभ्यां संपूज्यबलिमुपनीय ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृभ्यः सर्वभूतेभ्य इमं बलिं गृह्ण२ हुँ फट् स्वाहा ॥ इति सर्वांगुलिभिः बलिमुत्सृजेत् ॥ दक्षेन जलं त्यजेत् प्रार्थना ॥ ये भूता विघ्न कर्तारो दिव्यभूम्यन्तरिक्षगाः। पाताल तलसंस्थाश्च शिवयोगेन भाविताः ॥ क्रूराद्याः शत संख्याकाः पाखंडाद्याः व्यव-स्थिताः ॥ ध्रुवाद्याः सत्यसंख्याश्च इन्द्राद्याशा व्यवस्थिताः ॥ तृप्यन्तु प्रीतिमनसो भूता गृह्णन्त्विमंबलिं ॥ नगरेवाथसंग्रामे अटव्यांवैसरित्तटे॥ वापी कूपेषु वृक्षेषु श्मशाने च चतुष्पथे ॥ नानारूपधरा ये च बहुरूप-धराश्च ये ॥ ते सर्वे चैव सन्तुष्टा बलिं गृह्णन्तु मे सदा ॥

* ध्यायेत्कुण्डलिनीं शक्तिं बिशतन्तु स्वरूपिणीम् ॥ प्रसुप्तांभुज-गाकारां सार्द्ध त्रिवलयान्विताम् ॥ मुखेमुखं तु संयोज्य स्वयम्भू लिङ्ग वेष्टिनीम् । वन्हीन्द्वर्कतडित्पुञ्ज प्रभां चैतन्यरूपिणीम् ॥ इति तन्त्रान्तरे ॥

रामपूर्व तापनीये ॥

१ सोभयस्यास्य देवस्य विग्रहो यन्त्र कल्पना ।
विना यन्त्रेण चेत्पूजा देवता न प्रसीदति ॥

संहितायां ॥

यन्त्रं मन्त्रमयं प्राहुर्देवता मन्त्ररूपिणी ।
यन्त्रेणापूजितो देवः सहसा न प्रसीदति ॥
सर्वेषामपि मन्त्राणां यन्त्रे पूजा प्रशस्यते ।

* आवाहनम् ॥

† मूलं ॥ ॐ आत्मसंस्थामजांशुद्धां त्वामहं परमेश्वरि ॥ अरण्यामिव हव्यांशं सतीवावाहयाम्यहम् ॥ ॐ आवाहये महादेवि ! श्वेतपर्वतमस्तकात् ॥ सूर्य मंडलतोवापि हृदयाम्बुजगह्वरात् ॥ ब्रह्म विष्णु रुद्र सहित दुर्गे ! देवि ! इहागच्छ ॥ इस मंत्र से भगवती की मूर्ति वा यंत्र में आवाहन करै ॥

आवाहन मुद्रा लक्षणम् ॥१

सम्यक् संपूजितैः पुष्पैः कराभ्यां कल्पिताञ्जलिः ।
आवाहनी समाख्याता मुद्रादेशिक सत्तमैः ॥
अनामामूल संलग्नाङ्गुष्ठाग्राञ्जलिरीरिता ॥
देव्याह्वानकरी चैषा मुद्रावाहन संज्ञका ॥

स्थापनम् ॥

(मू०) ओं तवेयं महिमामूर्तिस्तस्यां त्वं सर्वगः शुभे ॥
भक्तिस्नेह समाकृष्य दीपवत्स्थापयाम्यहम् ॥ २ ॥
ब्रह्म विष्णु रुद्रसहित भगवति दुर्गे इहतिष्ठ ॥

॥ इति संस्थाप्य ॥

स्थापन मुद्रा लक्षणम् ॥

अधोमुखी कृतासैव स्थापनीति निगद्यते ॥
अनया स्थापन्या मुद्रया संस्थाप्य ॥

आसनम् ॥

(मू०) ॐ सर्वान्तर्यामिनिदेवि ! सर्वबीजमयं शुभम् ।
स्वात्मस्थाप्यपरं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् ॥ ३ ॥

---

* तत्रैव वाचस्पतौ ॥ कुर्यादावाहनं मूर्तौमृण्मय्यां सर्व दैवहि ।
प्रतिमायांजले वन्हौ नावाहन विसर्जने ॥
† नवार्ण मंत्रेण ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

आसनंगृहाण नमः

अस्मिन्वरासने देवि ! सुखासीनाऽक्षरात्मके ! ।
प्रतिष्ठिताभवेशि ! त्वं प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

उपविष्टा भवनमः ॥ सन्निधान ॥

(मू०) ओं अनन्यातव देवेशि ! मूर्तिशक्तिरियं वरे ! ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रह तत्परे ! ॥ ४ ॥
ब्रह्म विष्णु रुद्र सहित भगवति चण्डिके इह सन्निधेहि ।

॥ इति सन्निधाय ॥

सन्निधान मुद्रा लक्षणम् ॥

आश्लिष्ठ मुष्टियुगला प्रोन्नताङ्गुष्ठयुग्मका ।
सन्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः ॥

सन्निरोधनम् ॥

(मू०) ओं आज्ञया तव देवेशि ! कृपाम्भोधे गुणाम्बुधे ॥
आत्मानन्दैकतृप्तां त्वां निरुणध्मि पितर्गुरो ॥५॥

ब्रह्म विष्णु रुद्र सहित भगवति दुर्गे इह संनिरुध्यस्व ॥
इति संनिरुध्य ॥

सन्निरोधन मुद्रा लक्षणम् ॥

अंगुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ॥

सन्मुखीकरणम् ॥

(मू०) ओं अज्ञानाद्दुर्मनस्त्वाद्वा वैकल्यात्साधनस्य च ।
यदापूर्णं भवेत्कृत्यं तदप्यभिमुखी भव ॥६॥

ब्रह्म विष्णु रुद्र सहित भगवति चण्डिके इह संमुखीभव ॥
इति संमुखी कृत्य ॥

संमुखी मुद्रा ॥

हृदि अञ्जली बंधनं प्राथनी मुद्रा ।

इत्यर्घम् शिरसि ॥ मधुपर्कम् ॥

पात्रेतु मधुपर्कस्य दध्याज्यं मधु च क्षिपेत् ॥

(मू०) ॐ सर्वकालुष्यहीनायै परिपूर्णसुख दायिनि !
मधुपर्कमिदं देवि ! कल्पयामि प्रसीद मे ॥१६॥

ब्रह्मा विष्णु रुद्र सहितायै चंडिकायै एष मधुपर्कोनमः ॥ इति मुखेदत्वा ॥

इति मधुपर्कम् ॥ आचमनम् ॥

(मू०) ॐ उच्छिष्टोप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरण मात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्यै ते पुनराचमनीयकम् ॥ १७॥

सुगंधित इत्र तैलं ॥

(मू०) ॐ स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकेश्वरि ! दयानिधे ! ।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ! ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥१८॥

ब्रह्म० चंडिकायै सुगंधि द्रव्यं समर्पयामि नमः ॥

उद्वर्तनम् ॥

(मू०) ॐ हरिद्राद्यैस्तमुद्वर्त्य स्नापयेदुभयं पठन् ॥
नाना सुगंधि द्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम् ॥
उद्वर्तनं मयादत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ १९ ॥

ब्रह्म० भगवति चंडिके उद्वर्तनंसमर्पयामि नमः

देवे अंगुष्ठघर्षणे दोषः ॥

नाङ्गुष्ठैर्मर्दयेद्देवं नाधः पुष्पैस्समर्चयेत् ।
कुशाग्रैर्न क्षिपेत्तोयं वज्रपातसमं भवेत् ॥ २० ॥

* पंचामृत स्नानम् ॥

---

* पंचामृत प्रमाण यामले

घृतं क्षीरं तथा नीरं शर्करामधु संयुतम् ।
पंचामृतमिति ख्यातं प्रत्येकन्तुप लम्पलम् ॥

दुग्धस्नानम् ॥

(मू०) ॐ कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयःस्नानार्थं समर्पितम् ॥ २१ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

दधि स्नानम् ॥

(मू०) ॐ पयसस्तु समुत्पन्नं मधुराम्लं शशि प्रभम् ।
दध्यानीतं मयादेवि ! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ २२ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

घृत स्नानम् ॥

(मू०) ॐ नवनीत समुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥२३॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

मधु स्नानम् ॥

(मू०) ॐ तरुपुष्प समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ २४ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

शर्करास्नानम् ॥

(मू०) ॐ इक्षुसार समुद्भूता शर्करा पुष्टिकारिका ।
मलापहारिकादिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ २५ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

एकीकृत्य पंचामृतेन स्नानम् ॥

(मू०) ॐ पयोदधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् ।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ २६ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

चन्दन (गंध) स्नानम् ॥

(मू०) ओं मलयाचल संभूतं चन्दनागरु सम्भवम् ।
चन्दनं देवि ! देवेशि ! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ २७ ॥

पुनः शुद्धोदकेन संस्नाप्य ॥

साङ्ग स्नानम् ॥

(मू०) ॐ परमानन्द बोधाब्धे निमग्न निजमूर्तये ॥
साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीशि ! ते ॥ २८ ॥

सर्वाङ्ग स्नानं समर्पयामि नमः

अभिषेकम् ॥*

(मू०) ॐ ततः सहस्र शंखेन शतं वा शक्तितोपिवा ।
गन्धयुक्तोदकैर्देवीमभिषिंचेन् मनुं स्मरन् ॥ २९ ॥

पुनराचमनीयम् ॥

स्नान वस्त्रोपवीतान्ते नैवेद्यान्तेपि तत्स्मृतम् ।

वस्त्रम् ॥†

(मू०) ॐ माया चित्रपट च्छन्ननिज गुह्योरु तेजसे ।
निरावरण विज्ञान वासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥३०॥

उत्तरीय वस्त्रम् ॥

(मू०) ॐ यमाश्रित्य महा माया जगत्संमोहिनी सदा ।
तस्यै ते परमेशायै कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥३१॥

---

*टि० शिवसूर्यौविहाय महाभिषेकं सर्वत्र शंखेनैव प्रकल्पयेत् । लक्ष्मी सूक्तेन, शक्रादिस्तुत्या, लक्ष्मी सूक्त २० पृ० में है । देवी सूक्तेन वा

† पीतं विष्णौ सितं शम्भौ रक्तं विघ्नार्क शक्तिषु ।
सच्छिद्रंमलिनं जीर्णं त्यजेत्तैलादि दूषितम् ॥
तैलादि दूषिता द्रोगः संछिद्राद्धान्य ता भवेत् ॥
जीर्णाद्दरिद्रता कर्तुः मलिनात्कान्ति हीनता ॥

यज्ञोपवीतम् ॥

(मू०) ॐ यस्याः शक्ति त्रयेणे दं संप्रोतमखिलं जगत्।
यज्ञसूत्राय तस्यै ते यज्ञसूत्रं प्रकल्पये ॥३२॥
आभूषणा भावेऽक्षतान् ॥

(मू०) ॐ स्वभाव सुन्दराङ्गायै नाना देवाश्रयायते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते ॥३३॥
३४ पृष्ठ के अनुसार विशेष पूजन करना

॥ लोकमोहनम् ॥

मूलमंत्रेण पुटितमेकैकं मातृकाक्षरम् ।
विन्यसेद्देवताङ्गेषु योगोयंलोक मोहनम् ॥

गन्धम् ॥

(मू०) ॐ परमानन्द सौभाग्य परिपूर्ण दिगन्तरे ।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वरि ! ॥३४॥

गन्ध मुद्रा ॥

कनिष्ठांगुष्ठ योगेन गंधमुद्रांप्रदर्शयेत् ।
नाना परिमल सौभाग्य द्रव्याणि च समर्पयामि नमः ॥३६॥

॥ अक्षतान् ॥

अक्षतांश्च सुरश्रेष्ठे ! कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ! ॥३७॥

॥ पुष्पाणि ॥

तुरीयवन संभूतं नानागुणमनोहरम् ॥
अमन्दसौरभंपुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥३८॥
तर्जन्यंगुष्ठयोगेन पुष्पमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

॥ ऋतुकालोद्भवानि पुष्पाणि ॥

सेवन्तिका वकुल चम्पक पाटलाब्जैः ।
पुन्नाग जाति करवीर रसाल पुष्पैः ॥३९॥

बिल्व प्रवाल तुलसीदल मालतीभिः ।
त्वां पूजयामि जगदीश्वरि ! मे प्रसीद ॥४०॥

अन्येषां कुसुमानांच यावद्गन्ध विपर्ययम् ॥
पुष्पञ्च पञ्चगव्यञ्च उपचारांस्तथापरान् ॥
घ्रात्वा निवेद्य देवेशि ! नरो नरकमाप्नुयात् ॥
अङ्गसंस्पृष्टमाघ्रातं त्याज्यं पर्युषितं बुधैः ॥
केशकीटोपविद्धानि शीर्णं पर्युषितानि च ॥
स्वयंपतित पुष्पाणि त्यजेदुपहतानि च ॥

देवी पूजने वर्ज्य पुष्पाणि ॥

शक्तौ दूर्वार्कमन्दारान्मालूरंतगरं रवौ ॥
निर्गन्धं केश कीटादि दूषितं चोग्रगंधकम् ॥४१॥

मलिनंतुच्छ संस्पृष्टमाघ्रातं स्वविकासितम् ॥
अशुद्ध भाजनानीतं स्नात्वानीतं च याचितम् ॥४२॥

शुष्कं पर्युषितं कृष्णं भूमिगं नार्पयेत्सुमम् ॥
पत्रं पुष्पं फलं देवे न प्रदद्यादधोमुखम् ॥४३॥

पुष्पाञ्जलौ न तद्दोषस्तथा पर्युषितस्य च ॥

॥ दुर्गा पूजन के विशेप पुष्प ३५ पृष्ठ मे देखिये ॥

पुष्प पूजाविधायेत्थं कुर्यादावरणार्चनम् ॥
अङ्गादि दिक्पहेत्यन्तं ततो धूपादिकंचरेत् ॥४४॥

ततः पुष्पाञ्जलिमादाय सं विन्मयपरेदेवि ! परामृत रस प्रिये ! ॥ अनुज्ञां चंडिके ! देहि परिवारार्चनाय मे ॥

अनेन प्रार्थयित्वा पुष्पाञ्जलिं निवेद्याज्ञां गृहीत्वा देवी मेपरिवार रूपेण पुरतां ध्यात्वा परिवार देवताः पूजयेत् ॥ अत्रसर्वत्र पूज्य पूजकयोरंतराले प्राची ॥ तदनुसारेण प्राच्यादिशश्च प्रकल्प्य ॥ आदौ वायव्यादीश पर्यन्तं गुरुपंक्ति प्रपूजयेत् ॥ तत्र ॥ ते रक्त माल्याम्बर गंधभूषिताः सालंकृताः पंकजविष्टरस्थाः ॥ सर्वे च सालंबन योगनिष्ठाः प्राप्ताखिलैश्वर्य गुणाष्ट कार्थाः ॥ इतिध्यात्वा ॥ ॐ महादेव्यं बा श्री पादुकां पूजयामिनमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं महादेवानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं त्रिपुराम्बा श्री पादुकां पूजया मि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं भैरवानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ एतेदिव्यौघाः ॥ ओं ब्रह्मा नन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं पूर्ण देवानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं चलचित्तानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं स्मरदीपानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं मायाम्बानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं मायावत्यम्बानाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ एते सिद्धौघाः ॥ ओं विमलानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं कुशलानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं भीमसेनानन्दनाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं सुधाकरानन्द नाथ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ओं मीनानन्द

ॐ रंरक्तदन्तिकायै नमः रक्तदन्तिका शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामिनम आग्नेय्याम्॥ ॐ शां शाकम्भर्यै नमः शाकम्भरी शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः नैर्ऋत्याम् ॥ ॐ दुं दुर्गायैनमः दुर्गाशक्ति श्री पादुकांपूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पश्चिमे ॥ ॐ भीं भीमायै नमः भीमा शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः वायव्याम् ॥ॐ भ्रां भ्रामर्यै नमः भ्रामरीशक्ति श्री पादुकांपूजयामि नम स्तर्पयामिनम ईशान्ये ॥ करयोः पुष्पाञ्जलिमादाय ॥ भगवति ! चण्डिके !॥ मू॰ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले !॥ भक्तया समर्पयेतुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ॥ इतियन्त्रे क्षिपेत् ॥ ततोऽष्ट पत्रे षु ॥ ब्राह्म्यादि शक्ति ध्यानम् ॥ ओं ब्राह्मी हंस समारूढां स्वर्ण वर्णां चतुर्भुजाम् । चतुर्वक्त्रां त्रिनेत्राञ्च ब्रह्म कूर्चं च पङ्कजम् ॥ दण्डपद्माक्ष सूत्रञ्च दधतीं चारुहासिनीम् । जटाजूट धरान्देवीं भावयेत्साधकोत्तमः ॥१॥ ओं आं ब्राह्मी श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्प यामि नमः पूर्वे ॥ ओं नारायणीं महादीप्तां श्यामां गरुड्वाहिनीम् । नानालंकार संयुक्तां चारुकेशीं चतुर्भुजाम् ॥ घण्टां शंखं कपालं चक्रं संदधतीपराम् । मधुमत्तांमदोल्लोल दृष्टिं सर्वांग सुन्दरीम् ॥२॥ ओं ईं नारायणी श्रीपादुकां पूजयामि नमस्तर्प यामिनम ईशान्यां ॥ २ ॥ ओं माहेश्वरी वृषारूढां शुक्लांत्रिनयनान्विताम् ॥ कपालं डमरुंचैव वरदाभय शूलकम् ॥ टङ्कं च दधतीं देवीं नाना भरणभूषिताम् ॥३॥ ओं ऊँ माहेश्वरी श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्प यामि नम उत्तरे ॥ ३ ॥

ॐ चामुण्डां चण्डाट्टहासां प्रकटित दशनां भीम-वक्त्रां त्रिनेत्राम्। नीलाम्भोज प्रभाभां प्रमुदित वपुषांनार-मुण्डालिमालाम् ॥ खड्गं शूलं कपालं नरशिर घटितं खेटकं धारयन्तीम् । प्रेतारूढां प्रसन्नांमधुमदमुदितां भावयेचण्ड रूपाम् ॥४॥ ॐ ह्रूं चामुण्डा श्रीपादुकां पूजयामिनमस्तर्पयामि नमः वायव्ये ॥

ॐ कौमारीं कुङ्कुमाभां च त्रिनेत्रां शिखिसंस्थिताम् चतुर्भुजां शक्तिपाशमंकुशाभय धारिणीम् ॥ नाना लङ्कार संयुक्तां प्रसन्नां परिचिन्तये ॥ ५ ॥ ॐ लूं कौमारी श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पश्चिमे ॥

ॐ अपराजितां च पीताभामक्षसूत्र वरप्रदाम् । कमलं मातुलिङ्गं च दधतीं परिचिन्तये ॥ ६ ॥ ॐ ऐं अपराजिता श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः नैर्ऋत्ये ॥ ॐ वाराहीं धूम्रवर्णाभां वराह वदनांशुभाम् । खेटकं खड्ग मुसलं हलं वेदभुजैर्धृताम्॥ ७ ॥ ॐ औं वाराही श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः दक्षिणे ॥

ॐ नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशंवपुः ॥ ८ ॥ ॐ अः नारसिंही श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः। आग्नेये ॥ इति संपूज्य ॥ पूर्ववद्योगिनी पात्रामृतेन (विशेषार्घ्यजलेन) त्रिःसकृद्वातर्पयेत् ॥ ततःपुष्पाञ्जलि

जयाख्या विजया पश्चादजिता चापराजिता ।
नित्या विलासिनी चापि दोग्ध्य् घोरा च मंगला ॥ ५८ ॥
पीठ शक्तय एतास्यु: चण्डिका योगपीठतः ।
आत्मनेहृदयांतोयं मायादिः पीठ मन्त्रकः ॥ ५९ ॥
मंत्र महोदधिः १ तरंगे ।

मादाय भगवति चण्डिके ! देवि ! मू० अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ततोष्ट भैरवान् ध्यायेत् ॥ दधताञ्जन पुञ्ज नीलवर्णान् रुरु वेताल शूल दण्डान् लघु दुन्दुभिः संयुतां त्रिनेत्रां करि हस्तो परि हस्त दण्ड खंडैः गजकृति निवर्तितो गरीयान् भृकुटी संघट्टितैर्ललाट पट्टैः ललितालि कुलाभ कुण्डलग्नान्मुदितान्तः करणान्सुयौवनाढ्यान् ॥ इति ध्यात्वा ॥ ॐ ह्रीं असितांग भैरवाय नम असिताङ्ग भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पूर्वे ॥ ॐ ह्रीं रुरु भैरवाय नमः रुरु भैरव श्री पादुकां पूजयामि न मस्तर्पयामि नम ईशान्ये ॥ ॐ ह्रीं चण्ड भैरवाय नमः चण्ड भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम उत्तरे ॥ ॐ ह्रीं क्रोध भैरवाय नमः क्रोध भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः वायव्ये ॥ ॐ ह्रीं उन्मत्त भैरवाय नम उन्मत्त भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पश्चिमे ॥ ओं ह्रीं कपाल भैरवाय नमः कपाल भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः नैर्ऋत्ये ॥ ओं ह्रीं भीषण भैरवाय नमः भीषण भैरव श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम आग्नेये ॥

इति सम्पूज्य ॥ पूर्व वद्योगिनो पात्रामृतेनत्रिः सकृद्धातर्पयेत् ॥ ततः पुष्पाञ्जलि मादाय भगवति चण्डि के ! देवि ! मू० अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ॥ ततो चतुर्विंशति दले पूर्वादि

आग्नेयान्त दलेषु ॥ ॐ विं विष्णुमायायै नमः विष्णु माया श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ चें चेतनायै नमः चेतना श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ बुं बुद्ध्यै नमः बुद्धि श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ निं निद्रायै नमः निद्रा श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ क्षुं क्षुधायै नमः क्षुधा श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्प यामि नमः ॥ ॐ छां छायायै नमः छाया श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ शं शक्त्यै नमः शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ तृं तृष्णायै नमः तृष्णा श्री पादुकां पजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ क्षां क्षान्त्यै नमः क्षान्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ जां जात्यै नमः जाति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ लं लज्जायै नमः लज्जा श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ शां शान्त्यै नमः शान्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ श्रं श्रद्धायै नमः श्रद्धा श्री पादुकां पूजयामि न मस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ कां कान्त्यै नमः कान्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ लं लक्ष्म्यै नमः लक्ष्मी श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ धृं धृत्यै नमः धृति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि-नमः ॥ ॐ वृं वृत्त्यै नमः वृत्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ श्रुं श्रुत्यैनमः श्रुति श्री

पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ स्मृं स्मृत्यै नमः स्मृति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥

ओं तुं तुष्ट्यै नमः तुष्टि श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ पुं पुष्ट्यै नमः पुष्टि श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ दं दयायै नमः दया श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ मां मात्रे नमः मातृ श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ॐ भ्रां भ्रान्त्यै नमः भ्रान्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ इति सम्पूज्य ॥ पूर्ववद्योगिनी पात्रामृतेन त्रिः सकृद्वा तर्पयेत् ॥ ततः पुष्पाञ्जलि मादाय भगवति चण्डिके ! देवि ! मू० अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं षष्ठ आवरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ॥ ततः भूपुरमध्ये प्रसिद्ध पूर्व दिक्तुत आरभ्य ॐ * लं इन्द्राय नमः इन्द्र श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पूर्वे । ॐ रं अग्नये नम अग्नि श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम आग्नेये ॥ ॐ मं यमाय नमः यम श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः दक्षिणे ॥ ॐ क्षं निर्ऋतये

---

*ॐ लं इन्द्राय सुराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय देवीपार्षदायनमः ॥ ॐ र अग्नयेतेजोधिपतये० ॥ ॐ मं यमाय प्रेताधिपतये० ॥ ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये० ॥ ॐ सं सोमाय नक्षत्राधिपतये० ॥ ॐ हं ईशानाय भूताधिपतये ० ॥ ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधियतये० ॥ ॐ आं ब्रह्मणेलोकाधियतये० ॥

* लोकपाल मुद्रा लोकपालपूजने ॥

पाणि मूले सु संलग्ने शाखाः सर्वाः प्रसारिताः ॥
लोकेशानामियं मुद्रा तेषामर्चासु दर्शयेत् ॥

नमः निर्ऋति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः निर्ऋते ॥ ॐ वं वरुणाय नमः वरुण श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पश्चिमे ॥ ॐ यं वायवे नमः वायु श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः वायव्ये ॥ ॐ सं सोमाय नमः सोम श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम उत्तरे ॥ ॐ हं ईशानाय नम ईशान श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम ईशान्ये ॥ ॐ ह्रीं अनन्ताय नम अनन्त श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः निर्ऋति वरुणयोर्मध्ये ॥ ॐ आं ब्रह्मणे नमः ब्रह्म श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पूर्व ईशानयोर्मध्ये ॥ इति सम्पूज्य ॥ पूर्ववद्योगिनी पात्रामृतेन तर्पयेत् ततः पुष्पाञ्जलि मानीय भगवति चण्डिके! देवि! मू० अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले! ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं सप्तमावरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ॥ पीत शुक्ल सिताकाशविशुद्धरक्त सितासिताः ॥ कोकनद पाटलाभा वज्राद्याः परिकीर्तिताः ॥ इति ध्यात्वा भूपुर बाह्ये ॥

ॐ वं वज्राय नमः वज्र श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पूर्वे ॥ ॐ शं शक्तये नमः शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामिनम आग्नेये ॥

ॐ वं वज्राय वज्रलाञ्छित मौलयेसायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय देवीपार्षदायनमः । इसी प्रकार ॥ ॐ शं शक्तये शक्तिलाञ्छित मौ० ॥ ॐ दं दण्डाय दण्डलाञ्छित० ॥ ॐ खं खड्गाय खड्गलाञ्छित मौ० ॥ ॐ पां पाशाय पाशलाञ्छित० ॥ ॐ अं अङ्कुशाय अङ्कुश ला० ॥ ॐ गं गदायै गदाला० ॥ ॐ शूं त्रिशूलाय त्रिशलला० ॥ ॐ चं चक्राय चक्रला० ॥ ॐ पं पद्माय पद्मला० ॥

ॐ दं दण्डायनमः दण्ड श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः दक्षिणे॥ ॐ खं खड्गाय नमः खड्ग श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः नैर्ऋत्यां ॥ ॐ पां पाशाय नमः पाश श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः पश्चिमे ॥ ॐ अं अंकुशाय नम अंकुश (ध्वजा) श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः वायवे ॥ ॐ गं गदायै नमः गदा श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः उत्तरे ॥ ॐ शूं त्रिशूलाय नमः त्रिशूल श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम ईशान्ये ॥ ॐ चं चक्राय नमः चक्र श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नम अधः (निर्ऋति वरुणयोर्मध्ये) ॥ ॐ पं पद्मायनम ऊर्ध्वे (पूर्व ईशानयोर्मध्ये) ॥ इति सम्पूज्य ॥ पूर्व वद्योगिनी पात्रामृतेनतर्पयेत् ॥ ततः पुष्पाञ्जलिमादाय भगवति चण्डिके! देवि! अभीष्ट सिद्धिं मे देहिशरणा गतवत्सले!॥ भक्त्या-समर्पयेतुभ्यं अष्ट मावरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ॥

ततो देव्याः दक्षिण भागे। ब्रह्म विष्णु रुद्रान् पूजयित्वा पात्रामृतेन संतर्प्य ॥

ततो महालक्ष्मी देव्यस्त्राणि पूजयेत् ॥ तद्यथा ॥ ॐ अं अक्षमालायै नम अक्षमाला श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १ ॐ पं पद्माय नमः पद्म श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ २ ॐ सां सायकाय नमः सायक श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ३ ॐ खं खड्गाय नमः खड्ग श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ४ ॐ वं वज्राय नमः वज्र श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ५ ॐ गं गदायै नमः गदा

श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ६ ॐ चं चक्राय नमः चक्र श्री पादुकां पूजयामि नमः स्तर्पयामि नमः ॥ ७ ॐ सु सुराभाजनाय नमः सुराभाजन श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ८ ॐ शं शंखाय नमः शंख श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ९ ॐ शं शक्तये नमः शक्ति श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १० ॐ पं परशवे नमः परशु श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ ११ ॐ धं धनुषे नमः धनुः श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १२ ॐ चं चर्मायनमः चर्म श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १३ ॐ दं दण्डायनमः दण्ड श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १४ ॐ कुं कुण्डिकायै नमः कुण्डिका श्रीपादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १५ ॐ घं घण्टायै नमः घण्टा श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १६ ॐ पां पाशाय नमः पाश श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १७ ॐ शूं त्रिशूलाय नमः त्रिशूल श्री पादुकां पूजयामि नमस्तर्पयामि नमः ॥ १८ चक्रस्य 'बहिः कोणेषु' वटुक योगिनी क्षेत्रपाल गणेशानपि पूजयेत् तर्पयेच्च ॥

इति सम्पूज्य पूर्व वद्योगिनी पात्रामृतेन तर्पयेत् ॥ ततः पुष्पाञ्जलि मादाय भगवति चण्डि के ! देवि ! मू० अभीष्ट सिद्धिं मेदेहि शरणागत वत्सले ! ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं नवमावरणार्चनम् ॥ इति समर्प्य ॥

अनन्तर, अक्षमाला परशु, गदा, इषु (बाण) कुलिश (वज्र) पद्म धनुष् कुण्डिका, दंड, शक्ति, असि,

चर्म, घण्टा, सुराभाजन, त्रिशूल, पाश सुदर्शन, हल, शंख, मुसल चक्र परिघ, भुशुंडी, शिरः

इनआयुधों का ध्यान करना वा मुद्रा दिखाना

मुद्रापदव्युत्पत्तिमाह तन्त्रे ॥
मोदनात्सर्वं देवानां द्रावणात्पाप सन्ततेः ।
तस्मान्मुद्रेति विख्याता मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः ॥

अथ मुद्राः प्रवक्ष्यामि सर्व तन्त्रेषु कल्पिताः ।
याभिर्विरचिताभिश्च मोदन्ते मन्त्रदेवताः ॥

अक्षमाला मुद्रा ॥१॥

अङ्गुष्ठ तर्जन्यग्रेषु ग्रथयित्वाङ्गुलित्रयम् ।
प्रसारयेदक्षमाला मुद्रेयं परिकीर्तिता ॥ १ ॥

परशु मुद्रा ॥२॥

करे करं तु करयोस्तिर्यक्संयोज्य चांगुलीः ।
संहताःप्रसृताःकुर्यान्मुद्रेयं परशोर्मता ॥ २ ॥

गदा मुद्रा ॥३॥

वाममुष्ट्यन्तरेऽङ्गुष्ठे दक्षिणे सरलाङ्गुलीः ।
वामाङ्गुष्ठः स्पृशेदग्रे योजितः सरलोदरः ॥
अन्योन्याभिमुखौ हस्तौ कृत्वातु ग्रथिताङ्गुलीः ।
अङ्गुल्यौ मध्यमे भूयः सुलग्ने सुप्रसारिते ॥
गदामुद्रेय मुदिता देव्याः सन्तोष वर्द्धिनी ॥ ३ ॥

(भुक्ति मुक्ति प्रदायिनी)

इषु (वाण) मुद्रा ॥४॥ ज्ञानार्णवे

यथाहस्तगता वाणास्तथा हस्तंकुरुप्रिये ! ॥ वाण-मुद्रेयमाख्यातारिपुवर्गनिकृन्तनी ॥ ४ ॥ वामकेश्वरे ॥ दक्षमुष्टस्तु तर्जन्या दीर्घया वाणमुद्रिका ॥ ४ ॥

कुलिश वज्र मुद्रा ॥५॥

दक्षिण हस्तं मुष्टिं बध्वा क्षेपणाकारं कुर्यात् ॥
(प्रक्षिपेत्) ॥

पद्म मुद्रा॥६॥

करौ तु संमुखीकृत्य संहतावुन्नताङ्गुली: । तलान्त-
मिलिताङ्गुष्ठौ कुर्यादेषाब्ज मुद्रिका ॥ ६ ॥

धनुर्मुद्रा ॥७॥

वामस्य मध्यमाग्रन्तु तर्जन्यग्रेण योजयेत् ।
अनामिकां कनिष्ठाञ्च तस्यां गुष्ठे न पीड़येत् ॥
दर्शयेद्वामके स्कन्धे धनुर्मुद्रेयमीरिता ॥ ७ ॥

अथवा

बाहुमूलंस्पृशेत्तेन बाह्वग्रेणैव साधकः ।
धनुर्मुद्रा यशः कीर्ति बल वीर्य विवर्द्धिनी ॥ ७ ॥

कुण्डिका मुद्रा॥८॥

करद्वयं यदा शुभ्र कुण्डाकारं भवेत्तदा ॥
कुण्डिकेति महामुद्रा कथिता पूर्वसूरिभिः ॥ ८ ॥
मुष्टिं कुर्याद्दक्ष हस्तस्य ॥ दर्शयेद्दंड मुद्रिका ॥ ९ ॥

शक्ति मुद्रा ॥१०॥

मुष्टिंकृत्वा कराभ्यां च वामस्योपरिदक्षिणम् ॥कृत्वा-
शिरसिसंयोज्या शक्ति (दुर्गा) मुद्रेयमीरिता ॥ १० ॥

मुद्रा विधान वामकेश्वर तन्त्रतः ॥११॥

असि, खड्ग मुद्रा ॥ ११॥

कनिष्ठे नामिके बद्ध्वा स्वां गुष्ठे नैव दक्षतः ॥
श्लिष्टाङ्गुली तु प्रसृत्ये संदृष्टे खड्गमुद्रिका ॥ ११ ॥

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति मंत्र जलेन सदर्भ शंख-(विशेषार्घ) स्थ जलेन सप्तधा प्रोक्ष्य ततश्चक्र* मुद्रया-भिरक्ष्य वायु (यं) बीजेन द्वादश वाराभि मंत्रित जलेन हविः प्रोक्ष्य ॥ तदुत्थ वायुना तद्दोषं संशोष्य ॥ दक्षिण करतले ऽग्नि (रं) बीजं विचिन्त्य तत्पृष्ठे वाम करतलं कृत्वा नैवेद्यं प्रदर्श्य तदुत्था ग्निना तद्दोषं दग्ध्वा वाम कर तलेऽमृत (वं) बीजं विचिन्त्य तत्पृष्ठ लग्नं दक्षिण कर-तलं कृत्वा नैवेद्यं प्रदर्श्य तदुत्थामृत धारया प्लावितं विभाव्य मूल मन्त्रित जलेन संप्रोक्ष्य तदखिलममृता त्मकंध्यात्वा तत्स्पृष्ट्वा मूल मन्त्रमष्टधा जप्त्वा धेनु* मुद्रांप्रदर्श्य जल गन्ध† पुष्पैरभ्यर्च्य देवतायै पुष्पांजलिं समर्प्य तन्मुखात्तेजो गतमिति ध्यात्वा वामाङ्गुष्ठेन मुख्य नैवेद्य पात्रं स्पृष्ट्वा दक्षिण करेण जलं गृहीत्वा ॥ मूल मन्त्र स्वाहान्तम् द्वादश धा पठित्वा ॐ सत्पात्र सिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् निवे-दयामि देवेशि ! सानुगायै गृहाणतत् ॥ जवनि कां कृत्वा पद्यद्वयं पठेत् ॥

ॐ ब्रह्मे शाद्यैः परित उरुभिः सूपविष्टैः समेतै-र्लक्ष्यासिंजद्वलय करया सादरं वीज्यमानः ॥ नर्मक्षेली प्रहसन् मुखैर्व्याप्नु वन्पंक्ति मध्यम् मुक्त्वा पात्रे कनक घटिते षड्रसं चण्डिके च ॥ १ ॥ शाली भक्तं

---

* चक्र मुद्रा—हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ ॥ कनिष्ठाङ्गुष्ठ कौ लग्नौ मुद्रैषा चक्र संज्ञिता ॥

* २० पेज में धेनुमुद्रा † सत्यन्त्वर्तेन परिषिञ्चामीति प्रातः ऋतंत्त्वा सत्येन परिषिञ्चामीति सायम् ॥

सुभक्तं शिशिर करशितं पायसापूप सूपं, लेह्यं पेयं च चोष्यं सितममृत फलं द्धारिकाद्यं सुखाद्यम् ॥ आज्यं प्राज्यं सम्भोज्यं नयन रुचिकरं राजिकैला मरोच, स्वादी यः शाकराजी परिकरममृताहार जोषं जुषस्व ॥ २ ॥ मू० सां० सा० मश० सप० सत्रा० अ० नैवेद्यं समर्पयामि नमः इति सपुष्पाभ्यां ॥ हस्ताभ्या-मंगुष्ठानामिकाभ्यां नैवेद्य पात्रं त्रिःप्रोद्धरन् ॥ निवे-दयामि भवतीदं जुषाणेदं हविः शिवे ॥

ॐ अमृतो परस्तरण मसि स्वाहेति देविकरे जलं समर्पयेत् ॥ वाम करेण विकचोत्पल सदृशीं ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य दक्षिण करेण समन्त्राः प्राणादि मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ ॐ प्राणायस्वाहा अंगुष्ठानामिका कनिष्ठाभिः ॥ ॐअपा-नायस्वाहा अंगुष्ठ तर्जनी मध्यमाभिः ॥ ॐ उदानाय-स्वाहा अंगुष्ठ मध्यमानामिकाभिः ॥ ॐ व्यानायस्वाहा अंगुष्ठतर्जनी मध्यमानामिकाभिः ॥ ॐ समानायस्वाहा अंगुष्ठादिसर्वाङ्गुलीभिः ॥ ततो आपोशानं दद्यात् ॥

अमृतोपिधान मसिस्वाहा ॥

मूलं—ॐ समस्तदेव देवेशि ! सर्व तृप्तिकरं परम् ॥
अखंडानन्द सम्पूर्ण गृहाणजल मुत्तमम् ॥

इत्यापोशानं (आचमनम्) दत्वा गलसारं नैवेद्यं नैर्ऋ-त्यां दिशि संस्थाप्य तदुच्छिष्टभागं उच्छिष्टचाण्डालिन्यै समर्प्य ॥ कर्पूरादिनानासुगंधमिश्रित ताम्बूलमानीय ॥ फट्मन्त्रेण संप्रोक्ष्य ॥ ॐ वनिस्पति देवताय ताम्बूला-यनम इति संपूज्य ॥

मूलं—ॐ नारिकेरसकर्पूरं पूगभागैरलं कृतम् ॥
नागवल्ली दलोपेतं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

सांगायै० त्र० चण्डिका देव्यै एतत्ते ताम्बूलं समर्पयामि नमः ॥ मूलेन दर्पणं, छत्रं, चामरं, नृत्यं, गीतादिकं समर्प्य सुप्रसन्नां चण्डिका देवीं विभाव्य ॥ यथा ॥

बुद्धिः स्वात्मना कृता दर्पणं मंगलानिच ॥
मनोवृत्ति विचित्राते नृत्य रूपेण कल्पिता ॥ १ ॥
ध्वनयो गीत रूपेण शब्द वाद्य प्रभेदतः ॥
छत्राणि नवपद्मानि कल्पितानि मया शिवे ॥ २ ॥
सुषुम्णा ध्वजरूपेण प्राणाद्या चामरात्मना ॥
अहङ्कारो गजत्वेन वेगः कृतो रथात्मना ॥ ३ ॥
इन्द्रियाण्यश्वरूपाणि शब्दादी रथवत्मना ॥
मनः प्रग्रहरूपेण बुद्धिः सारथि रूपतः ॥ ४ ॥
सर्वमन्यत्तथा कृतं तवोपकरणात्मना ॥

मूलेन पुष्पाञ्जलिंदत्वा त्रिःसन्तर्प्य संपूज्य नीराजनम् कुर्यात् ॥

रं इति प्रज्वाल्य श्रीं ह्रीं ग्लूं स्लूं म्लूं प्लूं न्लूं ह्रीं श्रीं इति गंध पुष्पाभ्यामारार्त्रिकं सम्पूज्य चक्रमुद्रां प्रदर्श्यास्त्रेण प्रोक्ष्य घंटा वादन पूर्वकं मूलेन आरार्त्रि-

---

मन्त्र तन्त्र प्रकाशे

पूजयेद्गन्ध पुष्पाद्यैः शङ्खं वै देव वद्बुधः ॥ त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्य चाज्ञाया शंखे तिष्ठन्ति विप्रेन्द्र तस्मा च्छंखं सदार्चयेत् ॥ ततः प्रदक्षिणाम् ।

॥ नित्य होमं पाठान्ते कर्तव्यम् ॥

क मंत्रेणवा नीराजयेत् ॥ नीराजन स्त्रोत्रं ६१, ६२, ६३ पृष्ठे कथितम् ॥ प्रदक्षिणा संख्या ६५ पृष्ठे उक्तम् ॥

नीराजन विधिः ॥ देवी पुराण उक्तो यथा ॥

तिथितत्वेपि ॥

यवपिष्ट प्रदीपाद्यैश्चूताश्वत्थादि पल्लवैः ॥ औषधीभिश्च मेध्याभिः सर्व बीजैर्यवादिभिः ॥ १ ॥ नवम्यां पर्व कालेतु यात्रा कालेविशेषतः ॥ यःकुर्याच्छ्रद्धया वीर ! देव्या नीराजनं नरः ॥ २ ॥ शंखभेर्यादि निनदैर्जयशब्दश्चपुष्कलैः ॥ यावतोदिवसान्वीर ! देव्या नीराजनंकृतम् ॥ ३ ॥ तावत्कल्पसहस्त्राणि दुर्गालोके महीयते ॥ यस्तु कुर्यात्प्रदीपेन सूर्यलोके महीयते ॥ ४ ॥ कालोत्तर तन्त्रे पञ्चनीराजनानि यथा ॥ यश्च नीराजनंकुर्यात्प्रथमंदीपमालया द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा ॥ ५ ॥ चूताश्वत्थादि पत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्तितम् ॥ पञ्चमं प्रणिपातेन साष्टाङ्गेन यथा विधिः ॥ ६ ॥

पद्मोत्तर खंडे ॥

तस्य वर्त्तिकादि प्रमाणं यथा ॥ कुङ्कुमागुरुकपूर घृत चन्दन निर्मिताः ॥१॥ वर्तिकाः सप्त वा पञ्च कृत्वावन्दापलीयकम् ॥ यःकुर्यात्सप्तदीपेन शंख घंटादिवाद्यकैः ॥ २ ॥ देव्याः पञ्चप्रदीपेन बहुशोभक्ति तत्परः ॥

हरिभक्ति विलासे ॥

ततश्च मूलमन्त्रेण दत्वा पुष्पाञ्जलित्रयम् ॥
महानीराजनं कुर्यान्महावाद्य जयस्वनैः ॥ १ ॥
प्रज्वालयेत्तदर्थं च कर्पूरेण घृतेन वा ॥
आरार्त्रिकं शुभे पात्रे विषमानेक वर्तिकाम् ॥ २ ॥

तन्त्रान्तरे ॥

आदौ चतुष्पादतले च देव्याः ॥ द्वौ नाभिदेशेमुख-
मंडलैकम् ॥ सर्वेषु चाङ्गेषु च सप्तवारानारात्रिकं
भक्त जनस्तु कुर्यात् ॥ १ ॥

किस अङ्ग मे कितनी वार आरती करना ॥

४ बार पैरों में नाभिदेश में २ बार मुखमंडल पर
१ बार सब अंगों में ७ बार आरती करना चाहिये ।

स्कान्दे ॥

बहु वर्ति समायुक्तं ज्वलन्तं चण्डिकोपरि ॥
कुर्यादारात्रिकं यस्तु कल्पकोटिं वसेद्दिवि ॥ १ ॥

स्कान्दे ॥

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं यत्कृतं चण्डिकास्तवम् ॥
सर्वं सम्पूर्णतामेति कृते नीराजने शिवे ! ॥ १ ॥

देवताग्रे मध्ये भूमौ सिन्दूरेण विन्दु त्रिकोण वृत्त चतुरस्रात्मक यन्त्रं विलिख्य ॥ चण्डिका वलिपात्राधार मण्डलाय नमः ॥ इति गन्ध पुष्पाभ्यां सम्पूज्य ॥ अन्न व्यञ्जन युतमाधारं वलिं च निधाय ॥ ॐ बलि द्रव्याय नम इति गन्ध पुष्पाभ्यां सम्पूज्य ॥ मूलं सांगायै सायुधायै स शक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै ब्रह्म, विष्णु, रुद्र, सहितायै त्रिगुणात्मिका चण्डिका देव्यै नम इति सम्पूज्य ॥ वलिमुपनीय ॥ मूलम् एह्येहि जगतां जननि ! इममामिषान्न वलिं गृह्ण २ सिद्धिं देहि २ शत्रुक्षयं कुरु २ ह्लीं ह्लीं हुं फट् स्वाहा एष वलिः साङ्गायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै ब्रह्म, विष्णु, रुद्र सहितायै त्रिगुणात्मिका श्री दुर्गा देव्यै नमः ॥ इति वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां बलि मुत्सृजेत् दक्ष हस्तेन जलन्त्यजेत् ॥ प्रार्थना ॥ ॐ शरणागत दीनार्त परित्राण परायणे ! ॥ सर्वस्यार्ति हरे देवि ! नारायणि ! नमोस्तु ते ॥ सिंह और महिष का बलि भी करना ।

हरिभक्ति विलासे ॥

नीराजनञ्च यः पश्येद्देव मातुश्च हेमुने । ॥
सप्तजन्मनि विप्रःस्यादन्ते च परमं पदम् ॥ १ ॥

विष्णु धर्म्मोत्तरे ॥

धूपं चारार्त्रिकं पश्येत् कराभ्यां च प्रवन्दते ॥
कुलकोटि समुद्धृत्य याति देव्याः परम्पदम् ॥ २ ॥

सिंह बलिमंत्रोयम् शारदायां २६३ पृ० ॐ वज्र नख दंष्ट्रायुधायसिंहाय हुंफट् नमः ॥ दूसरा ॥ ओं सौं वनस्पति पुत्रायसिंहाय इमं बलिं गृह्ण २ स्वाहा ॥ सिंहबलि मंत्रः ॐ भ्रूं महिषशृंगेभ्यो माहिषेभ्यः इमं बलिं गृह्ण २ स्वाहा ॥ महिष बलि मंत्रः ।

पुष्पाञ्जलि के वेदोक्त मन्त्र ६४ पृष्ठ में हैं ।

ॐ सर्वेभ्यो बलिदेवताभ्यो नमः ॥ इति सर्वमभ्यर्च्य ॥ * नाराच मुद्रां बद्ध्वा ॥ बलिदानेन संतुष्टा त्तमध्वं बलिदेवताः ॥ यथासुखंचिरं रन्तु यथेष्ट मुदितावराः ॥ वटुकाद्याः सुराः सर्वे सर्व सिद्धिविधा इतः ॥ शान्तिं पुष्टिं प्रयच्छन्तु त्वत्प्रसादान्महेश्वरिः ॥ स्तुत्वा मुद्रां विसृज्य प्रोक्षणी जलेनात्मानं प्रोक्षयेदिति ।

काम्य प्रयोगेषु शुभाशुभज्ञानार्थम् ॥
अथ शिवाबलि विधानम्

ततः सायंसमये देवतां संपूज्य आमिषान्न यथोपपन्न द्रव्य जल सहित पक्वान्नं पूजा सामिग्रीञ्च श्मशा-

---

* नाराच मुद्रा लक्षणम् ।
अंगुष्टमग्रं यदि मध्यमाग्रं स्पृशेत्स्युरन्याङ्गुलयस्त्वलग्नाः ॥
तदाभवेद्भूतनिषूदनस्य नाराच नाम्नोऽस्त्रवरस्य मुद्रा ॥

नादि निर्जने नीत्वा उदङ्मुखोभूत्वा प्राणनायम्य षडङ्ग न्यासं कृत्वार्घं संस्थाप्य अर्घोदकं गृहीत्वा ॥ अद्येहेत्यादि असुक गोत्रोमुकराशि अमुकशर्माहं ओमचण्डिकाप्रीतये शिवायाः पूजनं बलिदानं च करिष्ये॥ इति संकल्पः ॥ मुक्त चिकुर उत्थाय काली कालीति शिवाआहूय इष्ट देवतात्वेन भावयेत्॥ ॐ शिवायै नम इति सम्पूज्य ॥ त्रिकोण वृत्त चतुरस्र मण्डले बलि पात्रं निधाय अंगुष्ठानामिकाभ्यां धृत्वा ॥ ॐ गृह्ण देवि ! महा भागे शिवे ! कालाग्निरूपिणि !॥ शुभाशुभ फलं व्यक्तं ब्रूहि गृह्ण बलिं मम ॥ इति ॥ तद्देशात्किंचिदुपसृत्य तासु भोक्त्रीषु तिष्ठन्तीषु गंध चन्दनसहित पुष्पांजलि मादायोत्थाय स्वेष्टदेवताधिया प्रणम्य स्तोत्रं पठेत् ॥ ॐ शिवारूप धरे देवि!कालि!कालि!नमोऽस्तुते॥उल्काभुखि!ज्वलज्जिह्वे घोर रूपे शृगालिनि ! श्मशानवासिनि प्रेतशवमांसप्रियेऽनघे! ॥ श्मशान चारिणि शिवे ॥ फेरजंबुक रूपिणि॥२॥ नमोस्तु ते महामाये ! जगत्तारिणि ! कालिके ! ॥ मातंगी कुक्कुटे रौद्रि कालि ! कालि ! नमोस्तु ते ॥३॥ सर्वसिद्धिप्रदे भीमे भयंकरि! भयापहे !। प्रसन्ना भवदेवेशि ! मम भक्तस्य-कालिके ! ॥४॥ संसारतारिणि ! जये ! जय सर्वशुभंकरि॥ विस्रस्तचिकरे चंडि चामुंडे! मुंडमालिनि !॥५॥ संसारकारिणि ! शिवे सर्वसिद्धि प्रयच्छमे ॥ दुर्गे! किराति शवरि प्रेतासनगतेऽनघे ॥६॥ अनुग्रहं कुरुसदा कृपया मां विलोकय॥ राज्यं प्रयच्छ तिकरे वित्तमायुः स्त्रियंशिवम् ॥

शिवा बलि विधानेन प्रसन्नाभव फेरवे नमस्तेस्तु नमस्तेस्तु नमस्तेस्तु नमोनमः ॥ ८ ॥ इति ॥ ततः तदु-

च्छिष्ट यथा काक खराश्च प्रभृतयो दुष्ट जनाभुंजीरन् तथारात्रावेवभूमौ निखन्य गृहमागत्य पुनर्देवतायै चंदन पुष्पादीनि निवेद्य विहितान्नजलं च द्वात्रिंशद्वार-मभिमंत्र्य देवतायै निवेद्य भोजनपानादिकुर्यादिति ॥ समाप्तं ॥

दुर्गा शब्दार्थः ॥

दुर्गो दैत्ये महाविघ्ने भवबन्धे कुकर्मणि ॥ शोके दुःखे च नरके यमदण्डे च जन्मनि ॥ १ ॥ महाभये च रोगे चाप्याशब्दो हन्तृ वाचकः ॥ १॥ एतान्हन्त्येव या देवी सादुर्गा परिकोर्तिताः ॥ अपिच ॥ दैत्य नाशार्थ वचनो दकारः परिकीर्तितः ॥ उकारो विघ्ननाशऽस्य वाचको वेदसम्मतः ॥ २ ॥ रेफो रोगघ्न वचनो गश्च पापघ्न वाचकः ॥ भयशत्रुघ्नवचनश्चाकारः परि-कीर्तितः ॥ ३ ॥ स्मृत्युक्तिश्च श्रवणाद्यस्या अंतेन-श्यन्ति निश्चितम् ॥ ततो दुर्गा हरेः शक्तिर्हरिणा परिकीर्तिता ॥ ४ ॥ दुर्गेति दैत्य शमनो प्याकारो नाश वाचकः ॥ दुर्गं नाशयति या नित्यं सा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ ५ ॥

विपत्ति वाचको दुर्गश्चाकारो नाश वाचकः ॥ तंननाश पुरातेन बुधैर्दुर्गा प्रकीर्तिता ॥६ अस्याः स्वरूपं नन्दं प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम् ॥ आद्यानारायणी शक्तिः सृष्टिस्थित्यन्त कारिणी ॥ करोति च यया सृष्टिंयया ब्रह्मा-दि देवताः॥७॥यया जयति विश्वं च यया सृष्टिः प्रजायते ॥ यया विना जगन्नास्ति मयादत्ताशिवाय सा ॥८ दया निद्रा च क्षुत्तृप्तिस्तृष्णा श्रद्धा क्षमा धृतिः ॥ तुष्टिः पुष्टि-

स्तथाशान्ति लज्जाधि देवता हि सा ॥९॥ वैकुण्ठे सा महासाध्वी गोलोके राधिका सती ॥ मर्त्ये लक्ष्मीश्च क्षीरोदे दक्ष कन्या सती च या ॥१०॥ सा दुर्गामेनका कन्या दैन्य दुर्गति नाशिनी ॥ स्वर्ग लक्ष्मीश्च दुर्गा सा शक्रादीनां गृहे गृहे ॥११॥ सा वाणी सा च सावित्री विप्राधिष्ठातृ देवता ॥ वन्हौ सा दाहिका शक्तिः प्रभा-शक्तिश्च भास्करे ॥१२॥ शोभा शक्तिः पूर्णचन्द्रे जले शक्तिश्च शीतला ॥ शस्यप्रसूति शक्तिश्च धारणा च धरासु सा ॥१३॥ ब्राह्मण्य शक्तिर्विप्रेषु देव शक्तिः सुरेषु सा ॥ तपस्विनां तपस्या सा गृहिणां गृह देवता ॥१४॥

मुक्ति शक्तिश्च मुक्तानां माया सांसारिकस्य सा ॥ मद्भक्तानां भक्ति शक्तिर्मयि भक्ति प्रदा सदा ॥ १५ ॥ नृपाणां राजलक्ष्मीश्च वणिजां लभ्यरूपिणी ॥ पारे संसार सिन्धूनां त्रयी दुस्तरतारिणी ॥ १६ ॥ सत्सुसद्बु-द्धिरूपाच मेधाशक्तिः स्वरूपिणी ॥ व्याख्याशक्तिः श्रुतौ शास्त्रेदातृशक्तिश्चदातृषु ॥ १७ ॥ क्षत्रादीनां विप्रभक्तिः पतिभक्तिः सतीषु च ॥ एवं रूपा च याशक्तिर्मया दत्ता शिवाय सा ॥ १८ ॥ अपिच, शङ्करं प्रति पार्वती वाक्यम् ॥ वैकुण्ठे हं महालक्ष्मी गोलोकेराधिका स्वयम् ॥ शिवाहं शिव लोकेऽपि ब्रह्मलोके सरस्वती ॥ १९ ॥ अहंनिहत्य-दैत्यांश्च दक्ष कन्या सती पुरा ॥ त्वन्निन्दया तनुं त्यक्त्वा सा चाहं शैलकन्यका ॥ २० ॥ रक्तबीजस्य युद्धे च काली च मूर्ति भेदतः ॥ सावित्री वेदमाता हं सीता जनक कन्यका ॥ २१ ॥ रुक्मिणी द्वारवत्यां च भारते भीष्म

कन्यका ॥ सुदाम्नोशापतो दैवात् वृषभानु सुताधुना ॥ २२ ॥ धर्मपत्नी च कृष्णस्य पुण्ये वृन्दावने वने ॥ कृष्णं प्रति पार्वती वाक्यम् ॥ परिपूर्णतमाहं च तव वक्षस्थल स्थिता ॥ तवाज्ञया महालक्ष्मी रहं वैकुण्ठ वासिनी ॥ २३ ॥ सरस्वती च तत्रैव वामपार्श्वे हरेरपि ॥ तवाहं मनसाजाता सिन्धुकन्या तवाज्ञया ॥ २४ ॥ सावित्री देवमाताहं कलया विधि सन्निधौ ॥ तेजःसु सर्व देवानां पुरासत्ये तवाज्ञया ॥ २५ ॥ अधिष्ठानं कृतं तत्र धृतं दिव्यं शरीरकम् ॥ शुम्भादयश्च दैत्याश्च निहताश्चाव लीलया ॥ २६ ॥ दुर्गं निहत्य दुर्गाहं त्रिपुरा त्रिपुरे वधे ॥ निहत्य रक्तबीजं च रक्त बीज विनाशिनी ॥ २७ ॥ तवाज्ञया दक्ष कन्या सती सत्यस्वरूपिणी ॥ योगेनत्यक्त्वादेहं च शैलजाहं तवाज्ञया ॥ २८ ॥ त्वयादत्ताशंकराय गोलोके रासमण्डले ॥ विष्णुभक्ति रहं तेन विष्णुमाया च वैष्णवी ॥ २९ ॥ नारायणस्य मायाहं तेन नारायणी स्मृता ॥ तवाज्ञया पंचधाहं पञ्च प्रकृतिरूपिणी ॥३०॥ कला कलांशयाहं च देवपत्न्योर्गृहेगृहे ॥

प्रथमं पूजिता सा च कृष्णेन परमात्मना ॥ मधुकैटभ भीतेन ब्रह्मणा सा द्वितीयतः ॥३१॥ त्रिपुर प्रेषितेनैव तृतीये त्रिपुरारिणा । भ्रष्ट श्रिया महेन्द्रेण शापादुर्वाससः पुरा ॥३२॥ चतुर्थे पूजिता देवी भक्त्या भगवती सती ॥ ततो मुनीन्द्रैः सिद्धेन्द्रैर्देवैश्च मनु मानवैः ॥३३॥ पूजिता सर्व विश्वेषु बभूव सर्वतः सदा ॥

तेजः सु सर्वं देवानामाविर्भूता पुरा मुने ॥ सर्वे देवाददुस्तस्यै शस्त्राणि भूषणानि च ॥३४॥ दुर्गादयश्च दैत्याश्च निहता दुर्गया मया ॥ दत्तं स्वराज्यं देवेभ्यो वरञ्च यदभीप्सितम् ॥३५॥ कालान्तरे पूजिता सा सुरथेन महात्मना ॥ राजमेधस शिष्येण मृन्मय्यां च सरित्तटे ॥३६॥ मेषादिभिश्च महिषैः कृष्णसारैश्च गण्डकैः ॥ छागैर्मीनैश्च कूष्माण्डैर्भक्तिभिः पूजिता मुने ॥३७॥ वेदोक्तानि च दत्त्वैवमुपचाराणि षोडश ॥ धृत्वा च कवचं ध्यात्वासंपूज्यैवं विधानतः ॥३८॥ राजाकृत्वापरीहारं वरं प्राप यथेप्सितम् ॥ मुक्तिं संप्राप वैश्यश्च संपूज्य च सरित्तटे ॥३९॥ पुष्करे दुस्तरं तप्त्वातपो दुर्गाप्रसादतः ॥ वैश्योजगाम गोलोकं श्रीकृष्णेनानुमोदितः ॥४०॥ राजापिस्वराज्यं गत्वा विविधान्भोगान् बुभुजे षष्टिवर्ष सहस्रकं निष्कण्टकं ततः परं भार्या पुत्रे सन्न्यस्य पुष्करे तपस्तप्त्वा सावर्णि नाम मनुर्बभूव ॥ इति ब्रह्मवैवर्ते ॥

शरत्काले वार्षिकी दुर्गापूजा क्रियते सात्रिधा ॥ सात्विकी राजसी तामसी चेतिविश्रुतिः ॥ सात्विकी निरामिषैर्नैवेद्यैर्जपयज्ञाद्यैश्च ॥ माहात्म्यं भगवत्यास्तु पुराणादिषुकीर्तितम् ॥ पाठस्तस्यजपः प्रोक्तः पठेद्देवी मनास्तथा ॥ देवी सूक्त जपश्चैव यज्ञोवन्हिषु तर्पणम् ॥ राजसी बलिदानैश्च नैवेद्यैः सामिषैस्तथा ॥ सुरामांसाद्यु पाहारैर्जपयज्ञैर्विनातु या ॥ विना मंत्रैस्तामसी स्यात्किरातानां तुसम्मता ॥

पाठक्रमो यथा अर्गलं कीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत् ॥ जपेत्सप्तशतींपश्चात्क्रम एषः शिवोदितः॥१॥ अर्गलंदुरितं हन्ति कीलकं फलदं तथा ॥ कवचं रक्षयेन्नित्यं चण्डिका त्रितयं तथा ॥२॥ आदौ च प्रणवं जप्त्वा स्तोत्रं वा संहितां पठेत् ॥ अन्ते च प्रणवं दद्यादित्यु वाचादिपूरुषः ॥३॥ अकृतिना ब्राह्मणातिरिक्त जनेन स्वहस्त लिखित मल्पफलदायकमतो न पठेत् ॥ कर्मा-शक्तमना न पठेत् शूद्रे न पठेत् आधारे धृत्व पठेन्न-करतल ग्रहणेन पठेत् फलाभावात् ॥

भविष्ये ॥

अग्निहोत्रादि कर्म्माणि वेदयज्ञाः सदक्षिणाः ॥ चण्डिकार्चार्चनस्यैते लक्षांशेनापि नो समाः ॥१॥ सदाता समुनिर्यष्टा सतपस्वी स तीर्थगः ॥ यः सदा पूजयेद्दुर्गां नाना पुष्पोपलेपनैः ॥२ यः सदा पूजयेद्देवीं प्रणमेच्चापि-भक्तितःसयोगी सर्द्धिमांश्चैव तस्यभुक्तिः करे स्थिता॥३ अग्निहोत्रपरे विप्रे वेद वेदाङ्ग पारगे ॥ सुवर्णानां सुवर्ण-स्यशते दत्ते तु यत्फलम् ॥४

तत्फलं लभते राजन् पूजयित्वातु चण्डिकाम् ॥
मालयाविल्व पत्राणां नवम्यां गुग्गुलेन च ॥५॥
मालाद्वयेन सम्पूज्य दुर्गां देवीं नराधिप ! ॥
विल्ववृक्षस्य पत्राणां राजसूय फलं लभेत् ॥६॥

योगरत्नावल्यां पाठक्रमः ॥

कवचं बीजमादिष्टमर्गला शक्तिरुच्यते ॥
कीलकं कीलकं प्राहुः सप्तशत्या महात्मनः ॥१

यामल वचनाद्यथा ॥

सर्वतन्त्रेषु बोजशक्ति कीलकानां प्रथममन्त्र-मुच्चारणम् ॥ तथा ॥ सप्तशती पाठेऽपि कवचार्गला कील-कानां प्रथमं पाठः कर्त्तव्यस्ततो रात्रिसूक्त पाठः ॥ तदुक्तं मरीचकल्पे ॥

रात्रिसूक्तं पठेदादौमध्ये सप्तशतीस्तवम् ॥ प्रान्तेतु पठनोयम्वै देवो सूक्त मितिक्रमः ॥ इतिरात्रिसूक्त पाठो-त्तरमृष्यादि न्यास पूर्वकमष्टोत्तरशतं सहस्रं वा नवार्ण मंत्रजपः कर्तव्यस्तदुक्तम् ॥

नवार्ण मन्त्र पुटितं ततश्चण्डो स्तवं पठेदिति नवार्ण मंत्रजपोत्तरं रात्रिसूक्त पाठमाह कश्चि-त्तदसत् पुटितं मूलमंत्रेणेतिवचनात्पुटितमध्येन्यमंत्र प्रवेशस्य विरुद्धत्वात् शतमादौ शतंचान्ते जपेन्मन्त्रं नवार्णकम् ॥ चण्डीसप्तशतीं मध्येसंपुटोयमुदाहृतः ॥ इति डामरतंत्रविरोधाच्च ततः सप्तशती पाठः पुनर्नवार्ण मंत्र जपः ततोदेवी सूक्त पाठस्ततो रहस्यत्रयपाठ इति क्रमेणपाठः कर्तव्यः ॥

सप्तशती पाठारम्भे शापोद्धारादिकं कर्तव्यं तत्प्र-कार उक्तः केरलैस्तथा च ॥ अन्त्या १३ द्या १, कं १२, द्वि २ रुद्र ११ त्रि ३, दिग १० ब्ध्यं ४, के ९ षिव ५, मदर्तवः ६ अश्वो ७ श्व ७ इति सर्गाणां शापोद्धारे मनोः क्रम इत्युक्ते त्रयोदश प्रथमौ, द्वादश द्वितीयौ, एकादश तृतीयौ, दशमचतुर्थौ, नवम पञ्चमौ, अष्टम षष्ठावध्यायौ पठित्वा सप्तममध्यायं द्विः पठेदिति शापोद्धार प्रकारः ॥

अङ्गहीनो यथा देही सर्व कर्मसु नक्षमः ॥ अङ्ग-षट्क विहीनातु तथा सप्तशतीस्तुतिः ॥ तस्मादेतत्पठि

त्वैव जपेत्सप्तशतीं पराम् ॥ अन्यथा शापमाप्नोति हानिश्चैव पदेपदे ॥ इतिकात्यायनीतन्त्रोक्तेः ॥

कवचादि षडङ्ग रहित केवल सप्तशती पाठ करणमेव शापः ॥ कवचादि साहित्येन तत्करणं मोक्ष-मित्याहुः ॥ रहस्य तन्त्रस्थ गुरु कीलकपटले तु सप्तश-त्याख्यमन्त्रस्य यावज्जीव महं जपं कुर्वंस्ततो न प्रमादं प्राप्नुयामिति निश्चयम् ॥ कृत्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यतीत्युक्तेर्यावज्जोवमहं सप्तशती पाठं प्रसादेन सदसदपि न त्यक्षे ॥ इति दृढ़ संकल्पे-न तदारम्भ उद्धारस्तदभावेन तदारम्भः शाप इति स्थितम् ॥

उत्कीलनम् ॥

उत्कीलने चरित्राणां मध्याद्यन्तमिति क्रमः ॥ इति दुर्गाप्रदोपस्थ केरलोक्तेः ॥ आदौ मध्यम चरित्रं पठित्वाततः प्रथम चरित्रं ततस्तृतीय चरित्रं पठेदितिगुरु कीलक पटले तु ॥

शिव उवाच ॥

पुरा सनत्कुमाराय दत्तमेतन्मयानघ ! ॥ संवर्ता-य ददौ तच्च सचान्यस्मै ददौ च तत् ॥ सर्वत्र चण्डी पाठस्य प्राचुर्येण महीतले ॥ ब्रह्मकाण्डः कर्मकाण्ड-स्तंत्रकाण्डश्च सर्वथा ॥ अभूत्प्रतिहतोनेन शीघ्रसिद्धि प्रदायिना ॥ तदा तेषां च सार्थक्यं कर्तुकामेन भूतले ॥ दानप्रतिग्रहत्वेन मंत्रोयं कीलितोमया ॥ दानप्रति ग्रहाख्यं यत्कीलकं समुदाहृतम् ॥ तदारभ्य च मंत्रोयंकी-

लकेनाभि कीलितः ॥ नसर्वेषांभवेत्सिद्ध्यै ये कीलक पराङ्मुखाः ॥ ये नराः कीलनेनेदं जपन्ति परया मुदा ॥ तेषांदेवो प्रसन्नास्यात्ततः सर्वाः समृद्धयः ॥ त्वत्प्रसूतस्त्वदाज्ञस्त्वद्दासस्त्वत्परायणः ॥ त्वन्नाम चिन्तन परस्त्वदर्थेऽहं नियोजितः ॥ ममार्जितमिदं सर्वं तच्च त्वं परमेश्वरि ! ॥ राष्ट्रं बलं कोषगृहं सैन्यमन्यच्च साधनम् ॥ त्वदधीनं करिष्यामि यत्रार्थे त्वं नियोक्ष्यसि ॥ तत्र देवि ! सदा वर्तें त्वदाज्ञामेव पालयन् ॥ इति संचिन्त्य मनसा स्वार्जितानि धनानिच ॥ कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ समर्पयेन्महादेव्यै स्वार्जितं सकलं धनम् ॥ राष्ट्रं गृहं कोप बलं नवं च यदुपार्जितम् ॥ अस्मिन्मासि मयादेवि ! तुभ्यमेतत्समर्पितम् ॥ इति ध्यात्वा ततो देव्याः प्रसादात्प्रतिगृह्य च ॥ विभज्य पञ्चधा सर्वं त्र्यंशान् स्वार्थं प्रकल्पयेत् ॥ देवपित्रतिथोनां च क्रियार्थं त्वेकमादिशेत् ॥ एकांशं गुरुवेदद्यात्तेन देवो प्रसीदति ॥ तस्य राज्यं स्वकं सैन्यं कोषः साधु विवर्द्धते ॥ इति दान प्रतिग्रह नामक महोत्कीलनं विहितम् ॥ केचित्तु कीलने एव शापोद्धारावित्याहुः

डामर तन्त्रोक्त नवार्ण मन्त्रार्थः ॥

एतन्मन्त्रमहिमातिशयोर्थश्च ॥ डामर तन्त्रोक्तो निरूप्यते ॥ निर्धूतनिखिलध्वान्ते नित्यमुक्तेपरात्परे ॥ अखण्डब्रह्म विद्यायै चित्सदानन्द रूपिणी ॥ अनुसंदध्महे नित्यवयं त्वां हृदयाम्बुजे ॥ इत्थं विशदयत्येषा याकल्याणी नवाक्षरी ॥ अस्या महिमलेशोपि गदितुं केन शक्यते ॥

बहूनां जन्मनामन्ते प्राप्यते भाग्यगौरवात् ॥ इत्यादि ॥ अत्र प्रथम श्लोके सम्बुद्ध्यन्तत्रयन्ततश्चतुर्थ्यंतं ततः पुनः संबुद्ध्यन्तत्रयमिति सप्तभिः पदैः क्रमेण मंत्रे सप्तधा पदच्छेदः ॥ पदानांतत्तद्विभक्त्यन्ततातत्तदार्था-श्चेति कथितम् ॥ तदुत्तर मद्धं नाकांक्षित पदानामध्या-हार उक्तः ॥ इतरत्स्पष्टम् ॥ सच्चिदानन्दात्मक ब्रह्मरूपि-त्वा देवशक्तेरपि त्रिरूपत्वं तत्रचिद्रूपा महा सरस्वती वाग्भवबीजेनसंबोध्यते ॥ ज्ञानेनैवाज्ञाननाशान्निर्धूत निखिलध्वान्त पदेन तद्विवरणं युक्तमेव नित्यत्वं त्रिकालावाध्यत्वम् ॥ अतएव मुक्तत्वं कल्पित वियदादि प्रपञ्चनिरासाधिष्ठानत्वम् ॥ एतेन सद्रूपात्मकमहालक्ष्मी रूपस्य भुवनेश्वरी मंत्रेण संबोधनमिति व्याख्यानम् पर उत्कृष्टः ॥ सर्वानुभव संवेद्य आनन्द एव तस्यैव पुरुषार्थ-त्वात् ॥ आत्मनः कामाय सर्वं प्रियं भवतीति श्रुत्या तदितरेषामपि तदर्थत्वेनानन्दस्यैव सर्वशेषतया परत्वात् ॥ स च मनुषानन्द मारभ्योत्तरोत्तरं शतगुणा-धिक्येन श्रुतौ बहुविधोवर्णितः ॥ तेषु परमातिशायी स एको ब्रह्मण आनन्द इति परमावधित्वेनाम्ना त एव परात्परः तेनानन्द प्रधान महाकाली स्वरूपस्य काम बी-जेन सम्बोधनव्युक्तम् ॥ चामुण्डाशब्दो हि मोक्षकारिणी भूत निर्विकल्पवृत्ति विशेषपरः ॥ तादर्थ्ये चतुर्थी चमूं सेना वियदादिसमूह रूपां डाति लडयोरैक्यात्लाति आदत्ते आत्मसात्कारेण नापूरयतीति व्युत्पत्तेः ॥ पृषोद-रादित्वात्सर्वं सुस्थमित्याहुर्बहवः परन्तु अखण्ड ब्रह्मविद्येत्येव चामुण्डा पदस्यार्थ माहुः ॥ विच्चेइतितु-

चित् च इ इति पद त्र्यात्मकं बीजत्रयेणोक्तानां चित्सदानन्दादीनां वाचकं संबुद्ध्यन्तंबीजत्रयस्य क्रमेण विशेषणम् ॥ अस्य श्री ईतस्य ह्रस्वे कृते सति हे आनन्द ब्रह्म महिषि इत्यर्थः ॥ चित्पदं ज्ञान परम्प्रसिद्ध मेवचका रोपि नपुंसकः—सन्मत्पर इति योज्यम् ॥ अनुसन्दामहे इतिशेषः ॥ तथाच महासरस्वत्यादि रूपे चिदादिरूपे चंडिके त्वां ब्रह्म विद्या प्राप्त्यर्थं वयं सर्वदा ध्यायामः ॥ इति मंत्रार्थः फलितः तस्यायं संग्रहः महासरस्वति चिते महालक्ष्मि सदात्मिके महाकाल्यानन्द रूपं त्वं तत्व-ज्ञान सिद्ध्ये अनुसंदध्महे देवि ! वयं त्वां हृदयाम्बुजे इति अयंचार्थः प्राचीनैर्वर्णित एवात्र सम्यक् परिष्कृत्योक्तः ॥ इति नवार्णमंत्रस्यार्थः ॥

मेरु तन्त्रोक्त अथास्य विधान मुच्यते ॥

अथातः सं प्रवक्ष्यामि चामुण्डायाः महामनुम् ॥ नव वर्णात्मकं यस्य सेवनाद्भुक्ति मुक्तयः ॥ १ ॥ सुरथो यत्प्रसादेन राज्यं प्राप्याभवन्मनुः ॥ संसार बन्धनि-र्नाशि ज्ञान माप्तं समाधिना ॥२॥ मार्कण्डेय पुराणोक्तं चारित्रत्रितयं तव ॥ जपाद्यस्यफलं दद्यात्तं मनुं वच्मिसां-प्रतम् ॥३॥ वाक्लज्जाकामवीजान्ते चामुण्डायै पदं वदेत् ॥ विच्चे नवार्णं मंत्रोयं शक्ति मन्त्रोत्तमोत्तमः ॥४॥ अस्मिन्नवाक्षरे मन्त्रे महालक्ष्मीर्व्यवस्थिता ॥ तस्मात्सुसिद्धः सर्वेषां सर्वदित्तु प्रदीपकः ॥ इति एता वतात्र सिद्धादि विचाराभावोज्ञापितः ॥

अथ पल्लवादि नियमः ॥

मन्त्राणां पल्लवो वासो मन्त्राणां प्रणवः शिरः ॥ शिरः पल्लव संयुक्तो मन्त्रः काम दुघो भवे-दित्युक्तेरस्य पल्लवादि विधिरुच्यते ॥ तत्र प्रणवः प्रसिद्धः ॥ पल्लवश्च ॥ नमोन्तः शान्तिके पुष्टौ प्रणि-पातेच कीर्तितः वश्याकर्षणमोहेषु स्वाहान्तः सिद्धि-दायकः ॥ वौषट् पल्लव संयुक्तो मन्त्रः पुष्ट्यादि साधकः ॥ हुंकार पल्लवोपेतोमारणे ब्राह्मणं विना ॥ यन्त्र भञ्जन कार्येषु सुघोरभय नाशने ॥ वषडन्तः प्रकल्प्यस्तु ग्रहबाधा विनाशकः ॥ उच्चाटनेतु संप्रोक्तो मन्त्रः फट् पल्लवान्वितः ॥ एते पल्लवास्तत्तत्कर्मणि चण्डी पाठेपि श्लोकान्तादौ स्तोत्रान्तादौ वा योज्याः ॥ नन्वत्र केवल मंत्रेणैवेष्ट सिद्धिरस्तु किमृष्यादि पल्ल-वान्त संयोग विशेष विजृम्भित विस्तरेणेति चेन्मैवम् ॥ देवर्षि छन्दो हीनो यः सतु सुप्तो भुजङ्गमः ॥ अशक्तः शक्ति रहितो निष्फलो बीजवर्जितः ॥ अतत्वस्तत्व वियुतो विनियोगोऽप्रभुर्मनुः ॥ न्यास हीनो भवेन्मूको-मृतःस्याच्छिरसा विना ॥ अपल्लवस्तु नग्नः स्यात्सुप्तः स्यादासनं विना ॥ गुरुम्बिना वृथा मन्त्रः अल्प जापेतु शून्यकः ॥ निर्वीर्यो दुष्टदत्तः स्यात्सान्य बीजस्तु कीर्तितः ॥ (दुष्टाय दत्तो दुष्टदत्त इत्यर्थः) इति वचनैरस्य देवर्ष्यादि पल्लवान्ताद्यङ्ग वैधुर्योद्घाटि-तानिष्टफलानुबन्धि भुजङ्गमादि दोषदूषितत्वाव-बोधात् ॥ परेतु ॥ आर्षं छन्दश्च दैवत्यं विनियोगस्त-थैव च ॥ वेदितव्यः प्रयत्नेन ब्राह्मणो न विपश्चितेति ॥

याज्ञवल्क्योक्ते वैदिकैर्मंत्रे यथा ऋष्यादि विनियोगान्त चतुर्भंगहर पल्लवादि विचारोनास्ति तथा स्मिन्नर्णां प्रोत्तस्तुः ॥ इति पल्लवादि विचारः ॥

पृथ्वी ध्यानम्

पंचवर्णं रजश्चित्रा नाना गंध समन्विता ॥ पुष्प प्रकर संकीर्णा घण्टा चामर भूषिता ॥ बालार्क सदृशी रम्या मनः संतोष कारिणी ॥ एवं मूर्ति समाश्रित्य पूजयेत्परमेश्वरीम् ॥ मंत्रैराचमनं कुर्यादेवीं ध्यात्वा हृदम्बुजे ॥

गन्धर्व तन्त्रे

स्वस्थान माश्रिता देवाः सर्वा शीघ्र फलप्रदाः ॥ स्वस्थान वर्जिता देवाः शोकदुःख फल (भय) प्रदाः ॥

इत्यर्गलपुर निवासि गौड़ जातीय सामराज वंशोद्भव बिहारी गोस्वाम्युपाह्व पं० चुन्नीलाल सूनुना श्री विद्या धर्म्म वर्द्धिनी पाठशालायाः कर्मकाण्ड यजुर्वेदाध्यापकेन विद्या भूषण कर्मकाण्ड मणीत्युपाधि विभूषितेन श्री लक्ष्मीनारायणगोस्वामिना दुर्गार्चनकृतौ तन्त्रोक्तयन्त्र पूजनादि विधिः सम्पूर्णः ॥

ओं नमश्चण्डिकायै ॥ तपस्यन्तं महात्मानं मार्कण्डेयं महामुनिम् ॥ व्यास शिष्यो महातेजा जैमिनिः पर्यपृच्छत ॥ जैमिनि रुवाच ॥ महर्षे ! कथमोत्पत्तिं चण्डिकायाः सुविस्तरम् ॥ यथा सर्व मिदं व्याप्तं त्रैलोक्यं स चराचरम् ॥

अथ दुर्गा पाठारम्भः ॥

आदावाचामेत् ॥ ॐ ऐं आत्मतत्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं विद्यातत्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥ ॐ क्लीं शिवतत्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥ ततः मूल मंत्रेण प्राणायामं कुर्यात् ॥ ततः श्रीगणेश गुर्वादीन्नत्वा संकल्पं कुर्यात् ॥ देशकाल

ॐ तत्सदद्य ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे श्री श्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे ह्यार्यावर्तैक देशान्तरगते कलियुगे कलिप्रथम चरणे पुण्यक्षेत्रेऽमुक सम्वत्सरे अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुक करणे अमुकामुकराशिस्थ रव्यादिग्रहस्थित वेलायाममुक गोत्रोत्पन्नामुकशर्म्मा (यजमानस्य) जन्मलग्नात् वर्षलग्नाद्गोचरादमुकामुक स्थान स्थितसूर्यादिग्रह तज्जनितारिष्ट निवृत्ति पूर्वक-दशान्तरदशा चोपदशा दिनदशाजनितारिष्ट ज्वर पीड़ा, दाहपीड़ा, नेत्रकर्णोदरादिपीड़ा, निवृत्तिपूर्वक अल्पायुर्निवृत्ति पूर्वकआधिदैविकाधिभौतिकाध्यात्मिक जनित क्लेश कायिक वाचिक [illegible]सिक त्रिविधार्वौघ निवृत्ति पूर्वकं शरीरारोग्यार्थपरमैश्वर्यादिप्रा[illegible]च ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ ॐ सावर्णिः सूर्यतनयो योमनुः कथ्यतेष्टमः ॥ [illegible]सय तदुत्पत्ति विस्ताराद्गदतोममेत्यारभ्य सावर्णिर्भवितामनु[illegible]न्तपरकस्य मार्कण्डेय पुराणान्तर्गतस्य देवी माहात्म्य प्रकाश[illegible] महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवताकस्य दशाङ्गयुक्तस्याप[illegible] वारणायाष्टोत्तरशता दावन्ते त्र्यम्बकमन्त्र युक्तस्य शापोत्कीलनमन्त्र[illegible]स्य चादौ रात्रिसूक्तस्यान्ते देवी सूक्तस्यामुक मन्त्रेण प्रतिमन्त्र[illegible]पुटितस्य यथा संख्यकावृत्ति पाठमहंकरिष्ये ॥ यजमानपक्षे 'ब्राह्मण[illegible]रा कारयिष्ये'

संकीर्तनान्ते ॥ अस्माकं सर्वेषां सकुटुंबानां क्षेम-स्थैर्यायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं समस्तमंगला-वाप्त्यर्थं अमुकगोत्रस्य अमुकनाम्नो मम (यजमानस्य) श्री जगदम्बा प्रसादसिद्धिद्वारा सर्वापन्निवृत्तिपूर्वक सर्वाभीष्ट फलावाप्ति धर्मार्थ काम मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ सिद्ध्यर्थं राजद्वारतः व्यापारतश्च लाभार्थं विजयार्थं श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवता प्रीत्यर्थं कवचार्गला कीलक पठन एकादशन्यास पूर्वक नवार्ण मन्त्राष्टोत्तर शत जप रात्रिसूक्त पठन पूर्वकं देवीसूक्त पठन नवार्ण मन्त्राष्टोत्तर शत जप रहस्य त्रय पठनान्तं मध्ये मार्कण्डेय उवाच इत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुरित्यन्तं (अमुक मंत्र संपुटितं) श्री चण्डी सप्तशत्याः शत पाठं (नवपाठं) करिष्ये ॥ ब्राह्मण द्वारा (कारयिष्ये) ॥ पूर्व संकल्पित कामना सिद्ध्ये शत चण्डी (नवचण्डी) संख्या पूर्तये पूर्व संकल्पित रीत्याद्य पाठाख्यं कर्म करिष्ये ॥ करिष्यामि ॥ इति नित्य संकल्पः ॥

पुस्तक पूजनम् ॥

ॐ नमः पिशाचि निकरं किनित्रि शूल खड्ग हस्ते सिंहारूढे एह्येहि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां

गृह्णा २ स्वाहा श्री सप्तशती स्वरूपिण्यै ह्रीं चंडिकायै नमः ॥ यथोपचारैः पुस्तक पूजनं विधाय ॥ अथ शापोद्धारः ॥७ बार आदि में ॥

ओं ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिके देवि शापनाशानुग्रहं कुरु २ स्वाहा ॥

उत्कीलनम् ॥ आदि अन्त में २१ बार जपना ॥

ओं श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशती चण्डिका उत्कीलनं कुरु २ स्वाहा ॥

मृतसंजीवनी विद्या ॥ ७ बार आदि में जपना। ओं ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृत संजीवनी विद्या मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा ॥

अथवा, मरीच कल्पोक्त—सप्तशती शापविमोचनम्।

प्रणवं पूर्वं मुद्धृत्य रमा वीजं ततः परम् ॥
रमा कामं ततः क्रोधं तारं वाग्भव संयुतम् ॥१
क्षोभं मोहं ततः पश्चात्कीलयेति त्रिधा द्विठम् ॥
शापमोचनं कृत्वा चण्डी पाठेन्नियोजयेत् ॥२॥

ओं श्रीं श्रीं क्लीं हूं ओं ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय २ ठं ठं ॥ पूर्वं मष्टोत्तरशतं जप्त्वा पश्चान्न्यास

पूर्वक सप्तशती पाठाद्यथायोग्य कामना सिद्धिर्भ-
विष्यतीति नान्यथा । अन्य प्रकारः ॥

रुद्रयामलोक्त दुर्गा शापमोचनम् ॥

ओं नमो दुर्गादेव्यै ॥ ओं अस्य श्री चण्डी शाप विमोचन मन्त्रस्य वसिष्ठ नारद सामवेदाधिपतिब्रह्म ऋषयः गायत्री छन्दः सर्वैश्वर्य कारिणी दुर्गा देवता चरित्रत्रय वीजं ह्रीं शक्तिः कल्पितकार्य सिद्धये चण्डीशाप विमोचने वि-

---

अथ सर्व मन्त्रोत्कीलनाविधिः तन्त्रान्तरे ॥ मूलं नवार्णं वा ॥ ओं ह्रीं ह्यौं दम्रीं दमलवर पीडं मलवर फ्रीं ओं त्रां त्रीं त्रूं त्रैं त्रौं त्रः उत्कीलय स्वाहा ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे मूलम् ७वार जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ॥ दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तु ते ॥ १ ॥ ओं ह्रीं ह्यौं ह्रीं ह्योः ऐं दमलवर फ्रीं उमलवर फ्रीं ओं ह्यौं उत्कीलय स्वाहा मूलम् १ स्वाहा ॥ इत्युत्कीलनम् ॥ ओं विशुद्ध ज्ञान देहाय त्रिवेदी दिव्यचक्षुषे ॥ श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्ध धारिणे त्रैलोक्यं वशी कुरु२ दम कलवर फ्रीं ओं मूलम् १ इति प्रथम श्लोकं समापयेत् ॥ इत्यर्गलामोक्षः ॥ अथ मूलेन षडङ्ग कवच पाठः ११ न्यासः इत्युत्कीलनम् ॥ अथ शापमोचन मन्त्रः ॥ ओं श्रीं ह्रीं क्लीं क्रां क्रीं चण्डिकादेव्यैशापनाशानु ग्रहं कुरु२ स्वाहा ॥ आदावन्ते ७ वारं पठेत् ॥ ओं श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशती चण्डिका उत्कीलनं कुरुकुरु स्वाहा ॥ आदावन्ते २१ वारं पठेत् ॥

नियोगः ॥ ॐ रीं रेतः स्वरूपायै मधु कैटभमर्दिन्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ श्रीं बुद्धि रूपिण्यै महिषासुर मर्दिन्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ क्षुं क्षुधारूपिण्यै देव वन्दिन्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ छां छाया रूपिण्यै दूत संवादिन्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ श्रीं शक्ति रूपिण्यै धूम्रलोचन घातिन्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ तृं तृषा रूपिण्यै चण्ड मुण्ड बध कारिण्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ क्षां शान्ति रूपिण्यै रक्तवीज बध कारिण्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ जां जाति रूपिण्यै निशुम्भबध कारिण्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ लं लज्जा रूपिण्यै शुम्भबध कारिण्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ शां शान्ति रूपिण्यै सौभाग्यदात्र्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ श्रं श्रद्धा रूपिण्यै फलदात्र्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ कां कान्ति-रूपिण्यै राज वरदात्र्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ मां मातृ रूपिण्यै अर्गला सहितायै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ॐ ह्रीं श्रीं हूं दुर्गायै सर्वैश्वर्य कारिण्यै ब्रह्मशाप विमुक्ता भव ॥ ॐ क्लीं ह्रीं ॐ नमः शिवाय अभेद कवच रूपिण्यै ब्रह्मशाप विमुक्ताभव ॥ ॐ

काल्यै कालिफट्स्वाहायै ऋग्वेद रूपिण्यै ब्रह्म शाप विमुक्ता भव ॥ ओं मित्येवं हि महामंत्रान्पठित्वा परमेश्वरि ! ॥ चण्डी पाठं दिवारात्रौ कुर्यादेव न संशयः ॥ एवं मन्त्रं न जानाति चण्डी पाठं करोति यः ॥ आत्मनश्चैव दातृणांक्षयं कुर्यान्न संशयः ॥ इति श्री रुद्रयामले तन्त्रे चण्डी शाप विमोचनम् ॥

पुरश्चरणे दश प्रकाराः शारदायां ११ पटले ॥

जपो होमस्तर्पणञ्च स्वाभिषेकोऽघमर्षणम् ॥ सूर्यार्घ्यं जल (पानं) दानंस्यात्प्रणामं देव पूजनम् ॥ ब्राह्मणानां भोजनञ्च पूर्व पूर्व दशांशतः ॥ इदं सर्व मन्त्रपुरश्चरणे ज्ञेयम् ॥

वाल्मीकीय रामायणे बालकाण्डे ॥

विधि हीनस्य यज्ञस्य सद्यः कर्ता विनश्यति ॥
यथा विधि पूर्वन्तु क्रतुरेषः समाप्यते ॥

कुलार्णव पंचदशोल्लासे ॥

संसार दुखः भूमेश्च यदीच्छेद् सिद्धि मात्मनः ॥
चोह्नापासनेनैव मन्त्र जापी [illegible] ॥
पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पण [illegible] ॥
होमो ब्राह्मण भुक्तिश्च पुरश्चरण [illegible] ॥
यद् [illegible] विहीयेत तत्सङ्ख्या द्विगुणा [illegible] ॥
ज्ञानात् [illegible] कृतं सर्व [illegible] जपात् सिद्ध [illegible] ॥

पराश्न भक्षणात्सिद्धि हानिः ॥

तीर्थं [illegible] पानमन्याति कुरुते धर्म्म सञ्चयम् ।
[illegible] फलंचार्द्धं [illegible] न संशयः ॥
तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन पराङ्गं वर्जयेत्सुधीः ॥
पुरश्चरण काले च काम्य कर्मस्वपीश्वरि ! ॥
जिह्वा दग्धा परान्नेन करौ दग्धौ प्रतिग्रहात् ॥
मनोदग्धः परस्त्रीभिः कार्य सिद्धिः कथंभवेत् ॥

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ कवच प्रारम्भः ॥

ॐ अस्य श्री चण्डी कवचस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः चामुण्डा देवता अङ्ग न्यासोक्त मातरोबीजं दिग्बन्ध देवतास्तत्वं श्री जगदम्बा प्रीत्यर्थे सप्तशती पाठाङ्गत्वे जपे विनियोगः॥

ॐ नमश्चण्डिकायै॥ मार्कण्डेय उवाच ॥

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह! ॥१॥

ब्रह्मोवाच ॥

अस्ति गुह्यतमं विप्र ! सर्वभूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ! ॥२॥
प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ॥ तृतीयं

ॐ श्री चण्डिका के लिये नमस्कार ॥ मार्कण्डेय ऋषि बोले ॥ हे ब्रह्माजी संसार में जो अत्यन्त छिपा हुआ रहस्य है जिससे मनुष्यों की सब प्रकार रक्षा होती है जिसको किसी से भी आपने न कहा हो उसको मुझ से कहिये ॥ १ ॥ ब्रह्माजी ने कहा हे विप्र ! अत्यन्त छिपा हुआ सर्व प्राणिमात्र का उपकार करने वाला पुण्य को देनेवाला देवी का कवच है, हे महामुनि ! तुम मुझसे सुनो ॥ २ ॥ अब क्रम से कवच की ऋषि-

चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥३॥ पञ्चमं
स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ॥ सप्तमं काल-
रात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ॥४॥ नवमं सिद्धि-
दात्री च नव दुर्गाः प्रकीर्तिताः ॥ उक्तान्येतानि
नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥५॥ अग्निना दह्य-

ष्ठात्री नव मूर्तियों के नाम ध्यान के लिये लिखते हैं। पहिली
शैलपुत्री, (हिमालय की बेटी शैलराज हिमालय ने तप
करके प्रार्थना की तब भगवती ने पुत्री रूप हो शैलराज के
यहां जन्म लेकर दोनों को प्रसन्न किया इसी से शैलपुत्री नाम
हुआ) दूसरी ब्रह्मचारिणी, (सच्चिदानन्द प्राप्त करने के लिये)
तीसरी चन्द्रघण्टा वा (चन्द्रमा के समान निर्मल) चौथी
कूष्माण्डा (कुत्सित संताप रूपी दुःखों से युक्त अण्डे के
समान, आधिभौतिक, आधि दैविक आध्यात्मिक [illegible]
दुःखों से युक्त मांस पेशी वालेअंडे कूष्मांड "पेठा" रूप [illegible]
को खाने वाली) ॥३॥

पांचवीं स्कन्दमाता (स्वामिकार्तिक को जो पालन
करने के लिये नियुक्त हुई) छठवीं कात्यायनी (कात्यायन
ऋषि की कन्या) सातवीं कालरात्री (सब प्राणी मात्र को
मारनेवाला काल उसको भी मारने वाली) आठवीं महागौरी
(शिवजी ने क्रीड़ा में काली नाम से पुकारा तब भगवती का
रंग श्याम होगया बाद में तप करने से फिर गौर वर्ण हुआ)
वही महागौरी हुई ॥ ४ ॥ नवमी सिद्धिदात्री है सब कार्य
मात्र की सिद्धि करनेवाली यह नव दुर्गा अर्थात् नव देवियों के

मानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे ॥ विषमे दुर्गमे चैव
भयार्त्ताः शरणं गताः ॥६॥ न तेषां जायते
किञ्चिदशुभं रणसंकटे ॥ नापदं तस्य पश्यामि
शोकदुःखभयं न हि ॥७॥ यैस्तुभक्त्या स्मृता नून
तेषां वृद्धिः प्रजायते ॥ ये त्वां स्मरन्ति देवेशि
रक्षसे तान्न संशयः ॥८॥ प्रेतसंस्था तु चामुण्डा
वाराही महिषासना ॥ ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी

नाम सर्वज्ञ ब्रह्माजी ने कहे हैं ॥ ५ ॥ अब आगे श्लोकों से पाठ का फल कहते हैं ॥

जो मनुष्य जलती हुई अग्नि के बीच में लड़ाई में (दुश्मनों से घिर गया हो), किसी बड़ी विपत्ति में, भय (डर) से दुःखी हो भगवती की शरण में जाने से ॥ ६ ॥ उनका लड़ाई के संकट में बाल भी बांका ('कुछ बुराई') नहीं होता ॥ सर्वदा मंगल ही होता है सब दुःखों को दूर करने वाली देवी उसकी आपत्ति को दूर करती है ॥ ७ ॥ जो मनुष्य निश्चय भक्ति से सदा स्मरण करते हैं उनको धर्म अर्थ (धन) काम (कामना) मोक्ष (बार बार जन्म मरण से रहित होते हैं) मिलते हैं। अर्थात् उन नामों में से एक भी याद करके स्मरण करने से सब दुःख दूर होते हैं। और वृद्धि ही होती है अब आगे देवियों का वर्णन ब्रह्मा जी इस प्रकार करते हैं। कि जो भक्त तुम्हारा स्मरण करते हैं उनकी तुम हमेशा रक्षा करती हो इसमें सन्देह नहीं ॥८॥ चामुण्डा प्रेत पर बैठी हैं वाराही भैंसे पर ऐन्द्री हाथी पर वैष्णवी गरुड़ पर ॥९॥ माहेश्वरी बैल पर कौमारी मोर पर

गरुडासना ॥९॥ माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखि-
वाहना ॥ लक्ष्मीःपद्मासना देवी पद्महस्ता
हरिप्रिया ॥१०॥ श्वेतरूपधरादेवी ईश्वरी वृषवाहना॥
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता ॥११॥ इत्येता
मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ॥ नानाभरणशो-
भाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥१२॥ दृश्यन्ते रथमा-

लक्ष्मी कमल पर और कमल का फूल हाथ में लिये हुए विष्णु की प्रिया (स्त्री) है ॥१०॥ ईश्वरी देवी सफ़ेद रूप धारण किये बैल पर सवार हैं तथा ब्राह्मी हंस पर और सब प्रकार के गहने पहने शोभायमान हैं ॥११॥ इस तरह ये सब देवियाँ सब योगों से युक्त अनेक प्रकार के गहनों की शोभा से शोभित तथा नाना प्रकार के रत्नों से शोभायमान हैं ॥१२॥ सब (सब) देवियाँ (भक्त की रक्षा के लिये) क्रोध से युक्त रथ में बैठी हुई दीखती हैं। अब इनके हथियारों को ब्रह्मा जी बताते हैं। शंख चक्र, गदा, शक्ती हल, मूसल, ॥१३॥ खेटक, तोमर, परशु, पाश, कुन्त, त्रिशूल, शार्ङ्ग दूसरे के शस्त्रों को आकाश में नष्ट करने वाले हथियार को खेटक कहते हैं। जिसके जाने से शत्रु मरता है उस शस्त्र को तोमर कहते हैं, और शत्रुओं को जो काटता है उसको परशु कहते हैं, परशु, फरसा, पाश, (फंदा, फांसी,) कुन्त, (भाला) त्रिशूल सींग का बना हुआ शस्त्र शार्ङ्ग धनुष है ॥१४॥

ये देवियाँ राक्षसों के शरीर नष्ट करने के लिये भक्तों को निर्भय और देवताओं के हित के लिए इस प्रकार शस्त्र

रूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ॥ शङ्खं चक्रं गदा शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥१३॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ॥ कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥१४॥ दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ॥ धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥१५॥ नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे ॥ महाबले महोत्साहे महाभय विनाशिनि ॥१६॥ त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनी ।

धारण करतीं हैं ॥१५॥ कवच पढ़ने से पूर्व देवीजी का ध्यान करना चाहिये अतः ध्यान लिखे जाते हैं ।

हे महारौद्रे हे महाघोरपराक्रमे ! तुमको नमस्कार है हे महाबले ! (मायाशक्ति रूप जिसका बल हो) हे महोत्सा हे ! (संसार की रक्षा करने में जिसका बहुत उत्साह हो) हे महाभयविनाशिनि ! (मृत्यु के समान जो बड़ा डर जिसके ज्ञान देने से नाश हो) ॥१६॥ हे देवि ! हे दुःख से दर्शन देने वाली हे शत्रुओं के भय को बढ़ाने वाली मेरी रक्षा करो मेरा पालन करो ॥

दिग्रक्षा

पूर्व में ऐन्द्री मेरी रक्षा करै अग्नि कोण में अग्नि देवता रक्षा करै ॥१७॥ दक्षिण में वाराही रक्षा करै नैर्ऋति में खड्गधारिणी पश्चिम में वारुणी वायव्य में मृगवाहिनी ॥१८॥ उत्तर में कौमारी ईशान्य में शूलधारिणी ऊपर आकाश में

२६ ॥ नीलग्रीवा बहिष्कण्ठे नलिकां नलकूबरी । स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद्बाहू मे वज्रधारिणी ॥२७॥ हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च । नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत्कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी ॥२८॥ स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनः शोकविनाशिनी ॥ हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥ २६ ॥ नाभौ च कामिनी रक्षेद्गुह्यं गुह्येश्वरी तथा । पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी ॥ ३० ॥ कट्यां भगवती

नखों की शूलेश्वरी रक्षा करै (कूख) कुक्षि की कुलेश्वरी रक्षा करै ॥२८॥ स्तनकी महादेवी रक्षा करै मन की शोकविनाशिनी रक्षा करै ॥ हृदय की ललिता देवी रक्षा करै उदर की शूलधारिणी रक्षा करै ॥२६॥ नाभि की कामिनी रक्षा करै गुह्येश्वरी गुह्य स्थान की रक्षा करै ॥

पूतना कामिका लिंग की रक्षा करै गुदा की महिष वाहिनी रक्षा करै ॥३०॥ कमर की भगवती रक्षा करै जांघ की विंध्यवासिनी रक्षा करै ॥ जंघा की महाबला सब काम देने वाली रक्षा करै ॥३१॥ गुल्फ (पिंडली) की नारसिंही रक्षा करै पैर के ऊपर की तैजसी रक्षा करै ॥ पैर की अंगुलिओं की श्रीधरी रक्षा करै पैर के नीचे की तलवासिनी रक्षा करै ॥३२॥ नखों की दंष्ट्राकराली रक्षा करै बालों की ऊर्ध्व केशिनी रक्षा करै ॥

रोम छिद्रों की कौबेरी रक्षा करै चमड़े की वागीश्वरी रक्षा करै ॥३३॥ रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थि, मेद की पार्वती रक्षा करै ॥

रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी । जङ्घे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ॥३१॥ गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी । पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत्पादाधः स्थलवासिनी ॥३२॥ नखान्दंष्ट्रा कराली च केशाँश्चैवोर्ध्वकेशिनी । रोमकूपेषु कौमारी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥३३॥ रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती । अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ॥३४॥ पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा । ज्वालामुखी नखजालमभेद्या सर्वसन्धिषु ॥३५॥ शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी

आँतों की कालरात्री रक्षा करै पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करै ॥३४॥ पद्मकोष की पद्मावती रक्षा करै कफ की चूड़ामणि रक्षा करै ॥

नख जाल की ज्वाला मुखी तथा सब संधियों की अभेद्या रक्षा करै ॥३५॥ ब्रह्माणी मेरे वीर्य (शुक्र) की रक्षा करै छाया की छत्रेश्वरी रक्षा करै ॥

हे धर्म धारिणी मेरे अहंकार, मन, बुद्धि की रक्षा कर ॥३६॥ तथा प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान इनकी वज्रहस्ता रक्षा करे और प्राण कल्याण की शोभना रक्षा करै ॥३७॥

रस, रूप, गंध, शब्द और स्पर्श की योगिनी रक्षा करै ॥ सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण की नारायणी रक्षा करै॥३८॥

तथा । अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ॥३६॥ प्राणापानौ तथा व्यानमुदानञ्च समानकम् । वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥३७॥ रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी । सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥३८॥ आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी । यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥३९॥ गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके । पुत्रान्रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ॥ ॥४०॥ पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा । राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतःस्थिता ॥४१॥

आयु की वाराही तथा धर्म की वैष्णवी रक्षा करै ॥ यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन और विद्या की सदा चक्रिणी रक्षा करै ॥३९॥ इंद्राणि मेरे गोत्र की रक्षा कर हे चण्डिके मेरे पशुओं की रक्षा कर ॥

महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करै भार्या की भैरवी रक्षा करै ॥४०॥ रास्ते की सुपथ रक्षा करै दुर्गम मार्ग में क्षेमकरी रक्षा करै राजद्वार(चैकरी) में महालक्ष्मी रक्षा करै सब तरफ से भयों में बैठी हुई बिजया रक्षा करै ॥४१॥

यदि कवच में कोई स्थान रह गया हो तौ उसकी पापनाशिनी जयन्ती रक्षा करै ॥४२॥

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु । तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयंती पापनाशिनी ॥४२॥ पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः । कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥४३॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सर्वकामिकः । यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्रप्नोति निश्चितम् । परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले

यदि आत्मा का कल्याण चाहता होतो कवच के विना एक कदम भी न चले ॥

कवच पढ़ने से यह फल मिलता है ।

कवच से रक्षा कर के नित्य जहां २ जाता है॥ ४३ ॥ वहां २ अर्थ, लाभ विजय और सर्व कामनाओं में सिद्धि मिलती है

जिस २ काम की चिन्ता करता है उस २ को निश्चित पाता है ॥

पूजन की सामिग्री क्या किधर रखना गन्धर्व तन्त्र में देखिये ॥

आसन उपविशे देवि ! बद्ध्वा वीरासनादिकम् ॥ उपविश्यततो-मन्त्री द्रव्याणिस्थापयेत्पुरः ॥ गन्धपुष्पाक्षदींश्च दक्षेदीपांश्च सर्वतः ॥ नैवेद्यं दक्षिणे वामे पुरतो वा नपृष्ठतः॥ घृत दीपं दक्षिणे तु तैलदीपन्तु वामतः ॥ वामतस्तु तथा धूपमग्रेवा नतु दक्षिणे ॥ निवेदयेत्पुरो भागे गन्ध पुष्पञ्च भूषणम् ॥ सर्वं स्वदक्षिणे स्थाप्यं वामेचार्घ्यं निवेशयेत् ॥ स्थापयेच्चार्घ्यचोष्यादिनैवेद्यादीनिसंनिधौ ॥ करयोः क्षालनार्थाय पृष्ठे पात्रं विनिर्दिशेत् ॥ स्वस्य शक्त्यनुरूपेण सर्वं संपादयत्नतः ॥ पूजा-द्रव्याणि संप्रोक्ष्य मूलमंत्रेण साधकः ॥दर्शयेद्धेनु मुद्राच द्रव्य शुद्धिरि-तीरिता ॥ नैवेद्यादिकं च यत्तु पुष्प गन्धादिकञ्च यत् ॥ सर्वमाच्छादितं कार्यं यावदावाहयेत्पराम् ॥ राक्षसाः प्रति गृह्णन्ति निराच्छादनकंयतः ॥

पुमान् ॥४४॥ निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः । त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥४५॥ इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् । यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ॥४६॥ दैवीकला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः । जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्यु विवर्जितः ॥४७॥ नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः । स्थावरं जगमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम् ॥४८॥ अभिचाराणि सर्वाणि

पृथ्वी पर परम अतुल ऐश्वर्य को पाता है ॥४४॥ पुरुष भय-रहित होता है संग्राम में अपराजित होता है ॥ कवच से रक्षा किया पुरुष त्रैलोक्य में पूज्य होता है ॥४५॥

देवताओं को भी दुर्लभ इस देवी के कवच को जो कोई नित्य नियम से श्रद्धा सहित तीन बार पढ़ता है ॥ ४६ ॥ उसको दैवकला (देवसंपत्ती) होती है । तीनों लोकों में अपराजित होता है ।

कवच से रक्षा किया हुआ पुरुष अपमृत्यु से रहित १०० वर्ष तक जीता है ॥४७॥

लूता (मकड़ी) जिन कीड़ों के द्वारा शरीर की खाल कटती है । विस्फोटक, (शीतला) के फफोले, कोढ़ आदि सब रोग नष्ट होते हैं ॥ अथ यन्त्र पूजन विधिः ॥

पद्मपत्रे ततश्चक्रे देव्या अग्रदलादितः ॥ वामावर्तेन देवेशि क्रमेण परिपजयेत् ॥ स्वकल्पोक्त क्रमेणैव पूजयेदङ्गदेवताः ॥

मन्त्र यन्त्राणि भूतले । भूचराः खेचराश्चैव कुलजाश्चोपदेशिकाः ॥४९॥ सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा । अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ॥५०॥ ग्रहभूत पिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः । ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥५१॥ नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते । मानोन्नतिर्भवेद्राज्यन्तेजोवृद्धि करं परम् ॥५२॥ यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डित भूतले ।

कवच से पेड़ (कनेर, भांग, कुचला आदि) तथा अफीम का विष सर्प आदि का विष और अतिरिक्त सब तरह के साधारण विष प्रयोग सन्त्र यन्त्र नष्ट होते हैं ॥४८॥

पृथ्वी पर के आकाश के जल के देवता और उपदेश से सिद्ध होने वाले देवता ॥४६॥ साथ में उत्पन्न होने वाले देवता कुल में पैदा हुए गंडमाला (कंठमाला) तथा डाकिनी शाकिनी ये नीच देवता कवच धारण करने से नष्ट होते हैं ॥

आकाश में चलने वाले, डराने वाले, बल वाली डाकिनियां ॥५०॥ और ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस ब्रह्म राक्षस, वेताल, कूष्माण्ड, भैरवादि कवच को हृदय में रखने से नष्ट हो जाते हैं ॥५१॥

तथा राजा के पास से मान की उन्नती होती है (यह कवच) तेज की वृद्धि करने वाला है ॥५२॥ उत्कृष्ट तेज बढ़ाने वाला है जो कवच को पढ़ता है वह कीर्त्ति मण्डित भूतल पर यश से बढ़ता है ॥

जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥५३॥ यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् । तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रकी ॥५४॥ देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् । प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥५५॥ लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ओं ॥५६॥ इति वाराहपुराणे हरिहरब्रह्मविरचितं देव्याः कवचं समाप्तम् ॥ १ ॥

पहले कवच कर के सप्तशतीचण्डी को जपने से ॥५३॥ जब तक पृथिवीपर पहाड़ सहित वन हैं ॥ तब तक पुत्र पौत्र सहित पृथिवी पर सुख से बसता है ॥५४॥

और कवच के पढ़ने से मरने पर देवताओं से भी दुर्लभ स्थान को ॥ महा माया के प्रसाद से मनुष्य पाता है ॥५५॥ और परमरूप प्राप्त होकर शिव के साथ आनन्द पाता है ॥५६॥ पाठ में ऐसा बोलनाः—ओं देव्याः कवचं श्री जगदम्बार्पणमस्तु ॥

इति श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा कवच भाषा समाप्त ॥

तन्त्रान्तरसे ॥

अर्गला के सिद्ध प्रयोगों का विधान क्रम से लिखा जाता है। "जयन्ती मङ्गला काली" इस श्लोक के सम्पुट से महामारी (प्लेग) शान्ति होती है तथा सब प्रकार के उपद्रव भी। "मधुकैटभ विद्रावि वि० इस श्लोक के सम्पुट से राजचोर आदि का भय निश्चय नष्ट होगा। महिषासुर निर्नाश [illegible] से रिपुवर्ग का नाश। वन्दिताङ्घ्रियुगे० इस से राज [illegible] होगा।

अथ अर्गला स्तोत्रम्॥

ॐ अस्यश्री अर्गला स्तोत्र मन्त्रस्य विष्णुऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्री महालक्ष्मीर्देवता श्री गदम्बाप्रीतये सप्तशती पाठांगे जपेविनियोगः ॥

नमश्चण्डिकायै ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥

ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तु ते ॥१॥ जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि ।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोस्तु ते ॥२॥

चंडिका के लिये नमस्कार ॥ मार्कण्डे ऋषि बोले ॥

जय वाली, मोक्ष वाली, सब दुष्टों को खाने वाली, भक्तों के देने के लिये कल्याण इकट्ठा करने वाली, खोपड़ी लेकर घूमने वाली, दुःख से प्राप्त होने वाली, क्षमा करने वाली, चित (चैतन्य) शिव रूप वाली सब प्रपञ्चों को धारण करने वाली, देवों का पोषण करने वाली, पितृ पोषण करने वाली, ऐसे गुणों वाली देवी तुमको नमस्कार हो॥ १ ॥

हे चामुण्डे देवि ! हे मनुष्यों के क्लेश को नाश करने वाली तुम्हारी जय हो हे सर्वगते ! हे देवि ! हे कालरात्रि ! आपकी जय हो आपको नमस्कार है ॥ २ ॥

रक्तबीज बधे० शत्रु से भीति विनाश होगा। अचिन्त्य रूप चरिते० इस से रोग समूल नष्ट होगा। नतेभ्यः सर्वदाभक्त्या० इ[illegible] र्वापत्ति का नाश। स्तुवद्भ्यो भक्ति पूर्वं० इसके जप

मधुकैटभविद्रावि विधातृ वरदे नमः। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥३॥ महिषासुरनिर्नाश भक्तानां सुखदे नमः। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥४॥ रक्तबीजबधे देवि चण्डमुण्ड-विनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥५॥ शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥६॥ वंदिताङ्घ्रियुगेदेवि सर्वसौभाग्यदायिनि।

हेमधुकैटभ को मारने वाली, ब्रह्मा को वर देने वाली, तुम को नमस्कार हो, रूप को दो, जय को दो, यश को दो, तथा काम, क्रोध, शत्रुओं को नष्ट करो ॥ ३ ॥

हे महिषासुर को मारने वाली भक्तों को वर देने वाली तुमको नमस्कार हो, रूप को दो, जय को दो, यश को दो, तथा काम, क्रोध, शत्रुओं को नष्ट करो ॥ ४ ॥

हे रक्त बीज को मारने वाली, हे चण्ड मुण्ड [illegible]नी तुमको नमस्कार हो रूप को दो, जय को दो, यश [illegible]दो, तथा काम, क्रोध, शत्रुओं को नष्ट करो ॥ ५ ॥

हे शुम्भ निशुम्भ तथा धूम्राक्ष को मर्दन कर[illegible]ली तुमको नमस्कार हो रूप दो जय दो यश दो तथा का[illegible]ध शत्रुओं को नष्ट करो ॥ ६ ॥

वा सम्पुट से व्याधि नाश। चण्डिके सततं० ॥ सर्व [illegible]ल प्राप्त होगा। देवि सौभाग्य मारोग्यं० सर्व सुख प्राप्ति [illegible]ल

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥७॥
अचिन्त्य रूपचरिते सर्व शत्रु विनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥८॥
नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे । रूपं
देहि जयं देहि यशोदेहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥
स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१०॥

हे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदिकों से चरण पुजाने वाली, देवताओं को शत्रु बाधा रहित राज्य देने वाली देवी तुमको नमस्कार हो, रूप, जय, यश को दो, तथा काम, क्रोध, शत्रुओं को नष्ट करो।७।

बृहत् चरित्र रूप से युक्त सब शत्रुओं को नष्ट करने वाली तुमको नमस्कार हो रूप को दो, जय को दो, यश को दो, तथा काम, क्रोध, शत्रुओं को नष्ट करो ॥ ८ ॥

हे चण्डिके हे परब्रह्म रूपिणि सर्वदा भक्ति से न त हुये मुझे रूप दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ९

हे व्याधियों को नष्ट करने वाली भक्ति पूर्वक तेरी स्तुति करने से हे परब्रह्ममहिषि रूप दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥ १० ॥

जप से सर्वार्थ सिद्धि । विधेहि द्विषतां नाशं० । सम्पुट वा जप से शत्रु का नाश । विधेहि देवि कल्याणं० से सर्वापत्ति का नाश तथा कुटुम्ब और पशुओं की रक्षा । विद्यावन्तं० इससे ऐश लक्ष्मी जय की वृद्धि होगी । प्रचण्डदैत्य दर्पघ्ने० विवाद तथा व्यवहार में जय होगी । चतुर्भुजे चतु० धर्म्म अर्थ काममो-

चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥११॥ देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१२॥ विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१३॥ विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१४॥ सुरासुरशिरो-

---

हे चंडिके जो तुमको निरन्तर भक्ति से पूजते हैं। उनको रूप दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥११॥

हे प्रकाश रूपे अच्छे सौभाग्य को दो रोग रहित करो ब्रह्मानन्द को दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१२॥

द्वेष करने वालों को नष्ट करके मुझे अत्यन्त बलवान् करो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओ को नष्ट करो ॥१३॥

हे देवि ! कल्याण विपुल धन संपत्ति को करो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१४॥

त्यादि प्राप्त होंगे । कृष्णेन संस्तु० पुरुषार्थ वृद्धि होगी। हिमालय सुता० अनेक प्रकार की सिद्ध होगी। सुरासुर शिरो रत्न० से सर्वज्ञता प्राप्त होगी। इन्द्राणी पति सद्भाव. से चित्त की मलीनता नष्ट होगी। देवि प्रचण्ड. से जलोदर नाश होगा। देवि भक्तजनोद्दाम. से अनावृष्टि दूर होगी ॥ पत्नीं मनोरमां से स्त्री प्राप्त होगी तथा सुख भी प्राप्त होगा ॥

रक्तनिघृष्टचरणोऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१५॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१६॥ प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१७॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१८॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१९॥

हे देव राक्षसों के मुकुट मणियों से घिसे हुए चरण वाली रूप को दो जय दो यश दो तथा काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१५॥

पढ़े लिखे, यशवान्, धनी मुझ को, और सब मनुष्यों को बनाओ जय दो यश दो काम क्रोध तथा शत्रुओं को नष्ट करो ॥१६॥

हे प्रबल दैत्य के घमण्ड को तोड़ने वाली चण्डिके मुझ प्रणत को रूप दो जय दो यश दो तथा काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१७॥

हे चारभुजी हे ब्रह्मा से स्तुति की गई परमेश्वरि ! रूप को दो जय दो यश दो तथा काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१८॥

सदा श्री कृष्णजी महाराज से स्तुति की गई हे अम्बिके ! देवी रूप दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥१९॥

हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२०॥ इन्द्राणी पतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२१॥ देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्प-विनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२२॥ देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२३॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनो वृत्तानुसारिणीम्। तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२४॥

शिवजी से पूजित हे परमेश्वरि! तुम मुझको रूप दो, जय दो, यश दो और काम क्रोध शत्रुओं का नाश करो ॥२०॥

इन्द्र की स्त्री से पता प्राप्त करने के लिए पूजित हे परमेश्वरि! रूप दो जय को दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥२१॥

हे बड़ी-बड़ी भुजा वाले दैत्यों का घमण्ड तोड़ने वाली देवि! रूप दो जय को दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥२२॥

हे पूर्ण रूप से भक्ति करने वाले भक्तों को मोक्ष देने वाली अम्बिके! देवि! रूप दो जय को दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥२३॥

मन को रमण करने वाली मन की इच्छानुसार रहने वाली कठिनता से तरने लायक संसार सागर को तराने वाली

इदंस्तोत्र पठित्वातु महास्तोत्रं पठेन्नरः । स तु सप्त-शतीसंख्यावरमाप्नोति सम्पदाम् ॐ॥२५॥ इति मार्कण्डेयपुराणे अर्गलास्तोत्रं समाप्तम् ॥

अथ कीलकम् ॥

ॐ नमश्चण्डिकायै॥ मार्कण्डेय उवाच ॥

ॐ अस्य श्री कीलक मन्त्रस्य शिव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्री महासरस्वती देवता श्री जगदम्बा प्रीयर्त्थं सप्तशती पाठांगे जपे विनियोगः ॥

ॐ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे । श्रेयः प्राप्ति निमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥१॥ सर्व-

---

कुलोत्पन्न पत्नी को दो जय दो यश दो और काम क्रोध शत्रुओं को नष्ट करो ॥२४॥

इस स्तोत्र को पढ़ कर जो मनुष्य महा स्तोत्र पढ़ता है, तो वह सप्तशती के पाठ के फल के समान फल पाता है संपत्ति भी पाता है ॥२५॥

इति श्री पं० घनश्याम गोस्वामी कृत अर्गला का भाषानुवाद समाप्त ॥

श्री देवीजी के लिये नमस्कार ॥ मार्कण्डेय ऋषि बोले ॥

श्री अर्द्ध चन्द्र धारी निर्मल ज्ञान रूप देह वाले वेद त्रय रूप दिव्यतीन नेत्र वाले कल्याण की प्राप्ती के लिये शिवजी को नमस्कार है ॥ १ ॥

मेतद्विजानीयान्मन्त्राणामपि कीलकम् । सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥२॥ सिध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि । एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिध्यति ॥३॥ न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते । विना जाप्येन सिध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥४॥ समग्राण्यपि सिध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः । कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥५॥ स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तञ्चकार सः । समाप्नोति सुपुण्येन तां यथा-

---

मन्त्रों का शापउत्कीलन आदि इन सब को जानकर, सदा जप करने वाला सप्तशती के पाठ विना भी कल्याण को पाता है ॥ २ ॥

इस प्रकार सप्तशती का पाठ व जप करने वाले को उच्चाटन आदि सब बस्तु सिद्ध होती हैं इस स्त्रोत्र मात्र से स्तुति करने पर भगवती सिद्ध होती है ॥ ३ ॥

इस पुरुष को कोई भी मन्त्र और औषधि कार्य सिद्धि के लिये उपयुक्त है । जप के विना ही इस स्त्रोत्र (उत्कीलन) से उच्चाटन आदि सिद्धि होते हैं ॥ ४ ॥

सब उच्चाटन मोहन आदि इससे सिद्ध होते हैं वा नहीं यह शंका करके पहले शिवजी ने इस कल्याणकारी शुभ उत्कीलन को सब ऋषियों से बुलाकर कहा ॥ ५ ॥

वन्नियन्त्रणाम् ॥६॥ सोऽपि क्षेम मवाप्नोति सर्व-मेव न संशयः। कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥७॥ ददाति प्रतिगृह्णाति ना-न्यथैषा प्रसिध्यति। इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥८॥ यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम्। ससिद्धः सगणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥९॥ न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह

इसके बाद चण्डिकाजी के स्तोत्र को गुप्त कर दिया। इस स्तोत्र के पाठ करने से जो पुण्य मिलता है उसकी समाप्ति नहीं है। इसलिये पहले की उस संकोच शीलता को छोड़दो ॥ ६ ॥

और मन्त्रों का जप करने वाला भी सब ही कल्याणों को पाता है इसमें संशय नहीं है ॥ ७ ॥

कृष्ण चतुर्दशी अथवाशुक्लाष्टमी समाहित एकाग्र होकर सब वस्तु भेट में देता है पीछे संसार यात्रार्थ प्रसादरूप ग्रहण करता है।* उससे देवीजी प्रसन्न होती हैं। दूसरी तरह नहीं। इस प्रकार महादेवजी ने सिद्धी रोकने को यही कीलन किया है ॥८॥

जो इसको निष्कीलन करके नित्य जपता है वह सिद्ध होता है वा गण होता है। अथवागन्धर्व हो जाता है ॥ ९ ॥

---

* नोट देखो १७१ पृष्ठ में उत्कीलन तथा शापोद्धार।

कवच से शरीर की रक्षा होती है। अर्गला लोहे की व काष्ठ की होती है जिसके लगाने से किवाड़ नहीं खुलते यही फल इसके पाठ से होता है कोई प्रकार की बाधा घर में नहीं आ सकती। और कीलन से उत्कीलन होता है अतः इनका पाठ अवश्य करना चाहिये।

जायते । नापमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१०॥ ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति । ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥११॥ सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद् दृश्यते ललनाजने । तत्सर्वं त्वत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥१२॥ शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः । भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥१३॥ ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभग्यारोग्यसम्पदः । शत्रुहानिः परोमोक्षः स्तूयते सा न किंजनैः ॐ ॥१४॥ इति भगवत्याः कीलक स्तोत्रं समाप्तं शुभम्भूयात् ॥३॥❀॥❀॥

उस जप करने वाले को कहीं भी घूमने से भय नहीं लगता। न अल्पायु होता तथा मरने पर मोक्ष हो जाती है॥१०॥

विधि जान करके प्रारम्भ करे विधी को विना जाने प्रारम्भ करने से नष्ट हो जाता है।

इसलिये इस संपूर्ण स्तोत्र को जान करके ही विद्वान् प्रारम्भ करते हैं॥ ११ ॥

सौभाग्यादिक जो स्त्रियों में दिखाई देते हैं। वह सब इसके प्रसाद से हैं इसलिये यह जप करने योग्य है॥ १२ ॥

इस स्तोत्र को धीरे २ जपने से संपत्ति होती है। जोर से पाठ करने से संपूर्ण संपत्ति प्राप्ति होती है इसलिये जोर से प्रारम्भ करते हैं जिसके प्रसाद से सोभाग्यादि संपत्ति

अथ नवार्ण विधिः ॥

श्रीगणपतिर्जयति ॥ॐ अस्य श्रीनवार्ण-मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्राऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टु-पछन्दांसि श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः नन्दा शाकम्भरी भीमाः शक्तयः रक्तदन्तिका दुर्गा भ्रामर्यो वीजानि अग्निवायुसूर्यास्तत्वानि ऋग्यजुसामवेदाः ध्यानानि श्रीमहाकालीमहालक्ष्मी महासरस्वतीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः ॥

ओं ब्रह्मविष्णुरुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि । ओं गायत्र्युष्णिगनुष्टुपछन्दोभ्यो नमो मुखे । ओं महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवता-भ्यो नमः हृदि ॥ ओं नन्दाशाकम्भरी भीमा शक्ति-भ्यो नमो दक्षिणस्तने । ओं रक्तदन्तिका दुर्गा भ्रामरी वीजेभ्यो नमो वामस्तने । ओं अग्निवायुसूर्यतत्वे-भ्यो नमो नाभौ । इति ऋष्यादि न्यासः ॥ अथवा

मिलती है । शत्रु नष्ट होते हैं मोक्ष प्राप्त होती है । फिर भी मन्दभागी जन इसकी स्तुति क्यों नहीं करते ?

इति श्री पं० घनश्याम गोस्वामी कृत कीलक भाषा समाप्त ॥

तन्त्रान्तरे । (ऐंबीजम् ह्रींशक्तिः क्लीं कीलकम् ओं ऐं बीजाय नमो गुह्ये । ओं ह्रींशक्त्ये नमः पादयोः । ओं क्लीं कीलकाय नमो नाभौ । इति पाठान्तरम्) ॥ मूलेन करौ संशोध्य ।

मन्त्र महोदधौ १८ तरंगे १११ श्लोकतः॥ नवार्णा एकादश न्यास प्रकारः ॥ तत्रादौ शुद्ध मातृ-का न्यासः प्रथमः ॥ पृष्ठे १०४ के मुताबिक करना ॥

कृतेनयेन देवस्य सारूप्यं याति मानवः ॥

इस प्रथम न्यास के करने से मनुष्य देवी रूप को प्राप्त होता है।

सारस्वत न्यास २॥

अस्मिन्सारस्वते न्यासे कृते जाड्यं विनश्यति ॥

दूसरे सारस्वत न्यास के करने से मूर्खता नाश होती है।

ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामिकयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः अङ्गुष्ठयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः करपृष्ठयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणिबन्धयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः कूर्परयोः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः हृदये ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिखायाम् ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं नमः कवचे ॥ ओं

ऐं ह्रीं क्लीं नमः नेत्रयोः ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अस्त्रायफट् ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पूर्वे ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नम आग्नेये ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः याम्याम् ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नैर्ऋत्ये ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पश्चिमे ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः वायव्ये ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नम उत्तरे ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नम ईशान्ये ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नम ऊर्ध्वे ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नम अधः ॥ इति द्वितीय सारस्वत न्यासः ॥

अथ तृतीय मातृका गण न्यासः ॥

तृतीयेस्मिन्कृते न्यासेत्र लोक्य विजयी भवेत् ॥

इस तीसरे न्यास के करने से मनुष्य त्रिलोकी को जीतता है ॥

ॐ ह्रीं ब्राह्मी पूर्वतः मां पातु ॥ ॐ ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां मां पातु ॥ ॐ ह्रीं कौमारी दक्षिणे मां पातु ॥ ॐ ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्ये मां पातु ॐ ह्रीं वाराही पश्चिमे मां पातु ॥ ॐ ह्रीं नारसिंही वायव्ये मां पातु ॥ ॐ ह्रीं इन्द्राणी उत्तरे मां पातु ॥ ॐ ह्रीं चामुण्डा ईशान्ये मां पातु ॥ ॐ

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिरसि २०८ पृष्ठ के नीचे से दूसरी पंक्ति हृदये से आगे जोड़ लेना ।

ह्रीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं मां पातु ॥ ओं ह्रीं सप्तेश्वरी पाताले मां पातु ॥ ॥ इति तृतीय न्यासः ॥

अथ चतुर्थः षड्देवी न्यासः ॥

तुर्यं न्यासं नरः कुर्याज्जरा मृत्युं व्यपोहति ॥

चौथे न्यास के करने से मनुष्य वृद्धावस्था तथा मृत्यु को दूर करता है ॥

ओं कमलाङ्कुशमण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं मे पातु ॥ ओं खड्गपात्र करा रक्तदन्तिका दक्षिणाङ्गं मे पातु ॥ ओं पुष्पपल्लव संयुताशाकम्भरी पृष्ठाङ्गं मे पातु ॥ ओं धनुर्बाणकरा दुर्गार्तिहारिणी दुर्गा वामाङ्गं मे पातु ॥ ओं शिरः पात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणान्तं मे पातु ॥ चित्रकान्ति भृद्भ्रामरी चरणाभ्यां शिरः पर्यन्तं मे पातु ॥ इति चतुर्थ न्यासः ॥

अथ ब्रह्माख्य नामक पंचम न्यासः ॥

कृतेऽस्मिन्पञ्चमे न्यासे सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥

इस पञ्चम न्यास के करने से मनुष्य सब कामना को प्राप्त होता है।

ओं ब्रह्मा सनातनः पादादि नाभि पर्यन्तं मां पातु ॥ ओं जनार्दनः नाभेर्विशुद्धि पर्यन्तं नित्यं मां पातु ॥ ओं रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेर्ब्रह्मरंध्रान्तं मां पातु ॥ ओं हंसः पादद्वयं मे पातु ॥ ओं वैनतेयः कर

द्वयं मे पातु ॥ ओं वृषभश्चक्षुषी मे पातु ॥ ओं गजाननः सर्वाङ्गानि मे पातु ॥ ओं सर्वानन्दमयो हरिः परापरौ देह भागौ मे पातु ॥ इति पञ्चमो ब्रह्मादि न्यासः ॥

अथ महालक्ष्म्यादि षष्ठन्यासः ॥

षष्ठोस्मिन्विहितेन्यासे सद्गतिं प्राप्नुयान्नरः ॥

इस छठे न्यास के करने से मनुष्य सद्गति को प्राप्त होता है ॥

ओं अष्टादश भुजायुक्त महालक्ष्मीर्मध्यं मे पातु ॥ ओं अष्टभुजा युक्त सरस्वती ऊर्ध्वं मे पातु ॥ ओं दशभुजा मण्डिता महाकाली अधः मे पातु ॥ ओं सिंहः हस्तद्वयं मे पातु ॥ ओं परहंसोक्षियुग्मम् मे पातु ॥ ओं दिव्यमहिषारूढो यमः पद द्वयं मे पातु ॥ ओं महेशश्चण्डिका सहितः सर्वाङ्गानि मे पातु ॥ इतिषष्ठन्यासः ॥

अथ सप्तम बीजमन्त्र न्यासः ॥

विन्यसेत् सप्तमेन्यासे कृते रोगक्षयोभवेत् ॥

इस सप्तम न्यास के करने से मनुष्य का रोग नाश होगा ।

ओं ऐं नमः शिखायाम् ॥ ओं ह्रीं नमः दक्ष-नेत्रे ॥ ओं क्लीं नमः वामनेत्रे ॥ ओं चां नमः दक्ष-कर्णे ॥ ओं मुं नमः वामकर्णे ॥ ओं डां नमः दक्ष-

नासापुटे ॥ ॐ यैं नमः वाम नासापुटे ॥ ॐ विं नमः मुखे ॥ ॐ च्चें नमः गुदे ॥ इति वीजन्यास सप्तमः ॥

अथाष्टम विलोम वीजन्यासः ॥

कृतेस्मिन्नष्टमे न्यासे सर्वं दुःखं विनश्यति ॥

इस अष्टम न्यास के करने से सब दुःख नाश होगा ॥

ॐ च्चें नमः गुदे ॥ ॐ विं नमः मुखे ॥ ॐ यैं नमः वाम नासापुटे ॥ ॐ डां नमः दक्ष-नासापुटे ॥ ॐ मुं नमः वाम कर्णे ॥ ॐ चां नमः दक्ष कर्णे ॥ ॐ क्लीं नमः वाम नेत्रे ॥ ॐ ह्रीं नमः दक्ष नेत्रे । ॐ ऐं नमः शिखायाम् ॥ इति अष्टम न्यासः ॥

कुर्वीत नवमं न्यासं मन्त्र व्याप्ति स्वरूपकम् ॥

इस नवम न्यास करनेसे देवत्व प्राप्त होता है ॥

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः मस्तकाच्चरणा-पर्यन्तं पूर्वाङ्गे ॥ ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणा वधि दक्षिणाङ्गे ॥ ॐ मूलं ९ नमः मस्तका-च्चरणा वधि पृष्ठे ॥ ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्च-रणावधि वामाङ्गे ॥ ॐ मूलं ९ नमः मस्तकात्पा-दान्तम् ॥ ॐ मूलं ९ नमः पादादि शिरोन्तम् ॥ इति नवमोन्यासः ॥

अथ दशम षडङ्ग न्यासः ॥

कृतेस्मिन्दशमे न्यासे त्रैलोक्यं वशगं भवेत् ॥

इस दशमन्यास करने से तीनों लोक वश होते हैं ॥

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः हृदयाय-नमः ॥ॐ मूलं ९ नमः शिर से स्वाहा ॥ॐ मूलं ९ नमः शिखायैवषट् ॥ ॐ मूलं ९ नमः कवचाय हुम् ॥ ॐ मूलं ९ नमः नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ॐ मूलं ९ नम अस्त्राय फट् ॥ दशमषडंग न्यासः ॥

अथ एकादशन्यासः

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा॥
शंखिनी चापिनी बाणा भुशुण्डी परिघायुधा ॥१॥
सौम्या सौम्य तराशेष सौम्येभ्यस्त्वति सुन्दरी ॥
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥२॥ यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥
सर्वस्य या शक्तिः सात्वं किं स्तूयसे मया ॥३॥ यया त्वयाजगत्स्रष्टा जगत्पातात्तियो जगत् ॥ सोपि निद्रा-वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥४॥ विष्णुः शरीर ग्रहणमहमीशान एव च ॥ कारितास्ते यतो-ऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ॥५॥

आद्यं ऐं बीजं कृष्णवर्णं ध्यात्वा सर्वांगे विन्यसामि ॥

ऐं बीज को श्याम रंग सब शरीर में ध्यान करना

ॐ शूलेनपाहिनो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ॥
घंटा स्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥१॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ॥
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ! ॥२॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्तिते ॥
यानि चात्यर्थ घोराणि तैरक्षास्मांस्तथा
भुवं ॥३॥ खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि
तेंबिके ॥ करपल्लव संगीनि तैरस्मान्रक्षसर्वतः ॥४॥

द्वितीयं ह्रीं बीजं सूर्य सदृशं ध्यात्वा सर्व (पृष्ठ) तान्यसेत॥

ह्रीं को सूर्य समान सब शरीर में ध्यान करना ।

ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ॥
भयेभ्यस्त्राहिनो देवि ! दुर्गे ! देवि नमोस्तु ते ॥१॥
एतत्तेवदनं सौम्यं लोचनत्रय भूषितम् ॥ पातुनः सर्व-
भूतेभ्यः कात्यायनि ! नमोस्तु ते ॥२॥ ज्वालाकरालम-
त्युग्रमशेषा सुरसूदनम् ॥ त्रिशूलं पातुनो भीतेर्भद्रकाली
नमोस्तु ते ॥३॥ हिनस्तिदैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्यया-
जगत् ॥ सा घण्टा पातुनो देवि ! पापेभ्यो नः सुतानिव
॥४॥ असुरासृग्वसा पंक चर्चितस्ते करोज्वलः ॥ शुभाय
खड्गो भवतु चण्डिके ! त्वां नतावयम् ॥५॥

तृतीयं क्लीं बीजं स्फटिकाभं ध्यात्वासर्वांगे विन्यसेत्॥

क्लीं को चन्द्रमा समान सब शरीर में ध्यान करना ।

मूलषडंगन्यासः

ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ विच्चे कनिष्ठकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादि । ओं ऐं हृदयाय नमः । ओं ह्रीं शिरसे स्वाहा । ओं क्लीं शिखायै वषट् । ओं चामुण्डायै कवचाय हुं । ओं विच्चे नेत्र त्रयाय वौषट् । ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चे अस्त्रायफट् । ततोऽक्षरन्यासः । ओं ऐं नमः शिखायाम् । ओं ह्रीं नमो दक्षिणनेत्रे । ओं क्लीं नमो वामनेत्रे । ओं चां नमो दक्षिणकर्णे । ओं मुं नमो वामकर्णे । ओं डां नमो दक्षिणनासायाम् । ओं यैं नमो वामनासायाम् । ओं विं नमो मुखे । ओं च्चें नमो गुह्ये । एवं विन्यस्याष्टवारं मूलेन व्यापकं कुर्यात् ।

अथ दिङ्न्यासः

ओं ऐं प्राच्यै नमः । ओं ऐं आग्नेय्यै नमः । ओं ह्रीं दक्षिणायै नमः । ओं ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ओं क्लीं प्रतीच्यै नमः । ओं क्लीं वायव्यै नमः । ओं चामुण्डायै उदीच्यै

तन्त्रान्तरोक्त अक्षमाला करण प्रकारः

समानेनाक्षसूत्रस्य विधानमभिधीयते ॥ यथा लाभं यथा बुद्धि अक्षाण्यानीय यत्नतः ॥ अन्योन्य समरूपाणि नाति स्थूलकृशानि च

नमः । ऊँ चामुण्डायै ईशान्यै नमः । ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।

मानसोपचारैः सम्पूज्य ॥

अथ ध्यानम् ॥

शंखं चक्रं गदां बाणान्पाशं परिघ शूलके ॥
भुशुण्डीं च शिरः खड्गं दधतीं दश वक्त्र काम् ॥१॥
तामसीं सिद्धिदां नौमि महाकाली दशांघ्रिकाम् ॥
मालां च परशुं बाणान् गदां कुलिश मेवच ॥२॥
पद्मं धनुः कुण्डिकां च दंडं शक्तिमसिं तथा ॥
खेटकं जलजं घंटां सुरापात्रं च शूलकम् ॥३॥
पाशं सुदर्शनं चैव दधतीं लोहितं प्रभाम् ॥
पद्म स्थितां महालक्ष्मीं भजे महिषमर्दिनीम् ॥४॥
घण्टां शूलं हलं शंखं मुसलासि धनुः शरान् ।
दधतीमुज्वलां नौमिदेवीं गौरी समुद्भवाम् ॥५॥

इन श्लोकों का अर्थ आगे १। २। ५ अध्याय में देखना

इति ध्यात्वा मालां सम्पूज्य प्रार्थयेत् ॥

ऊँ मां माले महामाये सर्व शक्ति स्वरूपिणि !
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मां सिद्धिदा भव ॥

जन्तुभिर्न विशीर्णानि न जीर्णानि नवानि च ॥ गन्धैस्तु पञ्चभिस्तानि सम्प्रक्षाल्य पृथक्-पृथक् ॥ अश्वत्थपत्रनवकैः पद्माकारेण कल्पयेत् ॥ सूत्रं मणींश्च गन्धाद्भिः क्षालितांस्तत्र निक्षिपेत् ॥ *तारंशक्तिं मातृकां

इति मालां प्रार्थ्य ॥ ह्रीं सिद्धयै नम इति मालांनत्वा १०८ नवार्णा मन्त्रं जप्त्वा षडंगन्यासंकृत्वा रात्रि सूक्तं पठेत् ।

च सूत्रेचैवमणिष्वथ ॥ विन्यस्य पूजयेदाज्यैर्जुहुयाच्चैव शक्तितः ॥ मणिमेकैकमादाय सूत्रे तत्र तु योजयेत् ॥ एवं कृताक्षमालायां जपेन्मातृकयाततः ॥ गुरुं सम्पूज्य तद्धस्तात् गृह्णीयात्सर्व सिद्धये॥ शैवागमेतु ॥ गोपुच्छ सदृशी कार्या एकास्त्रा वा समेरुका ॥ प्रोतव्या सितवर्णाद्यैस्तत्तत्कर्म प्रसिद्धये ॥ जपमालां विधायैवं ततः संस्कार मारभेत् ॥ क्षालयेत्पञ्चगव्यैस्तां सद्यो[1] जातेन तज्जलैः ॥ चन्दनागुरु गन्धाद्यैर्वा-[2] मदेवेनघर्षयेत् ॥ धूपयेत्तामघोरेण[3] लिपेत्तत्पुरुषेण[4] तु ॥ मन्त्रयेत्पञ्च-[5] मेनैव प्रत्येकं तु शतंशतम् ॥ मेरुं च पञ्चमेनैव तथा मन्त्रेण मन्त्रयेत् ॥

१ ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वैनमो नमः ॥ भवे भवेनाति भवे भवस्व मांभवोद्भवाय नमः ॥

२ ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कल विकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलायनमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूत दमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥

३ ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्रेभ्यः ॥

४ ॐ तत्पुरुषायविद्महे महादेवाय धीमहि ॥ तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥

५ ॐ ईशानः सर्व विद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् ॥ ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपति ब्रह्माशिवो मे अस्तु सदा शिवोम् ॥

ॐ ह्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं नव अश्वत्थपत्रस्थापित मालासु, विन्यस्य देवता प्राणप्रतिष्ठांकुर्यात् ॥ प्राणप्रतिष्ठा २३ पृष्ठ में देखना ॥

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्ति स्वरूपिणि ॥
चतुर्वर्गस्त्वयिन्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥

ॐ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ॥
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥
ॐ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धिं देहि २ सर्वमन्त्रार्थ साधिनि साधय २ सर्वसिद्धिं परिकल्पय २ मे स्वाहा ॥

इतिप्रार्थ्य ॥

ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः ॥ इति मंत्रेणमालांपूजयेत् ॥

विसर्जनम् ॥

ॐ त्वं माले सर्व देवानां प्रीतिदा शुभदा भव ॥ शिवंकुरुष्व मेभद्रे यशोवीर्यं च सर्वदा ॥ इति मालां शिरसि निधाय प्राणानायम्य न्यासं कृत्वा विसर्जयेत् ॥

मालायां जप प्रकारः शैवागमे ॥

मध्यमायां न्यसेन्मालां ज्येष्ठेनावर्तयेत्क्रमात् ॥ भुक्ति मुक्ति प्रदासोयं मातृकागणनक्रमः ॥ अंगुष्ठानामिकाभ्यान्तु कुर्यादुत्तम कर्मणि ॥ तर्जन्यंगुष्ठ योगाद्धि विद्वेषोच्चाटनेजपः ॥ कनिष्ठाङ्गुष्ठकाभ्यांतु जपेन्मारण कर्मणि ॥ जपान्त्यकाले तां मालां पूजयित्वा च गोपयेत् ॥ जीर्णे सूत्रेपुनः सूत्रं ग्रन्थयित्वा शतंजपेत् ॥ जपेन्निपिद्धसंस्पर्शेक्षाल-यित्वा यथोचितम् ॥ कासे क्षुते च जृम्भायामेकमावर्तकं त्यजेत् ॥ प्रमादात्तर्जनी स्पर्शो भवेदावर्तकं त्यजेत् ॥ यदासंत्रुट्यते मालाग्रन्थ-यित्वाथ पूर्ववत् ॥ प्रतिष्ठितायां तस्यां तु मन्त्रं जप्यादन्यधीः ॥ एवं प्रतिष्ठितायांतु अन्येनैवजपेन्मनुम् ॥ अन्यत्रापि ॥ येन प्रतिष्ठिता माला तमेवतु मनुं जपेत् ॥ अन्य मन्त्रज वा विद्वानकार्याकर्हिचिद्बुधैः ॥ तर्जन्या न स्पृशेत्सूत्रं कम्पयेन्नो विधूनयेत् ॥ नस्पृशेद्वामहस्तेन करभ्रष्टां-नकारयेत् ॥ अक्षाणां चालनेङ्गुष्ठ नान्यमक्षं न संस्पृशेत् ॥ जपकाले सदा विद्वान् मेरुं नैव विलंघयेत् ॥ परिवर्तन काले च शब्दं नैवकारयेत् ॥ एवं सर्व परिज्ञाय मालायां जपमारभेत् ॥ नित्यं जपं करे कुर्यान्न-तुकाम्यं कदाचन ॥ काम्यमपि करे कुर्यान्माला भावे च सुन्दरि ! ॥ अथ करमाला यामले ॥ अनामायास्त्रयं पर्व कनिष्ठायास्त्रिपर्विका ॥ मध्यमायास्त्रयंपर्व तर्जनी मूलपर्वणि ॥ प्रादक्षिण्य क्रमेणैव जपेद्दश-सुपर्वसु ॥ शक्तिमाला समाख्याता सर्वमन्त्र प्रदीपिका ॥ पर्वद्वयं तु तर्जन्याः मेरुः तद्विद्धि पार्वति ! ॥ तर्जन्यग्रे तथा मध्ये यो जपेत्तत्र मानवः ॥ चत्वारितस्य नश्यन्ति आयुर्विद्यायशोबलम् ॥

मणिमध्ये नासस्पृश ब्रह्मग्रन्थि मथार्पयेत् ॥ हुं मन्त्रेण ततोमेरु प्रणवेन च बन्धयेत् ॥

अन्यत्रापि जप प्रकारः ॥

अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलंघन ॥ असंख्यातेन (तं च) यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत् ॥ अन्यत्र विशेषः ॥ मन्त्रतन्त्रप्रकाशे ॥ अंगुलिभिरंगुलिपर्वभिरपि जप उक्तः ॥ अंगुलि जप संख्याप्तं फलमेकगुणं स्मृतम् ॥ रेखास्वष्टगुणं विद्यात्तैश्च शतसंगुणम् ॥ गणनाविधि मुल्लंघ्य यो जपेत्तं जपंयतः ॥ गृह्णन्ति राक्षसानूनं गणयेत्सर्वथा बुधः ॥

मुण्डमाला तन्त्रे ॥

मुखे मुखन्तु संयोज्य पुच्छे पुच्छं तु योजयेत् ॥ तत्स्वजातीयमेकाक्षं मेरुत्वेनाग्रतोन्यसेत् ॥ सार्द्धं द्वया वर्तनेन ग्रन्थिं कुर्यादधो दृढं ॥ ब्रह्मग्रन्थिं ततो दद्यान्नागपाशमथापि वा ॥ गो पुच्छ सदृशीं कुर्यादथ सर्पाकृतिर्भवेत् ॥ ग्रन्थिहीनं न कर्तव्यं मेरुपृष्ठेन दृष्यति ॥ अप्रतिष्ठितमालाभिर्मन्त्रं जपति यो नरः ॥ सर्वं तद्विफलं विद्यात्क्रुद्धा भवति चंडिका ॥ न धारयेत्करे कण्ठे मूर्द्ध्नि चजपमालिकाम् ॥ भूत शुद्धौ ॥ अथ जप विधिः ॥ यस्य यस्य च मन्त्रस्य उद्दिष्टा याच देवता ॥ चिन्तयित्वा तदाकारं मनसा जपमाचरेत् ॥ शनैः शनैरविस्पष्टं न द्रुतं न विलम्बितम् ॥ क्रमेणोच्चारयेद्वर्णानाद्यन्त क्रम योगतः ॥ अति ह्रस्वो व्याधि हेतूरति दीर्घो वसु क्षयः ॥ अक्षराक्षर संयुक्तं जपेन्मौक्तिक हारवत् ॥ कुलार्णवे ॥ तन्निष्ठस्तद् गत प्राणस्तच्चिन्तस्तत्परायणः ॥ तत्पदार्थानुसन्धानं कुर्वन्मन्त्रं जपेत्प्रिये ॥

आसनानि तन्त्रे ॥

कौशेयं वाथ चैलं वा चार्मं तौलमथापि वा ॥ वेत्रजं तालपत्रं वा काम्बलं दार्समासनम् ॥ वंशाश्म दारु धरणी तृण पल्लवनिर्मितम् ॥ वर्जयेदासनं मन्त्री दारिद्र्य व्याधिदुःखदम् ॥ धर्मार्थ काम मोक्षाप्तेश्चैलाजिन कुशोत्तरम् ॥ यतीनामासनं श्लक्ष्णं कूर्माकारं तु कारयेत् ॥ अन्येषां तु चतुः पादं चतुरस्रं तु कारयेत् ॥ गोशकृन्मृण्मयंभिन्नं तथा पालाश पिप्पलम् ॥ लौहविद्धं सदैवार्कं वर्जयेदासनं बुधः । पद्मस्वस्तिक वीरादिष्वेकासन समास्थितः ॥ जपार्चनादिकं कुर्यादन्यथा निष्फलं भवेत् ॥ स्नानमाचमनं होमं भोजनं देवतार्चनम् ॥ प्रौढपादो नकुर्वीत स्वाध्यायं चैव तर्पणम् ॥ प्रौढपाद लक्षणम् ॥ आसनारूढ पादस्तु जानुनोर्वाथजंघयोः कृतावसिक्थको यस्तु प्रौढ पादः स उच्यते ॥

॥ अथ रात्रिसूक्तम् ॥

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥१॥

ब्रह्मोवाच ॥

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वंहि वषट्कारः स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥२॥ अर्धं मात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः त्वमेव सा त्वं सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥३॥ त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् । त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥४॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपात्वं स्थितिरूपा च पालने । तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥५॥ महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः । महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥६॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी । कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥७॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ॥८॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी बाण भुशुण्डीपरिघायुधा । सौम्यासौम्यतरा शेषसौम्येभ्यस्त्वाति-

सुन्दरी । परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥१०॥
यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥११॥
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् । सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥१२॥
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ॥१३॥ सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता । मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥१४॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु । बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥१५॥ इति रात्रिसूक्तम् ॥

रात्रिसूक्त का अर्थ १ अध्याय में देखना ।

ॐ अस्य श्री प्रथम मध्यमोत्तमचरित्राणां ब्रह्माविष्णुमहेश्वरा ऋषयः श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदान्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निर्वायुस्सूर्यस्तत्वानि ऋग्यजुसामवेदा ध्यानानि मम (यजमानस्य) सकलकामनासिद्धये श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवीनाम्प्रीत्यर्थे पाठे (हवने) विनियोगः ॥ तत्रादौ न्यासः ।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा शंखिनी चापिनी बाणा भुशुण्डी परिघायुधा ॥ अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ (हृदयाय नमः) ॥ ॐ शूलेन पाहिनो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके । घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्या निः स्वनेन च ॥ तर्जनीभ्यां नमः ॥ (शिरसेस्वाहा) ॥ ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्षदक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ मध्यमाभ्यां नमः ॥ (शिखायैवषट्) ॥ ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्तिते । यानि चात्यन्त घोराणि तै रक्षास्मां स्तथा भुवम् ॥ अनामिकाभ्यांनमः ॥ (कवचायहुम्) ॥ ॐ खड्गशूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेम्बिके । करपल्लव संगीनि तैरस्मान्रक्षसर्वतः ॥ कनिष्ठकाभ्यां नमः ॥ (नेत्रत्रयायवौषट्) ॥ ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशेसर्वशक्ति समन्विते ॥ भयेभ्यस्त्राहिनो देवि दुर्गेदेवि नमोस्तुते ॥ करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ॥ अस्त्रायफट्

चण्डी पंचाक्षर न्यासः ।

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः ॥ ॐ चं शिरसेस्वाहा ॥ ॐ डीं शिखायै वषट् ॥ ॐ क्रां कवचाय हुम् ॥ ॐ यैं नेत्र त्रयाय वौषट् ॥ ॐ ह्रीं चाण्डकायै अस्त्रायफट् ॥

अथचक्र न्यासः ॥

ओं शम्भुतेजो ज्वल ज्वाला मालिनि पावके ह्रां नन्दायै अंगुष्ठाभ्यां नमः॥ (हृदयायनमः) ओं शम्भुतेजो ज्वल ज्वालामालिनि पावके ह्रीं रक्त-दन्तिकायै तर्जनीभ्यां नमः ॥ (शिरसेस्वाहा) ओं शम्भुतेजो ज्वल ज्वाला मालिनि पावके ह्रूं शाकम्भर्यै मध्यमाभ्यां नमः॥ (शिखायैवषट्)ओं शम्भु तेजो ज्वल ज्वालामालिनि पावके ह्रैं दुर्गायै अना-मिकाभ्यां नमः ॥ (कवचायहुम्) ओं शम्भुतेजो ज्वल ज्वाला मालिनि पावके ह्रौं भीमायै कनिष्ठि-काभ्यां नमः ॥ (नेत्रत्रयायवौषट्) ओं शम्भुतेजो ज्वलज्वाला मालिनि पावके ह्रः भ्रामर्यै करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ॥ (अस्त्रायफट्) एवं हृदयादि ॥

अथ ध्यानम् ॥

*ओं विद्युद्दाम समप्रभांमृगपति स्कन्ध स्थितां भीषणाम् । कन्याभिः करवाल खेट विलसद्धस्ता-

---

* पाठान्तरम् ॥

हेमाचल तटे रम्ये कल्पवृक्षोप शोभिते । दिव्योद्यानं चिन्तयेच्च विशालं हेमभूतलम् । कृशानुरूपवप्रेण करालेन समावृतम् । तन्मध्ये चिन्तयेद्दिव्यं विचित्रमणि मण्डपम् । तस्मिन्सिंहासनेम्भोज कर्णिकायां विचिन्तयेत् । दंष्ट्रा करालाट्टहासं कृष्ण वर्णां भयानकम् । अतितीव्रमुखं सिंहं

भिरासेवितास् ॥ हस्तैश्चक्रगदासि खेट विशिखांश्चापं
हुणां तर्जनीम् । बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां
दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥१॥

इस ध्यान का अर्थ चित्र के अनुकूल है

इतिध्यात्वामानसोपचारैः सम्पूज्य ॥

गुरू देवता आत्मा का एक रूप ध्यान करता हुआ मध्यम स्वर से पाठ करै।

१—अथ वक्ष्यमाण काम्यप्रयोगोपयोगी संपुट व्यवस्था ॥ यथा पार्वति प्रश्नः ॥ देव्युवाच ॥ संपुटं कतिधा स्वामिन् वेत्तुमिच्छामि त्वतः । कथयस्वसुरेशान ! यद्यहं तव वल्लभा ॥ १ ॥ ईश्वरोवाच ॥ संपुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये ! शृणुदयं त्वमत्रादौपश्चादस्तं वदामिते ॥ २ ॥ मंत्रमादौपुनः श्लोकमंतेमंत्रं पुनः पठेत् ॥ पुनर्मंत्रंपुनः श्लोकं क्रमोऽयमुदये शुभः ॥ ३ ॥ उदयोत्कर्ष लाभाय संपुटोयमुदाहृतः ॥ अत्र सर्वत्र श्लोक मंत्रोपलक्षकमिति ॥ अस्तं चिकित्सा शास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत् ॥ तत्तेहं संप्रवदाम्यत्र एकाग्रकृत मानसः ॥ ४ ॥ मंत्रमादौ पुनः श्लोकमंते मंत्र विपर्ययं ॥ मारणोच्चाटनेबंधेसंपुटोयमुदाहृतः ॥ प्रकारोयमनादृत्य कुर्वन्त्यात्म प्रकल्पितं ॥ रौरवादिषु पच्यन्ते यावदाभूतसंभवः ॥ इति मरीचिकल्पे ॥

ज्वलदग्नि शिखो पमम् । तस्यो परिष्टात्तां देवीं कोटिबालार्कसन्निभाम् । चक्रासिबाणशूलाख्यान् दधतीन्दक्षिणैर्भुजैः। शंखचक्रधनुर्बाण तर्जनी-र्वाम बाहुभिः । चन्द्रखण्डसमायुक्तामतिभीमांत्रिलोचनाम्। ऊर्ध्वं ज्वल-त्केशपाशामशोभा हरणोन्मुखीम्। अङ्गाद्यावृत्ति समाशयुक्तामस्त्रश स्त्रपरी वृताम् ॥ इन्द्रादि लोक पालैश्च सेवितां विन्ध्यवासिनीम् ॥

ओं विद्युद्दाम-सम-
प्रभां मृगपति-स्कन्ध-
स्थितां भीषणाम्।
कन्याभिः करवाल
खेट विलसद्धस्ताभि-
रासेविताम्॥



प्रथम अध्याय

ॐ अत्राद्य वर्तमान काले चंडी सप्तशती आद्य चरित्रस्य ब्रह्माऋषिः महाकाली देवता गायत्री छन्दः

चण्डी पाठ के षट् संवाद हैं। जैसे:—

मेधाश्च कथयामास सुरथाय समाधये। सा कथा कथिता पश्चान्मार्कण्डेयेन भागुरेः॥ भामेरकथमामासुः पक्षिणो जैमिनिं प्रति॥ अनेनैव विधानेन कथाः षड् विधिका मताः॥

दुर्गा महात्म्य प्रथम महर्षि मेधा ने राजा सुरथ और समाधिवैश्य को सुनाई। तदनन्तर वही कथा मृकण्डु के पुत्र चिरंजीव महर्षि मार्कण्डेय ने मुनिवर भागुरि (क्रौष्टिक) को सुनाई। इस प्रकार वही कथा सर्व तत्वों के जानने वाले द्रोणपुत्र पक्षिगण ने महर्षि जैमिनि से कही। इसी तरह चण्डी भगवती की कथा (षट् संवाद) छै प्रकार से संसार में विख्यात हुई। और वही कथा संवाद महर्षि वेदव्यासजी ने मार्कण्डेय पुराण में यथावत् क्रम से वर्णन कर लोकोपकार के लिये संसार में प्रचारित करी॥

॥ सप्तशती पाठ प्रसंग॥

पूर्व काल में व्यासजी के शिष्य जैमिनि मुनि साङ्ग वेद-शास्त्र पार गामी हुए। वे महाभारत के किसी किसी स्थान में संदिग्ध हुए परन्तु वेदव्यासजी से संदेह निवारण करने का समय नहीं प्राप्त हुआ। तब महर्षि मार्कण्डेय के समीप जिज्ञासुरूप में संशय दूर करने गये। जैमिनि बोले—हे भगवन् साक्षात् नारायण क्या मनुष्य योनि में जन्मे हैं? क्या पांचों

नन्दजा शक्तिः रक्तदन्तिका वीजं अग्निस्तत्त्वं ऋग्वेद स्वरूपं श्रीमहाकालीप्रसादात् आत्मनोऽभीष्टफल प्राप्ति हेतवे धर्म्मार्थ काम मोक्षार्थे प्रथम चरित्र पाठे (हवने) विनियोगः ॥

अथ माहात्म्य न्यासः

ॐ मधुकैटभ बध माहात्म्याय नमः ब्रह्मरन्ध्रे ॥
ॐ महिषासुर सैन्य बध माहात्म्याय नमः सीमन्ते ॥
ॐ महिषासुर बध माहात्म्याय नमः भ्रूमध्ये ॥
ॐ शक्रादि माहात्म्याय नमः नेत्रयोः ॥
ॐ देव्या दूत संवाद माहात्म्याय नमः मुखे ॥
ॐ धूम्र लोचन बध माहात्म्याय नमः कर्णयोः ॥
ॐ चण्ड मुण्ड बध माहात्म्याय नमः हृदि ॥
ॐ रक्त बीज बध माहात्म्याय नमः नाभौ ॥

पांडवों की एक मात्र स्त्री द्रौपदी है ? क्या बलराम तीर्थ यात्रा प्रसङ्ग में ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त करने गये ? क्या कृष्ण भगवान् ने द्रौपदी के पाँच पुत्रों को अनाथ की तरह विना विवाह हुए ही मरवा दिया ? मेरा यही सन्देह है आप उत्तर देके समाधान करें। जैमिनि मुनि के प्रश्नोपरान्त मार्कण्डेय मुनि ने कहा—यह समय इन सब कथा के कहने का नहीं है अतएव तुम इन सब प्रश्नों को सम्पूर्ण शास्त्रों के धुरन्धर

ओं निशुम्भ बध माहात्म्याय नमः लिङ्गे ॥
ओं शुम्भ बध माहात्म्याय नमः मूलाधारे ॥
ओं स्तुति माहात्म्याय नमः जान्वोः ॥
ओं फल माहात्म्याय नमः गुल्फयोः ॥
ओं वरदान माहात्म्याय नमः पादयोः ॥
ह्रीं माया वीज से सप्त वार व्यापक न्यास करना ॥

ज्ञाता जातिस्मर और पितृशाप ग्रस्त विन्ध्याचल वासी पिङ्गाख्य, विराध, सुपुत्र और सुमुख नामक मुनि के पुत्र ४ चार पक्षियों से जिज्ञासा करो। जिनके द्वारा तुम्हारे समस्त सन्देह का नाश हो जायगा। यह सुन जैमिनि विंध्याचल गये और पाषाण शिला के खण्ड पर बैठ यथोचित कुशल क्षेमोपरान्त जिज्ञासु रूप में प्रश्न कहने लगे॥ इसके बाद चारों पक्षियों ने क्रमपूर्वक सब प्रश्नों का उत्तर मार्कण्डेय क्रौष्टिक (भागुरि) उपक्रम द्वारा दिया॥ इसी तरह क्रमपूर्वक चौदह मन्वन्तरों के प्रसङ्ग में सुरथराजा जैसे देवी के प्रसाद से अष्टममन्वन्तराधिपति हुए (यही सुरथ स्वारोचिष नामक दूसरे मनुके अधिकार काल में द्वितीयमनुपुत्र चैत्रनामक क्षत्री राजा के वंश में इन्हीं मेधस ऋषिके उपदेश से भगवती की उपासना द्वारा वर प्राप्तकिया था। यह सूर्य की सवर्णा नामकी स्त्रीकेगर्भ से उत्पन्न होकर भविष्य में अष्टम मनुके नामसे विख्यात हुए॥ सूर्य की छाया नाम की-स्त्री के गर्भ से वैवस्वत नामक सप्तम मनुका जन्म हुआ मव मनुवंशी राजा सूर्य के वंश में हुए थे कहने का अभिप्राय यह है सुरथ राजा के

महाकाली ध्यानम् ॥

ॐ भीमां भीमोग्रदंष्ट्राञ्जनगिरि विलसत्तुल्य-
कान्तिं दशास्यां त्रिंशल्लोलाक्षिमालां दश ललित-
भुजां पंक्ति पादांतथैव ॥ शूलं बाणं गदां वै धनुरथ-
दधतीं शंख चक्रे भुशुण्डीं वन्दे कालीं कराग्रैः
परिघमसि युतंतामसीं शीर्षकञ्च ॥ इति ध्यात्वा ॥

प्रति देवी का प्रसन्न होना विस्तृत प्रसङ्ग जहां मार्कण्डेय ने क्रौष्टिक से कहा था वही सब स्थल मार्कण्डेय उवाच यहां से पक्षिगण ने जैमिनि से यथावत आरम्भ किया ॥

प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, महा काली देवता है, गायत्री छन्द, रक्तदन्तिका वीज, अग्नितत्व, ऋग्वेद की मूर्ति के समान स्वरूप है, इसका प्रयोग महाकाली के प्रीत्यर्थ है। इतना जानना आवश्यक है परन्तु विनियोग बोलकर जल छोड़ना चाहिये ॥ बाद में ध्यान बोलना जो चित्र दिया है उसको अपने हृदय में ही स्थित ध्यान करते हुए पाठ करना ॥ खड्ग चक्र, गदा, बाण, चाप (धनुष) परिघ, त्रिशूल, भुशुण्डी, शिर, शंख इन मुद्राओं को दिखाना पृष्ठ १५२-५५ संख्या में लिखी हैं मुद्रा न बन सकें तो ध्यान मात्र कर लेना, महा काली इन दश आयुधों को अपने दश हाथों में धारण करे हुए दश शिरों में तीन२ आँख १० पैर तथा सब अंगों में शोभायमान आभूषण पहरे हुए नील मणि के समान शरीर का रंग भगवान विष्णु योगनिद्रा में शयन कर रहे हैं भगवान की नाभि से कमल

ॐ नमश्चंडिकायै ॥ ऐं मार्कण्डेय* उवाच ॥१॥ ॐ सावर्णिः सूर्यतनयो योमनुः कथ्यतेऽष्टमः । निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम ॥२॥ महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः । स बभूव महा-

---

उत्पन्न है तिस पर ब्रह्माजी बैठे हैं इसी बीच में मधु कैटभ दो राक्षस ब्रह्माजी को खाने के लिये आते हैं। तब ब्रह्माजी ने भयभीत हो महामाया की स्तुति करी थी ऐसी उपरोक्त लक्षण वाली महाकाली का स्मरण करता हूँ ॥

*सम्पुट पाठ दो प्रकार का है उदय और अस्त; वृद्धि के लिये उदय और अभिचार के लिये अस्त।

उदय संपुट का लक्षण ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऐं मार्कण्डेय उवाच ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॐ सावर्णिः सूर्य तनयो योमनुः कथ्यतेऽष्टमः ॥ निशामय तदुत्पत्तिं विस्ताराद्गदतोमम ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः ॥

अस्त संपुट के पाठका उदाहरण ॥ हुंफट् ऐं मार्कण्डेय उवाच फट्हुं ॥ हुंफट् ॐ सावर्णिः सूर्यतनयो योमनुः कथ्यतेष्टमः॥निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम फट्हुम् ॥

चण्डी देवी को नमस्कार। श्री मार्कण्डेय ऋषि बोले, ॥१॥ सूर्य भगवान् के पुत्र सावर्णि जो आठवें मनु कहे जाते हैं, उनकी उत्पत्ति की कथा मैं विस्तारपूर्वक कहता हूँ, हे भागुरि! तुम सुनो! ॥२॥ सूर्य के वही पुत्र (सूर्य की छाया से उत्पन्न) महाभाग

भागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥ स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः । सुरथो नाम राजाभूत्समस्ते क्षितिमण्डले ॥४॥ तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् । बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥ ५ ॥ तस्य तैरभवद्युद्धमतिप्रबलदण्डिनः । न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥ ६ ॥ ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् । आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥ ७ ॥ अमात्यैर्बलि

सावर्णि जिस प्रकार जगदम्बा की दया से मन्वन्तराधिप हुए सो भी मैं कहता हूँ ॥३॥ पूर्वकाल में स्वारोचिष-मन्वन्तर के चैत्र वंश में पैदा हुए राजा सुरथ सब पृथ्वी के चक्रवर्ती राजा हुए ॥४॥ सुरथ राजा अपनी प्रजा का निज पुत्र के समान पालन करते थे। उसी काल में कोलाविध्वंसी (सूअर को न मारने वाले) बहुतसे राजा उस (सुरथ) के शत्रु हो गये ॥५॥ फिर भी अति दुष्ट मनुष्यों को सजा देने वाले सुरथ राजा के संग कोलाविध्वंसियों का खूब युद्ध हुआ। सेना, कोष, (खजाना) और युद्ध की कई बातों में कमी होने पर भी कोलाविध्वंसी लोगों ने सुरथ राजा को हराया ॥६॥ तब वह राजा मन मलीन हो, अपने ही शहर में लौट कर अपने, शहर का राजा होकर रहने लगा। तदनन्तर उन बलवान् शत्रुओं के द्वारा वह महाभाग राजा सुरथ फिर घेरा गया ॥७॥ और अपने

भिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः। कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥ ८ ॥ ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः। एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥ ९ ॥ सतत्राश्रममद्राक्षीद्द्विजवर्यस्य मेधसः। प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥ १० ॥ तस्थौ कञ्चित्स

शहर में भी दुष्ट, दुराचारी, आमात्यगण (मन्त्रियों) ने प्रबल राजा का खजाना पल्टन और युद्ध की सामग्री हरण कर ली ॥८॥ जब तेज-हीन होकर राजा सुरथ घोड़े पर बैठ शिकार खेलने के बहाने बिना किसी को साथ लिये अकेला घोर वन में गया ॥९॥ राजा सुरथ ने वहाँ ब्राह्मणों में श्रेष्ठ मेधा ऋषि का हिंसा-रहित शान्त श्वापद जन्तुओं से भरा और मुनि* बालकों से शोभायमान आश्रम देखा ॥१०॥ उस

सप्तश्लोकी दुर्गा प्रारभ्यते ॥

शिव उवाच ॥ देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनि ॥ कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहियत्नतः ॥ देव्युवाच ॥ शृणुदेव ! प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम् ॥ मयातवैवस्नेहेनाप्यम्बास्तुतिप्रकाश्यते ॥ ॐ अस्यश्रीदुर्गा सप्तश्लोकी स्तोत्रमंत्रस्य नारायणऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवताः दुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकी दुर्गा पाठे विनियोगः ॥ ॐ ज्ञानिनामपि चेताँसि देवी भगवती हि सा ॥ बलादाकृष्यमोहाय महामायाप्रयच्छति ॥ १ ॥ दुर्गेस्मृताहरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि ॥ दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणायसदार्द्रचित्ता ॥ २ ॥ सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥ शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारा-

---

* मन्तारो वेदशास्त्रार्थतत्त्वावगन्तारो मुनयः।

कालं च मुनिना तेन सत्कृतः । इतश्चेतश्च विच-
रँस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे ॥ ११ ॥ सोऽचिन्तय-
त्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः । मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं
मया हीनं पुरं हि तत् ॥ १२ ॥ मद्भृत्यैस्तैरसद्वृ-
त्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा । न जाने स प्रधानो मे
शूरहस्ती सदामदः ॥ १३ ॥ मम वैरिवशं
यातः कान् भोगानुपलप्स्यते । ये ममानुगता-
नित्यं प्रसादधनभोजनैः ॥ १४ ॥ अनुवृत्तिं

आश्रम में मुनियों द्वारा सत्कार प्राप्त हो इधर-उधर टहलता हुआ राजा सुरथ कुछ काल तक वहाँ ठहरा ।११। देश, राज्य तथा कोषादि की ममता से मलीन चित्त हो राजा इस प्रकार सोचने लगा। मेरे पूर्वजों की रक्षा करी हुई वह राजधानी मुझ से नष्ट हो।१२। उन दुराचारी मेरे मन्त्रियों से धर्मानुसार पालन की जाती है क्या ? और नहीं जानता कि हमेश मद से मत्त रहने वाला मेरा प्रधान हाथी ॥१३॥ मेरे दुश्मनों के वशीभूत हो किस प्रकार सुख पाता है और नित्य-प्रति खुशी से धन और भोजन मुझसे लेकर जो मेरे आधीन रहा करते थे,॥१४॥वे सब अब अवश्य ही दूसरे नृपति की चाकरी करते होंगे । सदा विना विचार से

यणि नमोस्तु ते ।।३।। शरणागतदीनार्त परित्राणपरायणे ।। सर्वस्यार्ति-
हरे देवि नारायणि नमोस्तु ते ।। ४ ।। सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति-
समन्विते ।। भयेभ्यस्त्राहिनो देवि दुर्गेदेवि नमोस्तु ते ।। ५ ।। रोगान
शेषानपहंसि तुष्टारुष्टा तुकामान्सकलानभीष्टान् ।। त्वामाश्रितानां
न विपन्नराणां त्वामाश्रिताह्याश्रयतां प्रयान्ति ।। ६ ।। सर्वाबाधाप्रश-

ध्रुवं तेऽद्य कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥ १५ ॥ सञ्चितः
सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति । एतच्चा-
न्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥ १६ ॥
तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः । सपृ-
ष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥ १७ ॥
सशोक इव कस्मात्त्वं दुर्म्मना इव लक्ष्यसे ।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥ १८ ॥
प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रया वनतो नृपम्
॥ १९ ॥ वैश्य उवाच ॥ २० ॥ समाधि-
र्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥ २१ ॥

व्यय करने वाले सब दुष्ट मन्त्री आदि ॥१५॥ कष्ट से संग्रह किया गया मेरे पूर्वजों का खजाना जरूर ही नित्य खर्च करके नाश करते होंगे । इस प्रकार तथा और-और भाँति से राजा सोच में मग्न हो गया ॥१६॥ इसके बाद उस मेधा ऋषि के आश्रम के सन्निकट सुरथ राजा ने एक वैश्य को आते देख कर उससे पूछा, "तुम कौन हो ? तथा यहाँ आने का कारण क्या है?" ॥१७॥ और तुम शोक से दुःखित मनुष्यों की तरह उदास क्यों हो ? राजा की स्नेह में सनी हुई बातों को सुन ।१८। उस नम्रता युक्त समाधि वैश्य ने राजा से इस तरह कहा ।१९। वैश्य बोला ।२०। हे राजन् मैं समाधि नामक बनियाँ हूँ, मेरा जन्म धनवानों

सनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ! ॥ एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ७ ॥ इति श्री सप्तश्लोकी दुर्गा समाप्ता ॥

पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः । विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥ २२ ॥
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः । सोऽहं न वेद्मि पुत्राणांकुशलाकुशलात्मिकाम् ॥ २३ ॥
प्रवृत्तिं स्वजनानाञ्च दाराणाञ्चात्र संस्थितः । किंनु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किंनु साम्प्रतम् ॥ २४ ॥
कथं ते किंनु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताः किंनु मे सुताः ॥२५॥

के घर में हुआ ।२१। मेरे असाधु पुत्र, स्त्री और कुटुम्बियों ने धन के लोभ से मुझे घर से निकाल दिया। मेरे पुत्र, स्त्री और कुटम्बियों ने मिलकर सब रुपया छीनकर मुझे निकाला है ।२२। अब मैं स्वजन हीन तथा दुखी हो इस वन में आया हूँ। इस समय इस वन में मुझे अपने पुत्र, स्त्री तथा बन्धुलोगों के अच्छे बुरे हालात नहीं मालूम होते ।२३। यहाँ बैठा हुआ अपने स्वजन आदिकों की स्थिति तथा उनके स्थान में अब मंगल है व अमङ्गल।२४। मेरे लड़के सदाचारी हैं या दुराचारी, सो मैं कुछ नहीं जानता हूं ।२५। राजा ने कहा ।२५। "जिन

अथ चण्डिका दल प्रारम्भ; ॥

ॐ नमश्चण्डिकायै ॥ अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चण्डिका दलमुत्तमम् ॥ मन्त्रं विना तु जप्त्वा वै तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ १ ॥ ॐ नमो भगवती जय जय चामुण्डे चण्डेश्वरी चण्डायुधे चण्डरूपधारिणी ताण्डव प्रिये कुण्डलीभूतदिक् नागमण्डलीभूत गण्डस्थिते समस्त जगदण्ड संहार कारिणि परे अनन्तानन्त रूपे शिवे नरशिरमालालंकृत वक्षस्थले महाकपाल मालोज्ज्वलन्मणि मुकुट चूडावतंस चन्द्रखण्डे महाभीषणे देवी महामाये षोड़शकलोपरिवृतोल्लसिते महादेवासुर समानिधृत रुधिराद्रिकुंत लिम्पिततनु

राजोवाच ॥२६॥ यैर्निरस्तो भवांल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः ॥ २७ ॥ तेषु किं भवतः स्नेह मनुबध्नाति मानसम् ॥ २८॥ वैश्य उवाच ॥ २९ ॥ एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ॥३०॥ किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः । यैः सन्त्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥ ३१ ॥ पतिस्वजन-

---

पुत्र स्त्री तथा बन्धुओं ने लोभ के वश तुम्हारा धन सम्पति छीन ली ।२७। उन्हीं मनुष्यों के प्रति तुम्हारा मन किस प्रकार स्नेह में गोता खाता है ?" २८। वैश्य ने कहा ।२९। आपने मेरे विषय में जो कुछ भी कहा है ।३०। सब सत्य है परन्तु मैं क्या करूँ, मेरे मन में किसी प्रकार भी कठोरता नहीं होती । जिन मेरे पुत्रादिकों ने द्रव्य के वशीभूत हो पितृ-स्नेह त्याग मुझको घर से निकाल दिया है ।३१। उन सब के ऊपर मेरा मन

कमलोद्भासित करे सम्पूर्ण रुधिर शोभित महा कपोले सूर्यभासिनि दृढ़त्तरा वद्ध मनु धर शोभित महा कपाले चन्द्रभासिनि दृढ़तराबद्ध महानादि सहित हेमकाञ्चि दामोज्वलीकृत महामण्डिते महाशम्भुरूपे महाव्याघ्र चर्माम्बरधरे महासर्प यज्ञोपवीतिनी महाश्मशान भस्मोद्धूलित सर्वगात्रे काली कंकाली महाकाली कालाग्नि रुद्रकाली काल-संकर्षिणी कालरात्रि नमो भक्षिणी नाना भूत प्रेत पिशाचगण सहस्र सञ्चारिणी नाना व्याधि प्रशमनी सर्व दुष्ट प्रमथिनी सर्व दारिद्रय नाशिनी युग युगे खादित मांसखण्डे गायत्री विक्षिप्त कला कलायमान कंकालधारिणी मधुरमांस रुधिर सन्तत विलासिनी सकल सुरासुर गन्धर्व विद्याधर किन्नर किम्पुरुषादिभिः स्तूयमाने सर्व मन्त्राधिभूताधिकारिणी सर्वशक्ति प्रधाने सकल लोक पावनी सकल दुरित प्रक्षालिनी सकल लोक

॥३६॥ समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तम ।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥३७॥

धि नाम वैश्य दोनों मिलकर उस आश्रम के स्वामी मेधा नाम मुनि के समीप गये ।३६। और शास्त्रोचित अभिवादन पूर्वक उनके पास बैठकर वह राजा और वैश्य परस्पर दोनों प्रीति पूर्वक ।३७। मेधा ऋषि से अनेक प्रकार की कथा प्रसंग

निष्कले नाभ्याधारादि संस्थिते परं ज्योतिःस्वरूपे सोम सूर्याग्नि मण्डल परिवृते ऊर्ध्वविशुद्धान्तक प्रभे विनिष्कृत ब्रह्म विष्णु रुद्र विनिर्गते परे अपरे प्रभा भासित चराचरे पञ्चविंशति तत्वावर्त्ताधिर्नी महाशून्यागमे पति वन्धु संस्थिते अधोर्ध्व संस्थिते भुक्ति मुक्ति फल-प्रदे निर्गुणे ऋग्यजुःसामाथर्वण पठिते एह्येहि भगवती स्थूल सूक्ष्म पर हुंकार निरूपिते परमकारुणिके महाज्वाला मणि मह्पिापरि गन्धर्व विद्याधर श्रिते भुजङ्ग महिमे जृम्भिणी मोहिनी क्षोभिणी वशीकरिणी जृंभे मोहे क्षोभे वशीकरण बीज पंचक मध्यस्थिते महायोगिनी महाज्वर क्षेत्रनायिके यक्ष राक्षस महाज्वर महा-विषोपविघ्ने गन्धर्व विद्याधराराधिते ॐकार श्रीङ्कार हस्ते श्रां क्रों अग्निपात्रे द्रां शोषय शोषय प्लूं लावय लावय क्लीं श्रीं सुकुमारय सुकुमारय सुँ सतैशय सतैशय सों उन्मादय उन्मादय ग्लौं मोहय मोहय ह्रीं श्रां ह्रीं आवेशय आवेशय श्रीं प्रवेशय प्रवेशय स्त्रीं आकर्षय २ हुं हुं हुं फट् अतीतानागत वर्तमानन्दिशं विदिशं ऐं ह्रीं श्रीं श्रावय श्रावय सर्वं प्रवेशय प्रवेशय त्रैलोक्यं वशवर्ति ऐंकार चित्तं वशीकुरुष्व ऐं ह्रीं श्रीं स्त्रीं द्रावय द्रावय सर्वं प्रवेशय प्रवेशय ऐङ्कारचितां वशंकुरु वशंकुरु ऐं ह्रीं श्रीं हां हीं हूं हैं हौं हः ऐं ह्रीं श्रीं स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं स्त्रैं स्त्रौं स्त्रः मम सर्वकार्याणि साधय साधय हुंफट् स्वाहा ॥ एक विंशति वारन्तु पठेद्वञ्जपेत्तुवा ॥ राजद्वारे श्मशाने च विदेशे शत्रु मंडले ॥ १ ॥ भूताग्नि रण मध्ये च सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ चण्डिका हृदयं गुह्यं त्रिसन्ध्यं कीर्तयेद्द्विजः ॥ २ ॥ सर्व काम प्रदं नृणां भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥ ३ ॥ इति रुद्रयामले तन्त्रे सप्तशती हृदयं सम्पूर्णम् ॥

उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ॥ ३८ ॥
राजोवाच ॥३९॥ भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं
वदस्व तत् ॥४०॥ दुःखाय यन्मे मनसः स्वचि-
त्तायत्ततां विना । ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गे-
ष्वखिलेष्वपि ॥४१॥ जानतोऽपि यथाज्ञस्य
किमेतन्मुनिसत्तम । अयं च निःकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यै-
स्तथोज्झितः ॥४२॥ स्वजनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी
तथाप्यति । एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्त दुःखितौ
॥४३॥ दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ ।
तत्केनैतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥४४॥
ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥४५॥

करने लगे ।३८। राजा बोला ।३९। हे भगवन् ! जिस बात के न जानने से मेरे चित्त में अत्यन्त क्लेश होता है ।४०। वही बात जानना चाहता हूँ, आप कृपा करके उसको समझा दीजिये । और मैं यह जानता हूँ कि यह सब चक्कर है, तो भी मूर्खता वश मुझे राज्य और सम्पूर्ण राज्य के अङ्गों पर ममता है ।४१। हे मुनिसत्तम ! ऐसा क्यों है ? तथा इस वैश्य को भी पुत्रादिकों ने तिरस्कार कर, स्त्री सेवक और स्वजनों ने निकाल दिया है ।४२। फिर भी यह उन्हीं पर मोह करता है ।४३। इस प्रकार मैं और यह वैश्य दोनों का साफ़ साफ़ दूषित विषय में स्नेह युक्त मन होगया है ।४४। हे महाभाग ! हम दोनों ही जान कर माया में ज्ञान शून्य लोगों की तरह

ऋषिरुवाच ॥४६॥ ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विष-यगोचरे ॥४७॥ विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक्। दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथा परे ॥४८॥ केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः। ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किंतु ते नहि केवलम् ॥४९॥ यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः। ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ॥५०॥ मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः। ज्ञानेऽपि

क्यों मूर्खता से परिपूर्ण होगये हैं।४५। ऋषि ने कहा।४६। सब जन्तुओं को विषय के समझने के लायक ज्ञान है।४७। हे महाभाग! इसी प्रकार से विषय भी अलग-अलग होता है। कोई मनुष्य दिन में नहीं देखते, कोई रात्रि में नहीं देखते।४८। और कोई मनुष्य रात्रि दिन में समान ही देखते हैं। आदमी सब विवेकी हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं, फिर भी मनुष्य ही केवल ज्ञानी नहीं क्योंकि पशु-पक्षी और मृग भी ज्ञानवान हैं।४९। जो ज्ञानवान हैं वा जो ज्ञान इन मृग पक्षियों को है वही ज्ञान* मनुष्यों को भी है। और मनुष्यों को भी जो विवेक है सो इन दोनों (मृग पक्षियों) को भी बराबर है।५०। इस प्रकार विवेक होने पर भी कितना फरक हो जाता है, सो देखिये, ये सब पक्षी भूख से दुःखी रहते हुए भी अपने

---

*आहार निद्राभय मैथुनंच सामान्य मेतत्तपशुभिर्नराणां। ज्ञानं नाराणामधिको विशेष ज्ञानेन हीनापशुभिः समाना॥

सति पश्यैतान्पतङ्गाञ्छाव चञ्चुषु ॥५१॥ कणा-
मोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा । मानुषा मनु
जव्याघ्र सा भिलाषाः सुतान्प्रति ॥ ५२ ॥
लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेते किं न पश्यसि ।
तथापि ममतावर्त्तो मोहगर्ते निपातिताः ॥ ५३ ॥
महामायाप्रभावेण संसारस्थिति कारिणः । तन्नात्र-
विस्मयः कार्यो योगनिद्राजगत्पतेः ॥५४॥ महामाया
हरेश्चैतत् तया संमोह्यते जगत् । ज्ञानिनामपि चेतांसि
देवी भगवती हि सा ॥५५॥ बलादाकृष्य मोहाय
महामाया प्रयच्छति । तया विसृज्यते विश्वं जग-

बच्चों की चोंच में अन्न देकर किस तरह खुश होते हैं ।५१। हे
मनुज व्याघ्र ! आदमी लोग अपने पुत्रों पर मतलब से उनका
पालन पोषण ।५२। बदला लेने की इच्छा से करते हैं (अर्थात्
जब हम वृद्धावस्था में प्राप्त होंगे तब यह हमारा भी इसी प्रकार
से भरण पोषण करेंगे ? सो (मनुष्य) नहीं जानते ।५३। इस
तरह बदला लेने की इच्छा न होने पर भी जगदम्बा के प्रसाद
से सब आदमी मोह जाल तथा मोहान्ध कूप में गिर कर संसार
को कायम रखने वाले हैं । इस विषय में अचम्भा मानने की
कोई बात नहीं । महामाया त्रिलोकीनाथ हरि की योग माया है ५४
वही इस संसार को मोह में गेरे रहती है । वही भगवती महामाया
ज्ञानियों का चित्तबलात् खींच कर मोह में गिरा देती है ५५ उस
ही देवी ने इस चराचर जगत् को सृजन (पैदा) किया है ५६। वही

देतच्चराचरम् ॥५६॥ सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये। सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु भूता सनातनी ॥५७॥ संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥५८॥ राजोवाच ॥५९॥ भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान् ॥६०॥ ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज। यत्स्वभावा च सा देवीयत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥ ६१ ॥ तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदांवर ॥ ६२ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६३ ॥ नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥ ६४ ॥ तथापि तत्समुत्पत्तिर्ब-

---

खुश हो मनुष्य को मुक्ति देने वाला वर देती है। वही मुक्ति और मोक्ष का परम कारण है, और वही सनातनी ब्रह्म ज्ञान स्वरूपा विद्या है५७। वही संसार के बन्धन का (अर्थात् जन्म मरण का) कारण है, और वही सर्वेश्वर की भी ईश्वरी है५८। राजा बोले ५६ हे भगवन् ! जिसको आप महामाया कह कह कर सम्बोधन करते हैं वह देवी कौन है ६० उसकी उत्पत्ति किस तरह है? हे तपोधन ! वह क्या करती है ? उस महारानी का जिस प्रकार का स्वरूप तथा स्वभाव किससे पैदा हुई है ६१ हे ब्रह्म ज्ञानियों में उत्तम ! आपके द्वारा सब बातें सुनने की इच्छा रखता हूँ ६२ ऋषि ने कहा—६३

वह जगन्मूर्त्ति जगदम्बा है (न कभी जन्म ग्रहण करती है न मरती है) वह सम्पूर्ण संसार अर्थात् चराचर में व्याप्त है ॥६४॥

हुधा श्रूयतां मम । देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति
सा यदा ॥ ६५ उत्पन्नेति तथा लोके सा नित्या-
प्यभिधीयते । योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्ण-
वीकृते ॥ ६६ ॥ आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पान्ते
भगवान् प्रभुः । तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ
मधुकैटभौ ॥ ६७ ॥ विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं
ब्रह्माणमुद्यतौ । स नाभिकमले विष्णोः स्थितो
ब्रह्मा प्रजापतिः ॥ ६८ ॥ दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ
प्रसुप्तं च जनार्दनम् । तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्र-
हृदयस्थितः ॥ ६९ ॥ विबोधनार्थाय हरेर्हरि-

तो भी उसकी उत्पत्ति अनेक तरह से है, सो मैं कहता हूँ । देवताओं का काम सिद्ध करने के लिये जब वह दर्शन देती है ॥ ६५ ॥ तब ही उस नित्य रहने वाली को मनुष्य "उत्पन्न हुई" कहते हैं । कल्प के बाद जब सृष्टि (संसार) जल में मग्न हो (डूब) जाती है ॥ ६६ ॥ तथा भगवान् विष्णु शेष शय्या पर योगनिद्रा में शयन करते हैं; इसके बाद भगवान विष्णु के कान के मैल से पैदा हो मधु कैटभ नाम के ॥ ६७ ॥ दो विख्यात बड़े भयानक राक्षस श्री ब्रह्माजी को खाने के लिये तयार होते हैं ॥६८॥ उस वक्त विष्णु भगवान की नाभि कमल पर बैठे हुए संसार की रचना करने वाले ब्रह्माजी उन दोनों डरावने (मधु कैटभ) राक्षसों को देख कर तथा भगवान् विष्णु को सोता हुआ जानकर विष्णु भगवान

नेत्रकृतालयाम् । विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहार-
कारिणीम् ॥ ७० ॥ निद्रां भगवतीं विष्णो-
रतुलां तेजसः प्रभुः ॥ ७१ ॥ ब्रह्मोवाच
॥ ७२ ॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्-
कारः स्वरात्मिका ॥ ७३ ॥ सुधा त्वमक्षरे नित्ये
त्रिधामात्रात्मिका स्थिता । अर्धमात्रास्थिता नित्या
यानुच्चार्या विशेषतः ॥ ७४ ॥ त्वमेव सा त्वं
सावित्री त्वं देवि जननी परा । त्वयैतद्धार्यते विश्वं

को जगाने के लिये एकाग्र चित्त हो ॥६९॥ विष्णु भगवान की आंख पर बैठी हुई योग निद्रा की स्तुति करने लगे । वह योग निद्रा संसार की ईश्वरी जगत् की माता, (संसार को पालन करने वाली) रक्षा करने वाली तथा सब संसार को नाश करने ॥७०॥ वाली भगवान विष्णु की निद्रा (नींद) स्वरूपा है ॥७१॥ ब्रह्माजी बोले ॥७२॥ हे ब्रह्म स्वरूपे ! (अर्थात् सब संसार में व्याप्त हो) तुम स्वाहा (देवताओं के पोषक हवन के मन्त्र) हो, तुम स्वधा (पितृश्वरों के पोषक श्राद्ध करने के मन्त्र) हो, तुम ही वषट्कार स्वर (इन्द्र को यज्ञ भाग पहुँचाने का मन्त्र) हो ॥७३॥ (हे नित्ये ! तुम सुधा (अमृत) स्वरूपा हो, अक्षर में ३ मात्रा (ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत) आप ही हो। जिस आधी मात्रा (व्यंजन) का उच्चारण विशेष रूप से नहीं होता है वह आधी मात्रा स्वरूप आप ही हो ॥७४॥ हे देवि ! आप ही सावित्री स्वरूपा हो, और आप ही संसार को पैदा करने वाली संसार की

त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ ७५ ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा । विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थिति रूपा च पालने ॥ ७६ ॥ तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये । महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ७७ ॥ महामोहा च भवती महादेवी महासुरी । प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ ७८ ॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ ॥ ७९ ॥ लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः

माता हो। आप ही को सब मनुष्य धारण करते हैं ७५॥ और आप ही के द्वारा संसार की उत्पत्ति होती है तुम ही से पालन होता है तथा आप ही के द्वारा सदा इस संसार का विनाश होता है। संसार के पैदा करने के समय आप सृष्टि स्वरूप हैं। संसार को पालन करने में स्थिति रूपा हो ॥७६॥ हे जगन्मये ! इस संसार के विनाश काल में आप ही संहार रूप हो ! हे देवि ! आप महाविद्या, महामेधा, महामाया, महास्मृति, ७७" महामोह, महादेवि तथा महासुरी हो। हे दुर्गे ! तुम सम्पूर्ण चराचर (स्थावर जंगम) के तीन गुण (सत्व, रज, तम) की प्रकृति स्वरूप हो॥७८॥ तुम काल रात्रि (भयङ्कर यमस्वरूप) महारात्रि (तमोगुण प्रधान प्रलय स्वरूप) (दारुण) मोहरात्रि (संसार को मोहित करने वाली) स्वरूपा हो। हे माये ! तुम श्री हो, तुम ईश्वरी हो, बुद्धि मंत्ररूपदिव्य ज्ञान के लक्ष्य हो

क्षान्तिरेव च । खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ ८० ॥ शंखिनी चापिनी बाणा भुशुण्डी परिघायुधा । सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वातिसुन्दरी ॥ ८१ ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी । यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ ८२ ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा । यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥८३॥ सोऽपि निद्रा वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः । विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान

॥७९॥ तुम लज्जा, पुष्टि, तुष्टि हो, आप ही शान्ति और क्षान्ति हो आप ही खड्गिनी, शूलिनी, घोरा, गदिनी, चक्रिणी ॥८०॥ शंखिनी चापिनी हो बाण, परिघ और भुशुण्डी भी तुम्हारे आयुध हैं। हे देवि! तुम सौम्या सौम्यतरा हो। और क्या तमाम संसार के सब पदार्थों से तुम अत्यन्त सुन्दरी हो। ८१॥ हे देवि! तुम श्रेष्ठा हो, श्रेष्ठों में श्रेष्ठता हो और श्रेष्ठतरों में भी सम्पूर्ण की ईश्वरी हो। हे अखिलात्मिके! (हे संसार की आत्मरूप) जो कुछ भी जिस प्रकार के सद् वा असत् पदार्थ हैं ॥८२॥ उन सब में जो शक्ति है, वह स्वरूप आप ही हो। मैं आप की क्या किस प्रकार की स्तुति करूँ? जिसने संसार की रचना करी है और जो संसार का पालन व संहार करता है ॥८३॥ उस भगवान विष्णु को आपने निद्रावश कर लिया है, तब और कौन व्यक्ति आप की स्तुति कर सकता है। जब

एवच ॥ ८४ ॥ कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः
शक्तिमान् भवेत् । सा त्वमित्थं प्रभावै
संस्तुता ॥८५॥ मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौमधुकैटभौ ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥८६।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥८७ ॥
ऋषिरुवाच ॥ ८८ ॥ एवं स्तुता तदा देवी
तत्र वेधसा ॥ ८९ ॥ विष्णोः प्रबोधनार्था
निहन्तुं मधुकैटभौ । नेत्रास्य नासिकाबाहुहृदयेभ्य
स्तथोरसः ॥९०॥ निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽ

आपने विष्णु भगवान ईशान (महादेव) तथा मुझ (ब्रह्मा) से शरीर ग्रहण करा लिया है ॥८५॥ फिर कौन मनुष्य व देवता आप की स्तुति करने की ताक़त कर सकता है ? सो हे देवि ! इस तरह अपने उदार स्वभाव का वर्णन सुन प्रसन्न हो इन दुष्ट दुराधर्ष मधु और कैटभ नाम के राक्षसों को मोहित कर । जगत्स्वामी विष्णु को जगाओ ॥८६॥ तथा इन दोनों राक्षसों के संहार के लिये भगवान अच्युत को जल्दी से जगाओ ॥८७॥ ऋषि ने कहा—॥८८॥ उन दोनों मधु और कैटभ राक्षसों को नाश कराने के विचार से विष्णु भगवान को जगाने की इच्छा रखने वाले ब्रह्माजी जब इस प्रकार उस तमोगुणी निद्रारूप देवी की स्तुति कर चुके ॥८९॥ तब अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा के सामने भगवान विष्णु के मुँह, आँख, नाक, बाहू, मन तथा हृदय से निकल कर योगमाया भगवती देवी ने खड़े हो ब्रह्मा को दर्शन

व्यक्तजन्मनः ॥ उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो
जनार्दनः ॥९१॥ एकार्णवेऽहिशयनात्ततः स
ददृशे च तौ । मधुकैटभौ दुरात्मानावति-
वीर्यपराक्रमौ ॥ ९२ ॥ क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं
जनितोद्यमौ । समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान्
हरिः ॥ ९३ ॥ पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो
विभुः । तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ
॥ ९४ ॥ उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केश-
वम् ॥ ९५ ॥ भगवानुवाच ॥ ९६ ॥ भवेतामद्य
मे तुष्टौ मम वध्यावुभा वपि ॥ ९७ ॥ किमन्येन
वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥ ९८ ॥ ऋषिरुवाच

दिया ॥९०॥ तदनन्तर योग निद्रा से छुटने पर भगवान विष्णु ने एकार्णवस्थित (केवल जल का समुद्र) शेषजी की शय्या से उठ कर अवलोकन किया॥९१॥और वही दोनों दुरात्मा अत्यन्त वीर्य पराक्रमशाली मधु-कैटभ क्रोध से लाल नेत्र करके ब्रह्मा को मारने के लिये तयार हैं ॥९२॥ तदनन्तर भगवान विष्णु ने उठकर उन दोनों के साथ ५ हज़ार वर्ष तक मल्लयुद्ध (कुश्ती) किया ॥९३॥ जब वे दोनों बल वाले उन्मत्त राक्षस उस जगदम्बा की कृपा से मोहित होकर कहने लगे, ॥९४॥ हे केशव ! "तुम हम दोनों से वर माँगो ॥९५॥" भगवान बोले—॥९६॥ यदि तुम दोनों मुझ से खुश हुए हो, तो तुम दोनों मेरे द्वारा मारे जाओ ॥९७॥ मैं यही चाहता हूँ ! इस जगह और वर से क्या लाभ ॥९८॥

॥९९॥ वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत
॥ १०१ ॥ विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान्कमलेक्षणः। आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता
॥ १०१ ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०२ ॥ तथेत्युक्त्वा भगवता शंखचक्रगदाभृता। कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने जघने शिरसी तयोः। १०३। एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्। प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥ १०४। इति मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमहात्म्ये मधुकैटभवधः प्रथमोध्यायः। १। उवाच १४ अर्द्ध २४ श्लोक ६६ एवं १०४ ॥

अध्याय को पूर्ति की टिप्पणी २५० पृष्ठ में देखिये

ऋषि ने कहा—॥९९॥ जब भगवान विष्णु ने इस प्रकार दोनों को ठग लिया ॥१००॥ तब उन दोनों राक्षसों ने सम्पूर्ण जगत को पानी से डूबा देखकर भगवान पुण्डरीकाक्ष से कहा। हम दोनों को उस स्थान में मारो ॥१०१॥ जहाँ पानी से पृथ्वी डूबी न हो, हम दोनों तुम से प्रसन्न हैं।" ऋषि ने फिर कहा—॥१०२॥ भगवान ने कहा "ऐसा ही हो" इतना कह कर शङ्ख, चक्र, गदाधारी भगवान ने उन दोनों राक्षसों के शिर अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट दिये ॥१०३॥ यह महामाया जगदम्बा इसी

वैदिक आहुति अध्याय को

एक उलटे साबत पान पर शाकल्य १कमल गट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी २लौंग, १छोटी इलायची गूगल शहत यह सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ओं प्राणायस्वाहा, पानायस्वाहा, व्यानायस्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पीलवासिनीᳪस्वाहा ॥ बाद में स्रुवे से घी छोड़ता हुआ इस मंत्र को बोलना

ओं घृतं घृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावान ॥ पिबतांतरिक्षस्यहविरसिस्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशो व्विदिश ऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

इति शब्दो हरेल्लक्ष्मीं बधः कुल विनाशकः ॥ अध्यायो हरतेप्राणान्मार्कण्डेयादिकं वदेत् ॥

अध्याय के अन्त में इति बोलने से लक्ष्मी का नाश होता है बधः बोलने से कुल का नाश होता है अध्याय बोलने से अपने प्राण नाश होते हैं इसलिये अध्याय के बाद आचमनी में जल लेकर

ॐ जय जय मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्यकामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोल कर जल छोड़ना ॥

प्रकार से पैदा हुई थी। और स्वयं ब्रह्माजी ने उसकी स्तुति करी थी। आगे श्री देवीजी का वृत्तान्त तुम से और कहता हूं ॥ १०४॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत भाषा मधुकैटभ वध की कथा समाप्त हुई।

———

तान्त्रिक आहुति, ॐ साङ्गायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै ऐं वीजाधिष्ठात्र्यैमहाकालिकायै महाहुतिं समर्पयामि नमः ॥ इतना कहकर आहुति छोड़ना सामान वही पहला लिखा हुआ ॥

दूसरा अध्याय ॥

ॐ मध्यमचरित्रस्य विष्णु ऋषिः महालक्ष्मीर्देवता उष्णिक्छन्दः शाकम्भरीशक्तिः दुर्गा वीजं वायुस्तत्त्वं यजुर्वेद मूर्त्तिः आत्मनोभीष्ट फल प्राप्ति हेतवे धर्म्मार्थकाम कामोक्षार्थ पाठे (हवने) विनियोगः॥२॥

अक्षमाला, परशु, गदा, वाण, वज्र, पद्म, धनुः कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, असि, चर्म, जलज, घण्टा, सुराभाजन, शूल, पाश, चक्र पृ० १५२–५५ में लिखी मुद्रा दिखाना व ध्यान करना ॥ विनियोग बोलकर जल छोड़ना ध्यान का अर्थ २२७ पृष्ठ के नीचे देखना

महालक्ष्मी ध्यानम् ॥

ॐ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमासिञ्च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ॥

महिषासुर, शिव के अंश से महिषी में जम्भ नामक असुर से पैदा हुआ और कई सहस्र वर्ष तप करने के अनन्तर ब्रह्माजी द्वारा मनुष्य मात्र से अवध्य वर लेकर इन्द्रासन का राजा हुआ था इस की विशेष कथा देवी भागवत, कालिकापुराण, मार्कण्डेय पुराण तथा और भी कई तन्त्र ग्रन्थों में देखने से मालूम होगी यहां विस्तार भय से नहीं लिखी है ॥

शूलं पाश सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सुरौजोद्भवाम् ॥ २ ॥

ह्रीं ऋषिरुवाच॥ १॥ॐ देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्द-शतं पुरा। महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे।२। तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम्। जित्वा च सकलान्देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥३॥ ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम्। पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रे-शगरुडध्वजौ ॥४॥ यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुर चेष्टितम्। त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ॥५॥ सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च।

ऋषि बोले—॥१॥ पूर्व समय में देवताओं के राजा इन्द्र और राक्षसों के मालिक महिषासुर के साथ देवासुर संग्राम पूर्ण १०० वर्ष तक अत्यन्त भयङ्कर हुआ था ॥ २ ॥ इस युद्ध में महा वीर्यवान असुरों ने देवगणों को जीत तथा सब पलटन को हरा कर स्वयं महिषासुर इन्द्र के सिंहासन पर बैठा ॥ ३ ॥ और सब देवता पराजित हो पद्मयोनि ब्रह्माजी को साथ में लेकर वहाँ गये जिस जगह महादेव और विष्णु भगवान विराजमान थे ॥ ४ ॥ महिषासुर के द्वारा जिस प्रकार देवतागण लड़ाई में हारने तथा स्वर्ग से निकलने का सब हाल शिव और विष्णु भगवान दोनोंको कह सुनाया। (इन्द्रादि देवतागण कहने लगे) ॥ ५ ॥ उस महिषासुर ने सूर्य, इन्द्र, अग्नि, पवन, चन्द्रमा,

ॐ अक्षस्रक् परशुं
गदेषु कुलिशं पद्मं
धनुष्कुण्डिकां ।
दण्डंशक्तिमसिञ्च
चर्म जलजं घण्टां
सुरा भाजनम् ॥



शूलं पाश
च दधतीं
प्रवाल प्रभ
सेवे सैरिभ
मिह महा
सुरौजोद्

अन्येषां चाधिकारान्स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥६॥ स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि। विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥७॥ एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम्। शरणं च प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥८॥ इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः। चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ॥९॥ ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः। निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ॥१०॥ अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः। निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥११॥ अती-

---

यम, वरुण तथा अन्य सब देवताओं के अधिकार को छीन कर आप ही राज करने लगा है ॥ ६ ॥ उस दुरात्मा महिषासुर के द्वारा स्वर्ग से निकाले हुए सब देवता गण अनाथ मनुष्य की तरह पृथ्वी पर घूमते हैं॥ ७ ॥ उसदुरात्मा महिषासुर का सम्पूर्ण बल आपको सुनाया, हम सब देवतागण आपकी शरण हैं।

अब उस महिषासुर को मारने का विचार आप करें ॥ ८ ॥ इस प्रकार इन्द्रादि देवगण की ये सब बातें सुनने से विष्णु और महादेवजी को क्रोध हुआ जिससे उन दोनों के मुख और भौंह टेढ़े हुए ॥ ९ ॥ तिस के बाद अत्यन्त क्रोधित ब्रह्मा, विष्णु और महादेव के शरीरों से महातेज निकला ॥१०॥ और सब इन्द्रादि देवताओं के देह से भी तेज निकला तथा सब तेज मिल कर एक हुआ ॥११॥ तब इन्द्रादि देवगण ने

व तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् । ददृशुस्ते सुरा-
स्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ॥१२॥ अतुलं तत्र
तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् । एकस्थं तदभून्नारी व्याप्त-
लोकत्रयं त्विषा ॥१३॥ यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेना-
जायत तन्मुखम् । याम्येन चाभवन्केशा बाहवो-
विष्णु तेजसा ॥१४॥ सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं
चैन्द्रेण चाभवत् । वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्ते-
जसा भुवः ॥१५॥ ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्यो-
ऽर्कतेजसा । वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च
नासिका ॥१६॥ तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजा-

देखा कि वह सम्पूर्ण तेज राशि (ढेर) ज्वाला के समान सब दिशाओं में व्याप्त हो जलते हुए पहाड़ की तरह दृष्टिगोचर हुआ ॥१२॥ सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से प्रकट होकर तीनों लोक में व्याप्त हुई ज्योति स्वरूपा वह राशि एक स्त्री के रूप में परिणत होने लगी ॥१३॥ शम्भु (महादेव) के (अंश) से उस स्त्री का मुँह बना, यमराज के अंश से बाल तथा विष्णु के तेज से बाहु ॥१४॥ चन्द्रमा के अंश से दोनों स्तन तथा इन्द्र के तेज से कमर का मध्य भाग वरुण के तेज से जाँघ तथा ऊरू, पृथ्वी के तेज से नितम्ब बने ॥१५॥ ब्रह्मा के अंश से पैर सूर्य के तेज से पैर की उंगलियाँ वसु के तेज से हाथ की उंगलियाँ और कुवेर के अंश से नासिका ॥१६॥ उसके दाँत प्रजापति के अंश से, यज्ञ और अग्नि के अंश से

पत्येन तेजसा । नयनत्रितयं यज्ञे तथा पावकतेजसा
॥१७॥ भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य
च । अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा
॥१८॥ ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥१९॥
शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् । चक्रं
च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥२०॥
शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णौ तथेषुधी ॥२१॥

तीनों नेत्र बने ॥१७॥ सन्धि के अंश से दोनों भौंह वायु के तेज से दोनों कान बने तथा सम्पूर्ण देवताओं के तेज से ही ये कल्याणकारिणी देवी की उत्पत्ति हुई ॥१८॥ तब सब देव गण के तेज (अंश) राशि से प्रगट महामाया को देख महिषासुर से सताये हुए सब देव गण प्रसन्न हुए ॥१९॥ पिनाक (धनुष) धारी महादेव ने अपने शूल (त्रिशूल) से निकाल कर शूल (त्रिशूल) *भगवती को दिया, और भगवान् विष्णु ने अपने चक्र से पैदा करके चक्र दिया ॥ २० ॥ वरुण ने शंख दिया, अग्नि ने शक्ति दी, वायु ने धनुष और बाण भरे हुए २ तरकश (तूणीर) दिये ॥ २१ ॥ असुराधिप

---

* उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामगतिं गतिम् । वेत्तिविद्यामविद्यां च सवाच्यो भगवानिति । तस्येयं शक्तिः भगवती । षडैश्वर्यम् ॥ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः । वैराग्यस्य च मोक्षस्य षण्णां भग इतीर्यते ॥

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः । ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद्गजात् ॥ २२ ॥ कालदण्डाद्यमोदण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ । प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥ २३ ॥ समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः । कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्यैचर्म च निर्मलम् ॥ २४ ॥ क्षीरोदश्चामलंहारमजर च तथाम्बरे । चूडामणि तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥ २५ ॥ अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान्सर्वबाहुषु । नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयक मनुत्तमम् ॥ २६ ॥

सहस्राक्ष इन्द्र ने अपने वज्र से पैदा कर वज्र आयुध भगवती को दिया तथा ऐरावत हाथी से घंटा भी दिया ॥ २२ ॥ यमराज ने अपने कालदण्ड से पैदा करके १ दण्ड (डंडा) दिया, अम्बुपति वरुण ने पाश (नागपाश) दी, दक्ष प्रजापति ने अक्षमाला और ब्रह्मा ने कमण्डलु (तोंबी) दिया ॥ २३ ॥ दिवाकर सूर्य भगवान् ने अपनी सम्पूर्ण किरणों में से तेज (प्रकाश) निकालकर भगवती देवीजी के रोम-रोम में स्थापित कर दिया, काल ने निर्मल खड्ग और चर्म (ढाल) दान किया ॥२४॥ क्षीरोद (समुद्र) ने अमलहार जो कभी मैला न हो तथा दो वस्त्र जो कभी फटें नहीं, सुन्दर चूड़ामणि, दो दिव्य कुण्डल (कानों के वाले) और कटकानि हँसली दी ॥ सब बाहुओं के केयूर (बाजू) विमल नूपुर, गरदन

अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च ॥ विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम् ॥२७॥ अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम् । अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥ २८ ॥ अददज्जलधिस्तस्यै पंकजं चाति शोभनम् । हिमवान्वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥ २९ ॥ ददावशून्यं

में पहनने वाला आभूषण ॥ २६ ॥ तथा उंगलियों के गहने रत्न जटित दिये ॥ विश्वकर्मा ने अत्यन्त मनोहर परशु (फरसा) दिया ॥ २७ ॥ और अनेक प्रकार के अस्त्र तथा अभेद्य कवच दिये, जलनिधि (समुद्र) ने शिर तथा हृदय में पहरने के लिये जो कभी भी मैली न हो कमल के पुष्पों की माला दी तथा ॥ २८ ॥ कमल पुष्प दिया ॥ हिमालय (पर्वत राज) ने भगवती को सवारी के लिये सिंह और रत्न दिये

---

२५१ पृष्ठ की टिप्पणी है ॥

मध्यम चरित्र के विष्णु ऋषि, महालक्ष्मी देवता, उष्णिग्छन्द, शाकम्भरीशक्ति, दुर्गावीज, वायुतत्व तथा यजुर्वेद के समान मूर्ति है और महालक्ष्मी के प्रीत्यर्थ विनियोग है इतना कहकर जल छोड़ना । * ध्यान का अर्थ *

रुद्राक्ष की माला, फरसा, गदा, वाण, वज्र, कमल, धनुष, कमंडलु, दंड, शक्ति, तरवार, ढाल, शंख, घंटा, सुरापात्र, त्रिशूल, फांसी और सुदर्शन चक्र इनको १८ हाथों में लिए हुए मूंगे के समान शरीर की कान्ति वाली जो सब देवताओं के तेज से उत्पन्न है ऐसी महालक्ष्मी का ध्यान करता हूं ॥

सुरया पानपात्रं धनाधिपः। शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥ ३० ॥ नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम्। अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥ ३१ ॥ संमानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः। तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥३२॥ अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत्। चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥३३॥ चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्चामहीधराः। जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥ ३४ ॥ तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममू-

---

॥ २९ ॥ धनाधिप (कुवेर) ने मधु से भरा पानपात्र (कटोरा व प्याला) दिया, जो सब पृथ्वी को अपने माथे पर धारण करे हुए है वही सर्वनागेश शेषजी ने भगवती को बड़ी बड़ी महा मणियों से सुसज्जित नागहार दिया ॥ ३० ॥ तथा अन्य सब देवताओं ने भी आभूषण और आयुध (हथियार) दिये ॥ ३१ ॥ तब देवीजी देवताओं से सम्मानित हो बार-बार उच्च स्वर से अट्टहास के साथ गर्जना करने लगी उस भगवती के घोर नाद से समस्त आकाश मंडल गुंजायमान होगया ॥ ३२ ॥ और एक बड़ी प्रतिध्वनि (लौटकर आवाज) हुई ॥ सब लोक चौंक गये और समुद्र काँप गया ॥ ३३ ॥ पृथ्वी चलायमान हुई तथा सब पर्वत हिलने लगे तब सब देवता गण प्रसन्न होकर भगवती सिंह वाहिनी को देख कर

तयः । दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः॥३५॥
सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः । आः
किमेतदितिक्रोधादाभाष्य महिषासुरः ॥ ३६ ॥
अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः । स ददर्श ततो
देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥३७॥ पादाक्रान्त्या न-
तभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् । क्षोभिताशेषपातालां
धनुर्ज्यानिः स्वनेन ताम् ॥३८॥ दिशो भुजसहस्रेण
समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् । ततः प्रववृते युद्धं तया
देव्या सुरद्विषाम् ॥३९॥ शस्त्रास्त्रैर्बहुधामुक्तैरादीपित

बार-बार जय हो जय हो ।। ३४ ।। और मुनिगण भक्ति से नम्र हो भगवती की स्तुति करने लगे, इस प्रकार सम्पूर्ण संसार को भयभीत देखकर राक्षसगण ।। ३५ ।। अपनी सब प्रकार की सेना (पलटनें) तयार कर कवायद कराने लगे, आः—यह क्या हो रहा है क्रोध से इस प्रकार कहकर ।।३६।। महिषासुर सब राक्षसों के बीच में स्थित हो उस (देवीजी के) शब्द को अनुसंधान (ढूंढने) के लिये चला, तब उस (महिषासुर) ने देखा ।।३७।। कि देवी पैर के बोझ से पृथ्वी को नीचे रसातल में दबा रही है, माथे के मुकुट से आकाश को उठाये देती है धनुष की प्रत्यंचा की ध्वनि से पाताल तक कंपायमान करती है ।।३८।। अपनी सहस्त्रभुजाओं से भग-वती सब दिशाओं को रोक रही है, तब श्री देवीजी के साथ सुरद्विष राक्षसों का युद्ध प्रारम्भ हुआ ।।३९।। उस समय लड़ाई

दिगन्तरम् । माहिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महा-सुरः ॥ ४० ॥ युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबला-न्वितः । रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः ॥ ४१ ॥ अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः । पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥ ४२ ॥ अयुतानां शतैः षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे । गजवाजिसहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥ ४३ ॥ वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत । बिडाला-

---

में छुटे हुए अनेक तरह के दिव्य अस्त्र शस्त्रों से दिशा विदिशा दीप्तमान हो गई, और महिषासुर का सेनापति चिक्षुर नाम वाला बड़ा राक्षस लड़ने लगा ॥४०॥ चतुरङ्गिणी (हाथी, घोड़े, रथ, पैदल) पलटन लेकर चामर नाम राक्षस और बहुत से राक्षसों को साथ में लेकर लड़ने लगा, साठ हज़ार रथ की सेना लेकर उदग्र नाम का राक्षस लड़ने लगा ॥४१॥ अयुत (दस हज़ार) एक हज़ार बार एकट्ठे करके रथों से घिर कर महाहनु नाम का राक्षस युद्ध में लड़ने लगा। असिलोमा (तलवार की नोंक के समान रोम वाला) नामक राक्षस ने पांच सौ अयुत (दश हजार) रथ की पलटन के बीच में स्थित होकर लड़ाई में लड़ा ॥४२॥ वाष्कल नामक राक्षस ने छः सौ अयुत रथ की सेना लेकर भगवती से युद्ध प्रारम्भ किया, और बिना गिन्ती हजारों हाथी, घोड़ों के समूह के बीच में ॥४३॥ परिवारित नामक राक्षस करोड़ रथ की सेना लेकर लड़ा, बिड़ालाक्ष (कंजा) राक्षस पांच सौ

रथ्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ॥ ४४ ॥
युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः । अन्ये च
तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः ॥ ४५ ॥ युयुधुः
संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः । कोटिकोटिसहस्रै-
स्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥ ४६ ॥ हयानां च वृतो
युद्धे तत्राभून्महिषासुरः तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्ति-
भिर्मुसलैस्तथा ॥ ४७ ॥ युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः
परशुपट्टिशैः । केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशां-
स्तथापरे ॥ ४८ ॥ देवीं खड्गप्रहारैस्तु तेताहन्तुं प्रच
क्रमुः । सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डि-
का ॥ ४९ ॥ लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्र-

अयुत पैदल पलटन तथा रथ की पलटन से सजकर लड़ने लगा ॥४४॥ और बहुत से राक्षस अयुत सेना, रथ, हाथी, और घोड़े साथ में लेकर लड़ाई में लड़ने लगे ॥४५॥ देवीजी के साथ में करोड़ २ हजार रथ, हाथी तथा इतने ही ॥४६॥ घोड़ों के साथ महिषासुर संग्राम भूमि में आया तब राक्षस गण तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूषल ॥४७॥ खड्ग पट्टिश आदि हथियारों द्वारा देवी से संग्राम करने लगे, कोई राक्षस देवीजी के ऊपर शक्ति फेंकते थे कोई पाश फेंकते ४८ और दूसरे देवी को खड्ग की चोट से मारने के लिये घूम रहे थे । तब चण्डिका देवी ने राक्षसों के द्वारा चलाये गये विविधि भाँति के अस्त्र शस्त्रों को ॥४९॥ अनायास साधा-

वार्षिणी । अनायस्ताननना देवी स्तूयमाना सुरर्षि-भिः ॥ ५० ॥ मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चे-श्वरी । सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेशरी

र्था क्रीडा से ही अपने शस्त्रास्त्र से काट, गेरा, तब देवता और ऋषियों से स्तुति की गई देवी ॥५०॥ प्रसन्न मुखी ईश्वरी देवी राक्षसों के शरीर पर अस्त्रशस्त्र की वरषा करने लगी, और देवी के वाहन उस सिंह ने जिस प्रकार वन में घूम २ कर अग्नि फैल कर तमाम वन को भस्म करदेती है

श्री सूर्यनारायणाय नमः ॥

नेत्रोपनिषद् ॥

श्री गणेशायनमः । अथातश्चाक्षुषीं पठति सिद्धां चक्षुरोगहरां व्याख्यास्यामः । यथाचक्षुरोगाःसर्वतोनश्यंति चक्षुषो दीप्तिर्भवति तस्याह चाक्षुषी विद्यायाः अहिर्बुध्न्य ऋषि गायत्री छंदः श्रीसूर्योदेवता चक्षुरोगनिवृत्तयेजपे विनियोगः ओंचक्षुष् २ चक्षुष्तेजः स्थिरोभव मां पाहि २ त्वरितं चक्षुरोगान् शमय २ ममजात रूपंतेजो दर्शय २ यथाह मन्धोनस्याम् तथा कल्याणं कुरु २ येन पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुः प्रतिरोधक दुष्कृतानि तानि सर्वाणि निर्मूलय २ ओं नमश्चक्षुष्तेजो-दात्रे दिव्यभास्कराय । ओंनमः करुणा करायामृताय ओंनमः श्री सूर्य्याय ओं नमो भगवतेसूर्यायाक्षितेजसे नमः ओ खेचरायनमः ओंमहतेनमः ओंतपसेनमः रजसे असतोमां सद्गमय तमसोमां ज्योतिर्गमय मृत्योर्मामृतंगमय उष्णोभगवान् शुचिरूपः हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः यद्रूपांचाक्षुष्मतीं विद्यांब्राह्मणोनित्यमधीते न तस्याक्षि-रोगो भवति न तस्य कुलेन्धो भवति अष्टौब्राह्मणान् ग्राहयित्वा विद्या-सिद्धिर्भवति ओं विश्वरूपं घृणिते जात वेदसे हिरण्मयं पुरुषं ज्योति-रूपं तं सहस्ररश्मि शतधा वर्त्तमानः प्राणः प्रजानामुदयत्येषः सूर्यः ओंनमो भगवते आदित्याय अहोवाहिन्यहोवाहिनीस्वाहा ॥ इति श्री अथर्वण वेदोक्त नेत्रोपनिषत्संपूर्णम् ॥

॥ ५१ ॥ चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।

तद्वत् क्रोध से सिंह अपने गर्दन के केश (बालों को) हिलाता हुआ असुर सेना का नाश करने लगा ॥५१॥ युद्ध के बीच में

श्रीगणेशायनमः ॥ कैलास शिखरासीनं शंकरं वरदं शिवं ॥ देवी पप्रच्छ सर्वज्ञं देवदेवं महेश्वरम् ॥१॥ देव्युवाच ॥ भगवन्देवदेवेशदेवानां मोक्षदः प्रभो ॥ प्रब्रूहिमे महाभाग गोप्यं यद्यपि च प्रभो ॥ २ ॥ शत्रूणांयेन नाशः स्यादात्मनो रक्षणं भवेत् ॥ परमैश्वर्य्य मतुलं लभेद्ये-नहि तं वद ॥३॥ भैरव उवाच ॥ वक्ष्यामिते महादेवि सर्व धर्म्महितायच ॥ अद्भुतं कवचं देव्यास्सर्व रक्षाकरं नृणाम् ॥४॥ सर्वारिष्ट प्रशमनं सर्वो-पद्रवनाशनम् ॥ सुखदं भोगदं चैव वश्याकर्षणमद्भुतम् ॥५॥ शत्रूणां संक्षयकरं सर्व व्याधिनिवारणम् ॥ दुःखिनोज्वरिणश्चैवस्वाभीष्टाप्रहृ-तातथा ॥६॥ भोगमोक्ष प्रदं चैव कालिका कवचं पठेत् ॥ ॐ अस्यश्री-कालिकाकवचस्य श्रीभैरवऋषिर्गायत्री छंदः श्रीकालिकादेवता ममाभीष्ट-सिद्धये पाठेविनियोगः । ॐ ध्यायेत्कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम् । चतुर्भुजांललज्जिह्वां पूर्णचंद्रनिभाननां ॥ नीलोत्पलदलप्रख्यां शत्रुसंघ-विदारिणीम् ॥८॥ नरमुंडं तथा खङ्गं कमलं च वरं तथा बिभ्राणां रक्तवसनां दंष्ट्रालींघोररूपिणीम् ॥६॥ अट्टहास निरतांसर्वदा च दिगंबराम् ॥ १० ॥ शवासन स्थितां देवीं मुण्डमाला विभूषिताम् ॥ इति ध्यात्वा महादेवीं पुनस्तु कवचं पठेत् ॥ ॐ कालिका-घोररूपाढ्या सर्व काम प्रदा शुभा ॥ सर्व देवस्तुतादेवी शत्रुनाशं करोतु मे ॥ ह्रीं ह्रीं स्व रूपिणीचैव ह्रां ह्रां ह्रूं रूपिणी तथा ह्रीं ह्रीं क्षें २ स्वरूपासा सदाशत्रून्विदारयेत् ॥ श्रीं ह्रीं ऐं रूपिणीदेवी भवबंधविमोचनी ॥१३॥ ह्सकल ह्रीं ह्रीं रिपून्सा हरतु देवी सर्वदा ॥ ययाशुंभो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः ॥१४॥ वैरिनाशाय वंदे तां कालिकांशंकर प्रियाम् ॥ ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नारसिंहिका ॥१५॥ कौमार्यैन्द्री च चामुंडा खादयन्तु ममद्विषः ॥ सुरेश्वरी घोर रूपा चंड मुंड विना-शिनी ॥१६॥ मुंडमालावृतांगी च सर्वतः पातुमाम् सदा ॥ ह्रीं ह्रीं कालिके घोरदंष्ट्रे रुधिर प्रिये रुधिरःपूर्ण वक्त्रे रुधिरावृत्तस्तनि मम शत्रून्खादय २ हिंसय २ मारय २ भिंदि २ छिंधि २ उच्चाटय २ द्रावय २ शोषय २

निश्वासान्मुमुचेयांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ।५२
त एव सद्यः सम्भूता गणाः शतसहस्रशः । युयुधु
स्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः ॥ ५३ ॥ नाश

अम्बिका ने जितने स्वास छोड़े उ नएक २ स्वास में ॥५२॥
एक-एक लाख गण पैदा हुए, देवी जी के प्रभाव से बढ़ा हुआ
वह गण समूह फरसा, भिन्दिपाल, तलवार पट्टिश ॥५३॥

स्वाहा ह्रीं ह्रीं कालिकायैमदीय शत्रू समर्पयामि स्वाहा ॐ जय २ किरि २ किटि २ कुट २ कट्ट २ मर्दय २ मोहय २ हर २ ममरिपून्ध्वंसय २ भक्षय २ त्रोटय २ यातुधानि चामुण्डे सर्व जनान्राज्ञो राजपुरुषां (स्त्रि) योषान्रिपून्समवश्याःकुरु २ तनु २ धान्यंधनमश्वान्गजान् रत्नानिदिव्य कामिनीः पुत्रपौत्रान्राजश्रियं देहि २ यक्ष २ क्षां क्षीं क्षं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा ॥ इत्येतत्कवचं दिव्यं कथितं शंभुनापुरा ॥ १० ॥ ये पठन्ति सदा तेषां ध्रुवं नश्यन्तिशत्रवः ॥ प्रलयंयान्ति व्याधीनां भवन्तीह न संशयः ॥ १८ ॥ धन हीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्यसर्वदा ॥ सहस्र पठनात्सिद्धिः कवचस्य भवेत्तथा ॥ १६ ॥ ततः कार्याणि सिद्ध्यन्ति यथा शंकर भाषितम् ॥ श्मशानांगारमादाय चूर्णीकृत्वा प्रयत्नतः ॥२०॥ पादोदकेन पिष्ट्वाच लिखेल्लौह शलाकया ॥ भूमौ शत्रून् हीन रूपान् उत्तराशिरसस्तथा ॥२१॥ हस्तं दत्वातद्धृदये कवचं तु स्वयं पठेत् ॥ शत्रोः प्राणप्रतिष्ठान्तु कुर्यान्मंत्रेण मंत्रवित् ॥२२॥ हन्यादस्त्रप्रहारेण शत्रुर्गच्छेद्यमालयम् ॥ ज्वलदंगार तापेन भवन्तिज्वरिणोऽरयः ॥२१॥ प्रोक्षणैर्वामपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम् ॥ वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् ॥२४॥ परमैश्वर्यदं चैवपुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ प्रभात समये चैव पूजाकाले प्रयत्नतः ॥२५॥ सायंकाले तथा पाठात्सर्वसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ शत्रुरुच्चाटनं याति देशाच्चविच्युतोभवेत् ॥२६॥ पश्चात्किंकर माप्नोति सत्यं २ न संशयः ॥ शत्रु नाश करं देवि सर्व संपत्प्रदे शुभे ॥२७॥ सर्वदेवस्तुते देवि कालिकेत्वां न माम्यहम् ॥

इति रुद्रयामले कालीकवचं सम्पूर्णम् ॥

यन्तोऽसुरगणान्देवी शक्त्युपबृंहिताः । अवादयन्त पटहान् गणाः शंखांस्तथापरे ॥ ५४ ॥ मृदङ्गांश्च तथैवान्ये तस्मिन्युद्धमहोत्सवे । ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्तिवृष्टिभिः ॥ ५५ ॥ खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् ॥ पातयामास चैवान्यान् घण्टास्वनविमोहितान् ॥५६॥ असुरान्भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् । केचिद्द्विधाकृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ।५७। विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते । वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥५८॥ केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन

आदि आयुधों से देवी के गण राक्षसों का संहार करने लगे उस देवासुर संग्राम महोत्सव में देवी के गणों में से कोई पटह, (ढोल) कोई शंख ॥ ५४ ॥ कोई मृदङ्ग (पखावज) बजाने लगे, उसके बाद देवीजी ने त्रिशूल से, गदा से शक्ति (भालों) की वृष्टि से ॥ ५५ ॥ तलवारों से सैकड़ों महा असुरों को मार गेरा, और वहुत से राक्षसों को घंटे की ध्वनि से मोहित करके मार दिया ॥ ५६ ॥ और वहुत से राक्षसों को पाश में बाँधकर पृथ्वी पर खींच कर मार दिया, और कितने राक्षसों को तरवार से काट काट कर दो टुकड़े कर दिये ॥ ५७ ॥ और वहुत से राक्षस गदा की चोट से मूर्छा खाकर सो रहे । वहुत से मूषल की चोट से घायल होकर मुँह से रुधिर वमन करने लगे ॥ ५८ ॥ और वहुत से राक्षस हृदय

वक्षसि । निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे
।५९। श्येनानुकारिणः प्राणान्मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः के
षांचिद्बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ॥६०॥ शिरां-
सि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः। विच्छिन्नजंघांस्त्व-
परे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥६१॥ एकबाह्वक्षिचरणाः के
चिद्देव्या द्विधाकृताः। छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः
पुनरुत्थिताः ॥६२॥ कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमा-
युधाः । ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥६३॥

में त्रिशूल की वेदना से घायल होकर पृथ्वी पर गिर गये, कितने बाण वृष्टि से घायल हुए ॥ ५९ ॥ महिषासुर की सेना (पलटन) के यूथपति इसी तरह अपने अपने प्राणों का मोह त्याग शरीर छोड़ने लगे, कितने राक्षसों के हाथ कट गये, कितनों की गरदन कट गई ॥ ६० ॥ कितनों के शिर कट गये और अन्य बहुत राक्षसों के बीच के हिस्से (पेट छाती) फट गये ॥ बहुत से राक्षसों की जाँघ कटने से पृथ्वी पर गिर पड़े ॥ ६१ ॥ श्री देवीजी ने कितने ही राक्षसों के एक बाँह, आँख और पैर नष्ट कर दिये, तथा कितनों को बीच में से चीरकर दो टुकड़े कर दिये, और राक्षसों के शिर कटने से गिर जाने पर भी फिर उठकर ॥ ६२ ॥ उनके रुंड शरीर (जिनको कबंध कहते हैं) सुन्दर अस्त्र लेकर श्रीजगदम्बा देवीजी से लड़ने लगे, और दूसरे कबंध बाजे बजाने और नाचने लगे ॥ ६३ ॥ और अन्य बड़े बड़े राक्षस जिनके मस्तक कट गये थे वे सब कबन्ध होकर गदा, शक्ति और (कृपाण) हाथों में

कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः । तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ॥६४॥ पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा । अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्समहारणः ॥६५॥ शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः । मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ॥६६॥ क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका । निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारु महाचयम्॥ ६७॥ स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः । शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥ ६८॥ देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः । यथैषां तुष्टुवुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॐ ॥६९॥

लेकर श्रीदेवीजी से "ठहरो ठहरो" कहकर लड़ने लगे ॥ ६४॥ जिस स्थान पर यह बड़ी लड़ाई हुई थी उस जगह रथ, हाथी, घोड़े तथा राक्षसों के गिरने से पृथ्वी इस तरह भर गई कि रास्ता निकलना असम्भव था ॥ ६५ ॥ राक्षसों की सेना के मृत हाथी, घोड़े और असुरों के रक्त की महानदी इधर उधर बहने लगी ॥ ६६ ॥ जिस प्रकार तृण (घास) और लकड़ी के बड़े वन को अग्नि जलाकर भस्म कर देता है ठीक उसी प्रकार श्रीजगदम्बा ने क्षण मात्र में राक्षसों की बड़ी सेना का नाश कर दिया ॥ ६८ ॥ और उस भगवती के बाहन सिंह ने भी अपने बालों को हिलाते हुए घोर नाद करके उसी

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्येमहिषासुरसैन्यबधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ उवाच १ श्लोक ६८ एवं ६९ एवमादितः ॥ १७३ ॥

वैदिक आहुति २ अध्याय को ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा, घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लोंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष गूगल ही है। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीॐस्वाहा ॥ बाद में स्रुवे से घी छोड़ता हुआ आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिवतव्वसां वसा पावानः ॥ पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोविदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥

प्रकार (जैसे देवीजी ने राक्षसों का नाश किया था) राक्षस समूह के प्राण नष्ट करदिये ॥६९॥ तथा देवी के गणों ने भी इस युद्ध में ऐसी लड़ाई की जिससे सब देवता गण प्रसन्न होकर स्वर्ग से पुष्पों की वर्षा करने लगे ॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत मार्कण्डेय पुराण के दुर्गा माहात्म्य में महिषासुर सैन्य बध की कथा समाप्त हुई ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

ह्रीं-सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरवारायै सवाहनायै श्री महालक्ष्म्यै अष्टाविंशति वर्णात्मिकायै लक्ष्मी बीजाधिष्टात्र्यै नमः महाहुतिं समर्पयामि स्वाहा ॥

तृतीय अध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्। हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्द स्थिताम् ॥३॥ ह्रीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ निहन्यमानं

उदय होते हुए सहस्र सूर्य के समान अरुण कान्ति व रेशमी वस्त्र धारण किये हुए, मुण्डों की माला पहिने हुए, लाल चन्दन को लगाये हुए जपवटी, विद्या, अभय, वर को कर कमलों में धारण करे हुए बड़े-बड़े तीन नेत्र कमल के समान सुहावना मुख रत्न जड़े हुए अर्ध चन्द्रमा सहित मुकुट को धारण करे हुए कमल पर बैठी हुई देवी को ध्यान करता हूँ।

ऋषि बोले १—"जब महा असुर सेनापति चिक्षुर उस अपनी बड़ी सेना को मरती हुई देख क्रोध कर अम्बिका से

तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः । सेनानीश्चिक्षुरः कोपा-
द्ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥ २ ॥ स देवीं
शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः । यथा मेरुगिरेः शृङ्गं
तोयवर्षेणतोयदः ॥ ३ ॥ तस्यच्छित्त्वा
ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् । जघान तुरगान्बा-
णैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥ ४ ॥ चिच्छेद च धनुः
सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम् । विव्याध चैव गात्रेषु
छिन्न धन्वानमाशुगैः ॥ ५ ॥ सच्छिन्नधन्वा विरथो
हताश्वो हतसारथिः । अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मध-
रोऽसुरः ॥ ६ ॥ सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण

लड़ने के लिये गया ॥ २ ॥ जिस तरह सुमेरु पर्वत के श्टंग पर मेघ जल बरसाता है उसी प्रकार वह (चिक्षुर) असुर भगवती के ऊपर शर (तीर) बरसाने लगा ॥३॥ तदनन्तर देवी जी ने बहुत सावधानी से उस राक्षस की शर वर्षा को काट कर उस के रथ के घोड़े और सारथी (साईस) को बाण से मार दिया ॥ ४ ॥ भगवती ने उस का धनुष तथा उत्तम रथ की ध्वजा (झंडी) भी काट दी और उस कटे हुए धनुष वाले चिक्षुर राक्षस के शरीर में बाणों की वर्षा से घाव कर दिये ॥ ५ ॥ तिसके बाद धनुष, रथ घोड़े, और सारथी बिहीन वह असुर चिक्षुर (खड्ग) तरवार चर्म्म (ढाल) ले देवी की तरफ दौड़ा ॥ ६ ॥ तथा अत्यन्त वेग से तरवार की तीक्ष्णधार से देवीजी के वाहन उस सिंह

मूर्धनि । आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥ तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन । ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ॥ ८ ॥ चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः । जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात् ॥ ९ ॥ दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत । तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुरः ॥ १० ॥ हते तस्मिन्महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ । आजगाम

के शिर में आघात (मार) कर देवीजी के वामभुजा पर भी चोट की ॥ ७ ॥ हे राजा सुरथ ! उस राक्षस की तरवार देवीजी के बांहको छूने से टूट गई तब क्रोध से लाल आंखें करते हुए उस राक्षस ने शूल (त्रिशूल) लिया ॥ ८ ॥ और भद्रकाली की तरफ निशाना करके फेंक दिया वह शूल आकाश से गिरती हुई सूर्य की किरण के समान तेज से अतीव जाज्वल्यमान मालूम हुआ ॥ ९ ॥ उस राक्षस की त्रिशूल को अपनी ओर आते देख कर देवीजी ने अपना शूल चलाया देवीजी के शूल (त्रिशूल) ने राक्षस के शूल के सैकड़ों खण्ड करके महा असुर चिक्षुर के भी सैकड़ों टुकड़े कर दिये ॥ १० ॥ जब युद्ध में बड़ा बलवान चिक्षुर नाम का राक्षस महिषासुर की सेना का अधिपति (आफिसर) मारा गया तब हाथी पर बैठ कर चामर नाम का असुर देवताओं का शत्रु श्री देवीजी से संग्राम में लड़ने को आया

गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११ ॥ सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् । हुङ्काराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥१२॥ भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः । चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥१३॥ ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भान्तरस्थितः । बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥१४॥ युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ । युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥१५॥ ततो वेगात्खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा । करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्-

---

॥ ११ ॥ उस चामर असुर ने देवीजी के ऊपर शक्ति (भाला) फेंकी परन्तु जगदम्बा देवी के हुंकार से जल्दी निस्तेज (भस्म) होकर नीचे पृथ्वी पर गिर गई ॥ १२ ॥ चामर ने अपनी (शक्ति सांग) को भस्म होकर नीचे गिरा हुआ देख अत्यन्त क्रोध से विवश हो शूल चलाया तब देवीजी ने इस को भी बाण वृष्टि से काट गिराया ॥ १३ ॥ अनन्तर देवी का बाहन वह सिंह उछल कर (चामर राक्षस के) हाथी के माथे पर बैठ राक्षस से मल्ल युद्ध करने लगा ॥ १४ ॥ वे दोनों हाथी के ऊपर से लड़ते लड़ते पृथ्वी पर गिरकर अत्यन्त दारुण चोट एक के ऊपर दूसरा करने लगा ॥ १५ ॥ कुछ देरी के बाद सिंह ने उछल कर हाथ के थप्पड़ से चामर नामक राक्षस का शिर शरीर से अलग कर दिया

तम् ॥ १६ ॥ उदग्रश्चरणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः ।
दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥ १७ ॥
देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् । वाष्कलं
भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथांधकम् ॥ १८ ॥ उग्रा-
स्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् । त्रिनेत्रा च त्रिशू-
लेन जघान परमेश्वरी ॥१९॥ बिडालस्यासिना का-
यात्पातयामास वै शिरः । दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरै-
र्निन्येयमक्षयम् ॥२०॥ एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये
महिषासुरः । माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान्ग-
णान् ॥ २१ ॥ काँश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथाप-

॥ १६ ॥ फिर देवी ने उदग्र नामक असुर को पत्थर और वृक्ष (पेड़) बरसा करके मार दिया और दांत तथा मुक्कों की मार से कराल नामक राक्षस को मारा ॥ १७॥ क्रोध में आकर देवी ने गदा प्रहार कर उद्धत राक्षस को मार कर चूर्ण कर दिया वाष्कल नामक राक्षस को भिन्दिपाल से और ताम्र तथा अन्धक को बाण से संहार किया ॥ १८ ॥ तीन नेत्र वाली देवी ने उग्रास्य उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक राक्षसों का त्रिशूल से नाश कर दिया ॥ १६ ॥ विडाल नामक असुर का मस्तक उस के शरीर से तरवार द्वारा अलग कर दिया दुर्धर और दुर्मुख राक्षसों को बाणों से यमलोक भेजा ॥ २० ॥ इस तरह अपनी सेना का नाश होते देख महिषासुर भैंसे का रूप धारण कर देवी के गणों को डराने लगा ॥ २१ ॥

रान् । लाङ्गूलताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्याञ्च विदा-
रितान् ॥ २२ ॥ वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन
च । निःश्वासपवनेनान्यान्पातयामास भूतले ॥ २३ ॥
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः । सिंहं हन्तुं
महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥ २४ ॥ सोऽ
पि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः । शृङ्गाभ्यां
पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥ २५ ॥ वेगभ्रमण
विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत । लाङ्गूलेनाहत-
श्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥२६॥ धुतशृङ्गवि-
भिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः । श्वासानिलास्ताः

कितनों को मुख की चोट से किसी को पैर के खुर की चोट से किसी को पूँछ के प्रहार से किसी को सींगों से चोट पहुँचाता हुआ ॥ २२ ॥ किसी को झटके से किसी को गर्जना से किसी को भ्रमण तथा श्वास की वायु से पृथ्वी पर गिराने लगा ॥ २३ ॥ पहले देवी के गणों को इस तरह गिराता हुआ वह राक्षस महिषासुर देवीजी के सिंह को मारने की इच्छा से दौड़ा तब भगवती ने गुस्सा किया ॥ २४ ॥ और वह महावीर्य राक्षस महिषासुर भी क्रोधकर अपने खुरों से पृथ्वी को विदीर्ण कर सींगों से बड़े-बड़े पहाड़ों को गिराकर गर्जने लगा ॥२५॥ उस राक्षस महिषासुर के जल्दी-जल्दी घूमने से पृथ्वी फटने लगी तथा पूँछ (दुम) की फटकार से समुद्र उछल-उछल कर सब वस्तुओं को डुबाने लगा ॥ २६ ॥ और सींगों के

शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥ २७ ॥ इति क्रोध समाध्मातमापतन्तं महासुरम् । दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्वधाय तदाकरोत् ॥ २८ ॥ सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबंध महासुरम् । तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥ २९ ॥ ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः । छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥ ३० ॥ तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः । तं खड्ग चर्मणा सार्द्धं ततः सोऽभून्महागजः ॥ ३१ ॥ करेण-

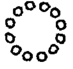
---

हिलाने की चोट से बादल सब टुकड़े-टुकड़े हो गये, तथा श्वास की वायु से उड़े हुए पहाड़ आकाश से गिरने लगे ॥ २७ ॥ इस तरह महाअसुर (महिषासुर) को क्रोध से भरा हुआ आते हुए देख चण्डिका ने उसको मारने के लिये क्रोध किया ॥ २८ ॥ तब देवी ने उस महाअसुर को पाश (फंदा) से बाँधा तत्क्षण असुर ने अपना महिष का रूप छोड़ दिया परन्तु बँध गया ॥ २९ ॥ बाद में वह राक्षस सिंह के रूप में जल्दी से प्रगट हुआ जब तक अम्बिका ने उसका शिर काटा तब तक वह राक्षस तलवार हाथ में ले पुरुष बन गया ॥३०॥ जब देवी ने बाण से ढाल तलवार धारीउस राक्षस को मारा तब तक वह महिषासुर हाथी बन गया ॥ ३१ ॥ इसके बाद वह शुंड से भगवती के वाहन महा सिंह को खींच कर गर्जने लगा, जब भगवती ने खींचने वाले हाथी की शुंड को खड्ग

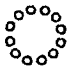
च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च । कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥ ३२ ॥ ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः । तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ३३ ॥ ततः क्रुद्धा जगन्माता चंडिका पानमुत्तमम् । पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणा लोचना ॥ ३४ ॥ ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः । विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥ ३५ ॥ सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः । उवाच तं मदोद्धूत मुखरागाकुलाक्षरम् ॥ ३६ ॥ देव्युवाच ॥ ३७ ॥ गर्ज❀

द्वारा काट दिया ॥ ३२ ॥ तब फिर वह राक्षस भैंसे का स्वरूप बनाकर प्रगट हुआ और पहले की ही भाँति तीनों लोक में बसने वाले चर (चलने वाले) अचर (नहीं चलने वाले) को दुःखित करने लगा ॥ ३३ ॥ तब जगत्माता चण्डिका देवी क्रोधित हो उत्तम मधु पीने लगी और रक्त नेत्र करके बार-बार हँसने लगी ॥ ३४ ॥ तथा बलवीर्य के घमण्ड से वह महिषासुर राक्षस भी गर्जने लगा और दोनों सींगों से चण्डिका देवी के ऊपर बड़े-बड़े पहाड़ों को फेंकने लगा ॥ ३५ ॥ तब चण्डिका देवी ने असुर के फेंके हुए पहाड़ों को अपनी बाण वृष्टि से चूरा कर दिया और मधु पीने से चण्डिका देवी का मुख लाल हो गया तथा अक्षर भी मुख

❀ हवन में यहाँ शहद की आहुति लगेगी।

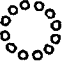


ं एव मुक्त्वा
मुत्पत्य सारूढ़ा
महासुरम् ।

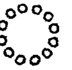


हिर प्रेस—कलकत्ता ।

दुर्गादत्त भट्ट



पादेनाक्रम्य
कण्ठे 'च' शूले
नैनमताडयत् ।



गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिवाम्यहम् । मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥ ३८ ॥ ऋषिरुवाच ।३९। एवमुक्त्वा समुत्पत्य सारूढा तं महासुरम् । पादेनाक्रम्य कंठे च शूलेनैनमताडयत् । ४० । ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः । अर्धनिष्क्रान्त एवातिदेव्या वीर्येण संवृतः ॥ ४१ ॥ अर्धनिष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महासुरः । तया महासिना देव्या शिरश्छित्वा निपातितः ॥ ४२ ॥ ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् । प्रहर्षं च

से साफ नहीं निकलते थे ॥ ३६ ॥ देवी ने कहा—॥ ३७ ॥ अरे मूढ़ (नीच) जब तक मैं मधु पी रही हूँ तब तक क्षणमात्र खूब गर्जन करले-गर्जन करले, मैं तुझे बहुत जल्दी इस युद्ध क्षेत्र में मारूँगी तब सब देवता लोग गर्जन करेंगे ॥ ३८ ॥ ऋषि ने कहा—॥ ३६ ॥ देवी इतना कह उछलकर उस महा असुर के कण्ठ पर चढ़ गई और पैर से उसे दबाकर त्रिशूल से मारने लगी ॥ ४० ॥ तब देवी के पैर से दब कर राक्षस अपने मुख से बाहर होते न होते देवी के पराक्रम से वशीभूत हो गया ॥४१॥ वह राक्षस अपने भैंसे के शरीर से आधा निकला हुआ और लड़ाई लड़ने को तैयार उस महा असुर (महिषासुर) का देवी ने अपने महाखड्ग से शिर काट कर नाश किया ॥४२॥ तिसके बाद सम्पूर्ण राक्षसों की सेना हाहाकार करके नाश हो गई तब सब देवता

परजग्मुः सकला देवतागणाः ॥ ४३ ॥ तुष्टवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः । जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरो गणाः ओं ॥४४॥ इति श्रीमार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्येमहिषासुर-बधो नामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ उवाच ३ श्लोक ४१ एवं ४४ एवमादितः ॥ २१७ ॥ ❀ ॥

तीसरे अध्याय की आहुति में सामान वही है जो पेज २६८ में है केवल भैंसा गूगल विशेष है और मन्त्र भी सब वही हैं।

तन्त्रोक्त आहुति ॥

ओं जयन्ती सांगायै सायुधायै स शक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मी वीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान वही है ॥

लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥४३॥ और देवी को महर्षि तथा देवगणों ने दिव्य अर्घ्य दे स्तुति से प्रसन्न किया। गन्धर्वगण के स्वामी गाने लगे और अप्सरा नृत्य करने लगीं ॥४४॥

श्री गोस्वामी घनश्याम कृत, तीसरे अध्याय की टीका समाप्त हुई।

अथ दुर्गाशतनाम स्तोत्रम् ॥

दुर्गायाः शतनामानि शृणु त्वम्भवगेहिनि ॥ दुर्गाभवानी देवेशी विश्वनाथप्रिया शिवा ॥ १ ॥ घोरदंष्ट्राकरालास्या मुण्डमाला विभूषणा ॥ रुद्राणी तारिणी तारा माहेशी भववल्लभा ॥ २ ॥ नारायणी जगद्धात्री महादेवप्रिया जया ॥ विजया च जयाऽऽराध्या शर्व्वाणी हरवल्लभा ॥ ३ ॥ असिता चाणिमा देवी लघिमा गरिमा तथा । महेशशक्तिर्व्विश्वेशी गौरी पर्व्वतनन्दिनी ॥ ४ ॥ नित्या च निष्कलंका च निरीहा नित्यनूतना ॥ रक्ता रक्तमुखीवाणी वसुयुक्ता वसुप्रदा ॥ ५ ॥ रामप्रिया रामरता रघुनाथवरप्रदा ॥ राज्येश्वरी

चौथा अध्याय ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करै रुद्वहन्तीं

काले बादलों के समान शरीर की कान्ति कटाक्ष मात्र से ही शत्रुकुल को भय देने वाली बालों के बंधे हुए जूड़े पर बाल चन्द्रमा शोभायमान है, शंख, चक्र, कृपाण, त्रिशूल हाथों में लिये तीन नेत्र सिंह के ऊपर बैठी हुई तीनों लोकों को अपने तेज से पूर्ण करने वाली जय नामक दुर्गा को ध्यान करता हूं ॥ जिसको इन्द्रादिक देवता अपनी कामनाओं की सिद्धि के लिये पूजते हैं ॥*शक्रादि स्तुति में पायस की आहुति होती है ॥

राज्यरता कृष्णा कृष्णवरप्रदा ॥ ६ ॥ यशोदा राधिका चण्डी द्रौपदी रुक्मिणी तथा ॥ गुहप्रिया गुहरता गुहवंश विलासिनी ॥ ७ ॥ गणेश जननी माता विश्वरूपा च जाह्नवी ॥ गंगा काली च काशी च भैरवी भुवनेश्वरी ॥ ८ ॥ निर्म्मला च सुगन्धा च देवकी देवपूजिता ॥ दक्षजा दक्षिणा दक्षा दक्षयज्ञविनाशिनी ॥ ६ ॥ सुशीला सुन्दरी सौम्या मातंगी कमला कला ॥ निशुम्भनाशिनी शुम्भनाशिनी चण्डनाशिनी ॥ १० ॥ धूम्रलोचनसंहर्त्री महिषासुरमर्दिनी ॥ उमा गौरी कराला च कामिनी विश्वमोहिनी ॥ ११ ॥ इत्येवं शतनामानि कथितानि वरानने ॥ नामस्मरणमात्रेण जीवन्मुक्तोभवेन्नरः ॥ १२ ॥ यः पठेत् प्रातरुत्थाय स्मृत्वा दुर्गापदद्वयम् ॥ मुच्यते जन्मबन्धेभ्यो नात्र कार्य्या विचारणा ॥ १३ ॥ सन्ध्याकाले दिवाभागे निशायां वा निशामुखे ॥ पठित्वाशतनामानि मंत्रसिद्धिर्लभेद्ध्रुवम् ॥ १४ ॥ अज्ञात्वा स्तवराजञ्च दशविद्यां भजेद्यदि । तथाऽपि नैव सिद्धिः स्यात् सत्यं सत्यम्महेश्वरि ॥ इति मुण्डमालातन्त्रे द्वितीयपटले श्री दुर्गादेव्याः शतनामस्तोत्रं समाप्तम् ॥*शक्रादि के ११ पाठ नित्य करने से धन की प्राप्ति होगी ॥

त्रिनेत्राम् । ❀सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥ ४ ॥ ❀ ॥

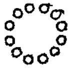
ह्रीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ शक्रादयः सुरगणा निहतेऽति वीर्ये तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या। तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥ देव्या यया ततमिदं जगदात्म-

---

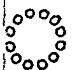
ऋषि बोले—॥१॥ उस दुरात्मा अत्यन्त बलशाली महिषासुर और उसकी सेना का देवीजी के द्वारा नाश हो जाने से इन्द्रादि सब देवतागण गर्दन और शरीर को झुका कर प्रणाम करके हर्ष जनित पुलकावलि से शरीर को अतीव सुन्दर कर मीठे वाक्यों से भगवती की स्तुति करने लगे ॥२॥ जिसने यह संसार अपनी ही शक्ति से विस्तारित किया है, जो निःशेष सम्पूर्ण देवताओं के तेज समूह की मूर्ति है, जो

❀ ग्रीवायां मधुसूदनोस्य शिरसि श्री नीलकंठः स्थितः ॥ श्रीदेवी गिरिजा ललाट फलके वक्षःस्थले शारदा ॥ षड्वक्त्रो मणिबन्ध सन्धिषु तथा नागास्तु पार्श्वस्थिताः ॥ कर्णोयस्य तु चाश्विनौ सभगवान्सिहो ममास्त्विष्टदः ॥ १ ॥ यन्नेत्रे शशि भास्करौ वसु कुलं दन्तेषु यस्यस्थितं ॥ जिह्वायां वरुणस्तु हुंकृतिरिमं श्रीचर्चिका चण्डिका ॥ गण्डौ यक्ष यमौ तथोष्ठ युगुलं संध्याद्वयं पृष्ठके ॥ वज्रीयस्य विराजते सभगवान्सिहोममास्त्विष्टदः ॥ २ ॥ ग्रीवा संधिषु सप्तविंशति मितान्यृक्षाणि साध्या हृदि ॥ प्रौढानिर्घृणता तमोस्य तु महा क्रौर्येः समापूतनाः ॥ प्राणोयस्य तु मातरः पितृ कुलं यस्यास्त्य पानात्मकं ॥ रूपे श्रीकमला कचेषु विमलास्तेस्यूरवे रश्मयः ॥ ३ ॥

इति देवी पुराणोक्त देवी वाहन सिंह ध्यानम् ॥



...स्याः प्रभाव
...भगवाननन्तो
...॥ हरश्च
... वक्तु मलं
...लं च ।

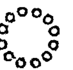


Varma

दुर्गादत्त भक्त



साचण्डिकाखिल
जगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभ-
भयस्य मतिं
करोतु



शक्त्या निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या । तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या नताःस्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च। सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धा सतां कुल जनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताःस्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥

अखिल देवता और महर्षियों द्वारा पूजने योग्य है, उस अम्बिका देवी को हम (देवतागण समूह) सब भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं। वह हमारा (सबका) शुभ (कल्याण) करे ॥३॥ जिसका अतुल प्रभाव और बल का वर्णन भगवान अनन्त देव, ब्रह्मा, शिव नहीं सकते हैं, वह चण्डिका देवी सम्पूर्ण जगत् का परिपालन कर (आगामी) अशुभ तथा भय के नाश करने की इच्छा करे ॥४॥ जो पुण्यवान लोग हैं उनके यहाँ तुम (लक्ष्मी) सम्पत्तिरूप, और पापात्मा लोगों के घर में आप अलक्ष्मी (दरिद्रा) रूप, शुद्ध अन्तःकरण वालों के हृदय में बुद्धिरूप, सच्चरित्र वालों के स्थान में तुम श्रद्धा रूप तथा जो शुद्ध वंश में पैदा हुए मनुष्य हैं उनके यहाँ लज्जा रूप होकर निवास करती हो इसी से सम्पूर्ण रूप में विचरने वाली आपको (हम सब) नमस्कार करते हैं। हे देवी ! सब संसार की रक्षा

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्किञ्चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि । किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा । सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥७॥ यस्याः समस्तसुरतासमुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि । स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसेत्वमत एव जनैः स्वधा च ॥८॥ या

करो ! ॥५॥ तुम्हारे इस अचिन्त्य स्वरूप का वर्णन हम सब किस प्रकार करें ? हे देवि ! महिषासुर आदि राक्षसों का संहार करने वाला तुम्हारा पुरुषार्थ पुनः रजनीचर और देवताओं के संग्राम में आपके अद्भुत व्यवहारों का वर्णन किस प्रकार करें ? ॥६॥ हे देवि ! आप विकार रहित आद्या प्रकृति हो, त्रिगुणात्मक होते हुए भी तुम सब संसार की हेतु (कारण) हो, रागद्वेष युक्त हरिहर आदि भी आपको नहीं जानते, हे देवि ! तुम अपार हो संसार के सम्पूर्ण पदार्थ आपके आश्रय हैं और यह जगत् तुम्हारा ही अंश है ॥७॥ हे देवि ! सब यज्ञों में मन्त्ररूप आपका नाम लेकर हवि देने से सब देवता तृप्त हो जाते हैं; क्योंकि तुम्हारे ही द्वारा देव ऋषि और पितृगण तृप्त होते हैं इसी से तुम इनको तृप्त करने वाली स्वाहा और स्वधा नाम से पुकारी जाती हो ॥ ८ ॥

मुक्तिहेतुरविचिन्त्य महाव्रता च अभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः। मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥९॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्। देवी त्रयी भगवती भवभावनाय वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्त्तिहन्त्री ॥१०॥ मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा। श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा

हे देवि! तुम्हारी वृहत् उपासना का विषय केवल चिन्ता करने से नहीं मालूम होता। इन्द्रियों का निग्रह करते हुए सब तत्वों का सार जानते हुए मोक्ष के अभिलाषी निर्दोष मुनि ही तुमको मुक्ति का कारण जान निरन्तर तुम्हारा ही यजन करते हैं। हे देवि! इस कारण तुम भगवती हो, सर्वश्रेष्ट मोक्ष विद्या हो॥ ९ ॥ हे देवि! आप शब्द मय तीनों वेदों की मूर्ति हो ओंकार सहित मनोहर पाठशाली ऋग, यजु, साम के आश्रय रूप हो, वेद माता हो, तुम सब (षट्) ऐश्वर्य से युक्त हो और तुमही संसार की जीवन रक्षा के निमित्त कृषि रूप हो। हे देवि! तुमही इस संसार की पीड़ा नाश करने वाली हो॥ १० ॥ हे देवि,! तुम बुद्धि स्वरूप हो अर्थात सब शास्त्रों का तत्व जानती हो दुर्गा हो अर्थात दुर्गम भवसागर से पार करने के लिये अनुपमेय नौका रूप तुमही हो, हे देवि तुम मधु कैटभ नाम राक्षसों को मारने वाले नारायण के हृदय में एकाकी निवास करने वाली श्री हो और तुम ही महादेव की

गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥११॥ ईषत्सहास-
ममलं परिपूर्णचन्द्रबिम्बानु कारि कनकोत्तमकान्ति-
कान्तम् । अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥१२॥
दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशांकसदृ-
शच्छवि यन्न सद्यः ॥ प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव-
चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥ १३ ॥
देवि प्रसीद परमा भवती भवाय सद्यो विनाशयसि
कोपवती कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं
बलं सु विपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता

गौरी हो ॥ ११ ॥ हे देवि ! क्रोध से परिपूर्ण महिषासुर के अस्त्र चलाने पर भी तुम्हारा मुसकराता मुखारविन्द उस समय निर्मल पूर्ण चन्द्रमा को भी लज्जित करनेवाला उत्तम सुवर्ण के समान सुशोभित मन को हरनेवाला दीखता रहा सो ही बड़ा आश्चर्य है ॥ १२ ॥ हे देवि । तुम्हारी क्रोधित भौंह तथा उदय होते हुए चन्द्रमा के समान छवि का अवलोकन करने पर भी महिषासुर ने जो अपने प्राण विसर्जन नहीं किये सो भी बड़ा आश्चर्य हुआ गुस्से में भरे यमराज को देख कौन जीता रह सकता है ?॥ १४ ॥ हे देवि तुम प्रसन्न हो जाओ तुम परमात्मा हो मङ्गल (कल्याण) ही के लिए पैदा हुई हो तुम क्रोध करो तो सब का नाश कर सकती हो, यह बात अभी देखी गई है, अर्थात् महिषासुर का बहुत बड़ी सेना सहित तुमने अभी सर्वनाश

जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः । धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥ धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति । स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसा-दाल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि । दारिद्र्यदुःख भयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु

कर दिया है ॥१४॥ जिनके ऊपर तुम प्रसन्न होती हो उन्हीं का अभ्युदय होता है वही सम्मानित होते हैं, उन्हीं के धन होता है उन्हीं को यश प्राप्त होता है उन्हीं का धर्म (पुरुपार्थ वर्ग) कष्ट नहीं पाता वेही पुरुप धन्य हैं उन्हीं के पुत्र स्त्री सेवक उद्वेग रहित होते हैं ॥१५॥ हे देवि ! तुम्हारी कृपा से पुण्यशील मनुष्य सर्वदा धर्म कार्य किया करता है और आपकी ही कृपा से (मरने पर) स्वर्ग को जाता है, इसलिए हे देवि ! तुम तीनों लोक में फल देने वाली हो ॥१६॥ हे देवि ! दुर्गति में गिरे हुए मनुष्यों से स्मरण किये जाने पर तुम उन लोगों का भय दूर कर देती हो, और अच्छी अवस्था में स्मरण करने पर उन लोगों को आनन्द (मंगल) करने वाली बुद्धि दान करती हो हे दरिद्रता के दुःख का भय नाश करने वाली देवि ! सब लोगों का

नाम नरकाय चिराय पापम् । संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि देवि ॥१८॥ दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् । लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपिहि शस्त्रपूता इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥ १९ ॥ खड्ग प्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् । यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्डयोग्याननं तव विलो

उपकार करने के लिए तुम्हें छोड़कर और कौन साधु दयालु रह सकता है क्या ? ॥१७॥ "साधु निस्पृह दूसरे का काम करने वाला है।" इन सब (महिषासुर आदि) राक्षसों के मरने से संसार सुखी हो, ये सब (राक्षस) भी नरक में लेजानेवाला पाप फिर न करें, तथा ये सब शत्रु गण युद्ध में मरने से स्वर्ग को जांय, हे देवि ऐसा सोच कर निश्चय तुम मारती हो ॥१८॥ हे देवि ! सब देवताओं के शत्रुओं को तुमने केवल देख ही कर क्यों नहीं भस्म कर दिया तथा उन पर शस्त्र क्यों ? चलाया इसमें तुम्हारा अभिप्राय यही था कि शत्रु (राक्षस) लोग भी शस्त्र से पवित्र हो स्वर्ग को जांय। इन राक्षसों के लिये भी जो तुम्हारा ऐसा मत है सो भी कल्याण कारी है ॥ १६ ॥ हे देवि ! उस खड्ग की प्रभा (तेज) समूह के बल से और त्रिशूल की नोक के तेज समूह से उन (महिषासुर आदि) राक्षस गणों की आंख फूट क्यों नहीं गई,

कयता तदेतत् ॥ २० ॥ दुर्वृत्तवृत्त शमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्य मन्यैः । वीर्यं च हन्तृहृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥ केनेपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समर निष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥२२॥ त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा । नीता दिवं

इसका केवल यही कारण हुआ कि किरण युक्त चन्द्रमा के समान शीतल तुम्हारा मुंह उन लोगों ने देख लिया था ॥२०॥ तेरा स्वभाव तथा चरित्र दुष्ट लोगों का दुश्चरित्र छुटानेवाला है, उस की बराबरी नहीं है, और लोग उसे सोच कर भी जान सकते हैं, देवताओं का पराक्रम बढ़ाने वाला राक्षसों को मारने वाला तेरा वीर्य है॥ इसी प्रकार से शत्रुओं पर जो तू कृपा करती है सो प्रकट है॥ २१ ॥ हे देवि ! किस के साथ तेरे इस अतुल पराक्रम की बराबरी हो सकती है ? शत्रुओं को भय देनेवाला तेरे समान मनोहर रूप और कहां ? हे वर देने वाली देवि ! कृपा पूर्ण चित्त में लड़ाई के अवसर कठोरता, तीनों लोकों में तेरे सिवाय और किसी में नहीं देखी जाती है ॥ २२ ॥ हे देवि ! महिषासुर को मार कर संसार की रक्षा करी तथा उस के साथी राक्षस गणों का शिर काट कर उन सब को भी स्वर्ग भेज दिया और उन्मत्त राक्षसों से हम सब देव गणों का भय भी दूर कर दिया तुम्हें

रिपुगणाभयमप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते॥२३॥*शूलेन पाहि नोदेवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥२४॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि॥

को नमस्कार है ॥ २३ ॥ हे देवि ! शूल (त्रिशूल) से हम सब (देव गणों) की रक्षा करो, हे अम्बिके खड्ग से हम सब की रक्षा करो तथा घण्टा ध्वनि और धनुष की प्रत्यंचा (डोरी) की झनकार से हम लोगों की रक्षा करो ॥ २४ ॥ हे चण्डि के ! अपने त्रिशूल को घुमा कर हम सब देव गणों (भक्तजनों) की पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर में हे

*हवन में कवच के चार मन्त्रों की आहुति न करना ॥

अत्रकेचित्कवचादि त्रयस्य रहस्य त्रयस्य च प्रति श्लोकं होममनुतिष्ठन्ति ॥ तत्र कवचांशे होमोनयुक्तस्तन्त्रान्तरे निषेधात् ॥ चण्डी स्तवे प्रतिश्लोकमेकाहुतिरिहेष्यते ॥ रक्षा कवचगैर्मन्त्रै र्होमंतत्र न कारयेत् ॥ मौर्ख्यात्कवचगैर्मन्त्रैः प्रति श्लोकं जुहोति यः ॥ स्याद्देह पतनंतस्य नरकं च प्रपद्यते ॥ अंधकाख्यो महादैत्यो दुर्गा भक्ति परायणः ॥ कवचाहुति जातपापान्महेशेन निपातितः ॥ इतिकात्यायनी तन्त्रे ॥

जो इन ४ मन्त्रों की आहुति करता है। उसका देह नाश होता है। इस कारण इन ५ मन्त्रों के स्थान में "ॐनमश्चण्डिकायै स्वाहा" बोलकर आहुति दे मन्त्रों का केवल पाठ करै ॥ तथा इनका पाठ करने से सब प्रकार का भय नष्ट हो जाता है ॥ शूलेनपाहि० इस मन्त्र का केवल १२५००० यथा विधि जप करके फूँक मारने से आधाशीशी आदि माथे के दर्द दूर होंगे सत्य है ॥

॥२५॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थघोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥२६॥ खड्ग शूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लव सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥२७॥ ऋषिरुवाच ॥२८॥ एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः । अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥२९॥ भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यै-र्धूपैस्तु धूपिता । प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान्प्रणा-

---

ईश्वरी ! रक्षा कर ॥ २५ ॥ हे अम्बिके ! तीनों लोक में तुम्हारे सुन्दर और डरावने रूप घूमते रहते हैं उन्हीं सब रूपों से हम सब की तथा पृथ्वी की रक्षा करो ॥ २६ ॥ हे अम्बि-के ! तेरे कर पल्लव (कर कमलों) में जो खड्ग शूल गदा आदिक अस्त्र हैं उन से हम सब तथा पृथ्वी की रक्षा करो ॥ २७ ॥ ऋषि बोले ॥ २८ ॥ देवता गण से इस तरह स्तुति करी गई तथा नन्दनवन के सुन्दर पुष्प तथा सुगन्धित चन्दन आदि से पूजित और दिव्य धूप से धूप दी हुई जगन्माता भगवती ॥२९॥ वर देने के लिये प्रसन्न मुख हो प्रणाम करते हुए

पृष्ठ नं० २८० की टिप्पणी समाप्ति ॥

मेरुः स्याद्वृषणोऽव्ययस्तु जनने स्वेदस्थिता निम्नगा । लाङ्गूले सहदेवतैर्विलसिता वेदाबलं वीर्यकम् ॥ श्री विष्णोः सकलाः सुरा अपि यथास्थानं स्थिता यस्यतु । श्री सिंहोऽखिल देवता मयवपुर्देवी प्रियः पातुमाम् ॥४॥ यो बालग्रह पूतनादिभयहृद्यः पुत्र लक्ष्मी प्रदो यः स्वप्न-ज्वर, रोग राजिभयहृद्योऽमङ्गलेमङ्गलः ॥ सर्वत्रोत्तम वर्णनेषु कविभिर्य-स्योपमादीयते । दैत्यावाहनमेषरोगभय हृत्सिंहोममा स्त्विष्टदः ॥५॥

तान् सुरान् ॥३०॥ देव्युवाच ॥३१॥ व्रियतां त्रिदशाः सर्वै यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥३२॥ देवा ऊचुः ॥३३॥ ❀भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥३४॥ यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः । यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥३५॥ संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः । यश्च मर्त्यःस्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥३६॥ तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् । वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७॥ ऋषिरुवा-

---

देव गणों से कहने लगी ॥ ३० ॥ देवी बोली ॥ ३१ ॥ हे देवता (भक्त) लोग आप सब की जो इच्छा हो सो वर मांगो ॥ ३२ ॥ देवता गण बोले ॥ ३३ ॥ तुम ने सब कुछकर दिया कुछ भी बाकी नहीं रहा ॥ ३४ ॥ आपने हम सब देव (भक्त) जनों के इस शत्रु "महिषासुर" को मारदिया तब हे महेश्वरी ! जो तुम हम सब को वर देना ही चाहती हो तो यही वर देना ॥ ३५ ॥ कि पुनः आपत्ति में जब हम लोग तुम्हें स्मरण करें तब ही तुम हम लोगों की परम आपत्ति का विनाश करना और हे अमलानने ! जो मनुष्य इस स्तुति से तुम्हारा ध्यान करे ॥३६॥ हम लोगों पर प्रसन्न हो तुम उनको ज्ञान उपचय और ऐश्वर्य द्वारा धन, स्त्री, संतान

❀ यहाँ से ३७ श्लोक तक १२५००० विधि पूर्वक जपने से सर्व कार्य सिद्धि होंगे ॥

च ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः। तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा। देवी देव-शरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥ पुनश्च गौरी देहात्सा समुद्भूता यथाभवत्। वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ४१ ॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी। तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते ॐ॥४२॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ ४ ॥ उवाच ५ अर्ध २ श्लोक ३५ एवं ४२ एवमादितः ॥ २५९ ॥

प्रभृति की वृद्धि देना, क्योंकि तुम सब कुछ दे सकती हो ॥३७॥ ऋषि बोले—॥३८॥ हे राजा सुरथ ! संसार और अपने कल्याण के लिये देवतागण से इस तरह प्रसन्न होने के अनन्तर देवी ने "ऐसा ही होगा" इतना कह कर अन्तर्हित होगई अर्थात् अपने स्थान को चली गई ॥३९॥ हे भूपति ! पूर्व काल में देवताओं के शरीर से तीनों लोक का कल्याण करने वाली देवी जिस प्रकार पैदा हुई थी सो मैंने कहा ॥ ४० ॥ फिर अनेक दुष्ट दैत्य तथा शुम्भ, निशुम्भ नामक दोनों राक्षसों को मारने के लिये ॥४१॥ और संसार की रक्षार्थ तथा देव गण का उपकार करने वाली देवी जिस प्रकार पार्वती की

वैदिक आहुति ४ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा, घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लोंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष मिश्री व पायस ही है। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीꣳस्वाहा ॥ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिवतव्वसां वसा पावानः ॥ पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

ह्रीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्री महालक्ष्म्यै अष्टाविंशति वर्णात्मिकायै लक्ष्मी बीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

देह से उत्पन्न हुई सो मैं यथावत् (ठीक-ठीक) कहता हूं तुम सुनो ॥ ४२॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत मार्कण्डेय पुराण के दुर्गा महात्म्य में शक्रादि स्तुती की भाषा टीका समाप्त हुई।

पांचवां अध्यायः ॥

ॐ अस्य श्रीउत्तरचरित्रस्य रुद्रऋषिः महासरस्वती देवता अनुष्टुप्छन्दः भीमाशक्तिः भ्रामरी वीजं सूर्यस्तत्त्वं सामवेदस्वरूपं महासरस्वतीप्रीत्यर्थे उत्तरचरित्र पाठे (हवने) विनियोगः ॥ ३ ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः-सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम् । गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ।५।

घंटा, शूल, हल, शंख, मुषल, चक्र, धनुष, सायक इन आयुधों को धारण करने वाली वादलों में से निकलते हुए पूर्ण चन्द्रमा के समान शीतल सुन्दर मुख, गौरी (पार्वती) की देह से उत्पन्न तीन नेत्र सम्पूर्ण संसार की आधारभूत शुम्भादि दैत्यों को मारने वाली महासरस्वती का ध्यान करता हूँ ॥

घंटादि आठ मुद्रा दिखाना वा ध्यान करना मुद्रा १५२-५५ पृष्ट में है ॥

शुम्भ, निशुम्भ दोनों राक्षस कश्यप ऋषि और अदिति के गर्भ स उत्पन्न नमुचि दैत्य के वड़े भाई ब्रह्माजी की आराधना स वर प्राप्त कर त्रैलोक्य की सर्व सम्पत्ति रत्नादिक और इन्द्र का त्रैलोक्य राज छीन कर आप ही राजा वन कर रहे यह कथा सम्पूर्ण लक्ष्मी तन्त्र और वामन पुराण में है । विस्तार होने से नहीं लिखी है।

क्लीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुरा-
भ्यां शचीपतेः । त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबला-
श्रयात् ॥२॥ तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम् ।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥
तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च ॥ततो देवा विनिर्धू-
ता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥४॥ हृताधिकारास्त्रिदशा-
स्ताभ्यां सर्वे निराकृताः । महासुराभ्यां तां देवीं सं-
स्मरन्त्यपराजिताम् ॥५॥ तयास्माकंवरो दत्तो यथाप-

ऋषि बोले १॥ पूर्व काल में शुंभ, निशुम्भ नामक दोनों राक्षसों ने अपने बल का घमंड करके इन्द्र का त्रैलोक्य राज्य और सब यज्ञ के भाग छीन लिये ॥ २ ॥

वही दोनों (शुम्भ, निशुम्भ) सूर्य और चन्द्रमा के अधिकार का काम तथा कुबेर और वरुण के अधिकार का काम करने लगे ॥ ३ ॥ और वही दोनों वायु, अग्नि का भी कार्य करने लगे, इस के बाद असुरों द्वारा अधिकार छिन जाने से तिरस्कार को प्राप्त हुए, राजहीन, ॥ ४ ॥ पराजित और स्वर्ग से निकाले हुए देवगण उस अपराजिता देवी का स्मरण करने लगे ॥ ५ ॥ जिस देवीजी ने (महिषासुर-संग्राम

जप संख्या करने के लिये माला बनाना ॥ नाक्षतैर्हस्तपर्वैर्वा नधान्यैर्न च पुष्पकैः ॥ न चन्दनैर्मृत्तिकया जप संख्यां न कारयेत् ॥ लाक्षां कुसीदं सिन्दूरं गोमयञ्च करीषकम् ॥ विलोड्य गुटिकां कृत्वा जप संख्यान्तु कारयेत् ॥

त्सु स्मृताखिलाः । भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्पर-रमापदः ॥६॥ इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् । जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥७॥ देवा ऊचुः ॥८॥ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ ९ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः । ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥१०॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमोनमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो

के बाद) हम सब को वर दिया था, कि आपत्ति के समय स्मरण करने से मैं तुम सब की परम (विशेष) आपद को उसी समय नाश कर दूंगी ॥६॥ ऐसा विचार कर सब इन्द्रादि देव गण पर्वतों में उत्तम (श्रेष्ठ) हिमवान पर्वत पर खड़े होकर विष्णुमाया भगवती की स्तुति करने लगे ॥७॥ देवता लोग बोले ॥ ८ ॥ देवी महादेवी शिवा को नमस्कार निरन्तर (सदा) नमस्कार, प्रकृति भद्रा को नमस्कार हम लोग संयत हो उस (देवी) को नमस्कार करते हैं ॥९॥ रौद्रा को नमस्कार, नित्या, गौरी, और धात्री को नमस्कार नमस्कार, प्रकाश रूपा, चन्द्र रूपा, तथा परम आनन्द स्वरूपा को सदा नमस्कार ॥ १० ॥ कल्याणी वृद्धि रूपा को नमस्कार, सिद्धि रूपा देवी को नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं, नैर्ऋती देवी को नमस्कार भूपतियों (राजाओं)

नमः ॥११॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै। ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥१२॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः। नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥ १३ ॥* या देवी सर्वभूतेषु† विष्णुमायेति शब्दिता। नमस्तस्यै

के घर में लक्ष्मी रूप से रहने वाली तथा शर्वाणी के लिये नमस्कार नमस्कार ॥ ११ ॥ दुर्गा, दुर्गपारा, सारा, सर्व कारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्र स्वरूपा को सदा नमस्कार ॥ १२ ॥ जो अत्यन्त सौम्य है और जो अत्यन्त रौद्र (भयानक) है उस देवी को हम सब देवगण अत्यन्त विनीत भाव से नम्र हो नमस्कार करते हैं, जगत की प्रतिष्ठा रूपा देवी को नमस्कार, कृति स्वरूपा देवी को नमस्कार नमस्कार ॥ १३ ॥ जो देवी सब प्राणियों में विष्णु माया नाम से

* त्रिंशत्यक्षर पर्यन्तं प्रथमः खण्डईरितः ॥ वेदाक्षरो द्वितीयस्तु तृतीयाष्टाक्षरः स्मृतः ॥ १ ॥ कुब्जिका तन्त्रे ॥

† विष्णु मायाहि सात्विक, राजस, तामस, भेदेन त्रिधाभिद्यत इति ॥ तत्परामर्शकं तस्यै इति पदं त्रिरभ्यस्यते ॥ नमः पदन्तु प्रसादेन संभ्रमे वा ॥ तदुक्तम् ॥ विषादे विस्मये हर्षे खेदे दैन्येवऽधारणे ॥ प्रसादने संभ्रमे च द्विस्त्रिरुक्तं न दुष्यतीति ॥ अन्यत्रापि ॥ प्रकर्ष हर्ष कोपेषु स्वप्न दैन्यभयेषु च ॥ स्तुत्यभ्यासानुवादेषु पौनरुक्त्यं नदुष्यतीति ॥ अत्रकेचित्त्रिः प्रणयन महत्फलं ॥ एकस्या स्त्रिर्नमस्कारस्त्रि स्त्रिःप्रदक्षिणमित्याहुः ॥ येति विष्णु माया मूल शब्द विद्येति शब्दिता सर्वागमेषु प्रति पादिता ॥ नमस्तस्यै इति पदत्रयेण कायिक वाचिक मानसिक नमस्कारत्रयं प्रदर्शितमिति नागेशरामाश्रम दंशोद्धारा ॥अथवा॥ पञ्चतत्व रचित कायेन पंचधा नमस्कारा उक्ताः ॥

।१४। नमस्तस्यै ।१५। नमस्तस्यै नमोनमः ।१६।
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै
१७ नमस्तस्यै १८ नमस्तस्यै नमोनमः ।१९। या
देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ।२०।
नमस्तस्यै ॥२१॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥२२॥ या
देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
२३ नमस्तस्यै २४ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २५ ॥
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नम-
स्तस्यै २६ नमस्तस्यै २७ नमस्तस्यै नमोनमः ॥

कही जाती है उसको नमस्कार ॥ १४ ॥ उसको नमस्कार
॥ १५ ॥ उसको नमस्कार नमस्कार नमस्कार ॥ १६ ॥
जो देवी सब प्राणियों में चेतना कही जाती है, उसको
नमस्कार ॥ १७ ॥ उसको नमस्कार ॥ १८ ॥ उसको नमस्कार,
नमस्कार नमस्कार ॥ १६ ॥ जो देवी सब प्राणियों में बुद्धि
रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥ २० ॥ उसको
नमस्कार ॥ २१ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार
॥ २२ ॥ जो देवी सब प्राणियों में निद्रा रूप से निवास करती
है, उसको नमस्कार ॥ २३ ॥ उसको नमस्कार ॥ २४ ॥
उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ २५ ॥ जो देवी सब
भूतों (प्राणियों) में क्षुधा (भूख) रूप से निवास करती है, उसको
नमस्कार ॥ २६ ॥ उसको नमस्कार ॥ २७ ॥ उसको नम-
स्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ २८ ॥ जो देवी सब प्राणियों

२८॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता। न-
मस्तस्यै २९ नमस्तस्यै ३० नमस्तस्यै नमोनमः॥
३१॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३२ नमस्तस्यै ३३ नमस्तस्यै नमोनमः॥
३४॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३५ नमस्तस्यै ३६ नमस्तस्यै नमोनमः
३७॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३८ नमस्तस्यै ३९ नमस्तस्यै नमोनमः॥
४० या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ४१नमस्तस्यै ४२ नमस्तस्यै नमोनमः॥

में छाया रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥ २८ ॥ उसको नमस्कार ॥ ३० ॥ उसको नमस्कार नमस्कार नमस्कार ॥ ३१ ॥ जो देवी सब प्राणियों में शक्ति रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥ ३२ ॥ उसको नमस्कार ॥ ३३ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ ३४ ॥ जो देवी सब प्राणियों में तृष्णा रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥३५॥ उसको नमस्कार ॥३६॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥३७॥ जो देवी सब प्राणियों में क्षान्ति (शान्ति) रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥३८॥ उसको नमस्कार ॥३९॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४०॥ जो देवी सब प्राणियों में जाति रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥४१॥ उसको नमस्कार ॥४२॥

४३॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ॥४४॥ नमस्तस्यै ॥४५॥ नमस्तस्यै
नमोनमः ॥४६॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण
संस्थिता। नमस्तस्यै ॥४७॥ नमस्तस्यै ॥४८॥
नमस्तस्यै नमोनमः ॥४९॥ या देवी सर्वभूतेषु
श्रद्धारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥५०॥ नमस्तस्यै
॥५१॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥५२॥ या देवी सर्व-
भूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै ॥५३॥
नमस्तस्यै ॥५४॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥५५॥ या
देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै

उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४३॥ जो देवी सब प्राणियों में लज्जा रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥४४॥ उसको नमस्कार ॥४५॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४६॥ जो देवी सब प्राणियों में शान्ति रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥४७॥ उसको नमस्कार ॥४८॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४९॥ जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धा रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥५०॥ उसको नमस्कार ॥५१॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥५२॥ जो देवी सब प्राणियों में कान्ति रूप से निवास करती है, उसको नमस्कार ॥५३॥ उसको नमस्कार ॥५४॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥५५॥ जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मी रूप से निवास करती है, उसको

सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ ८१ ॥ या साम्प्रतं चोद्धत दैत्यतापितै-रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ८२ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ८३ ॥ एवं स्तवादियु-क्ताना देवानां तत्र पार्वती । स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥ ८४ ॥ साब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिःस्तूयतेऽत्र का । शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा ॥ ८५ ॥ स्तोत्रं ममैतत् क्रियते

थी, और देवताओं के राजा (इन्द्र) ने बहुत दिन तक जिसकी पूजा की थी ॥ जो सब मंगल की कारण है, वही ईश्वरी हम सब (देवगणों) का कल्याण करे और सम्पूर्ण आपत्तियों को दूर करे ॥८१॥ जो अभी प्रचण्ड असुर से दुःख पाकर शरण में आये हुए सब देवगण जिसको नमस्कार करते हैं और नम्रता पूर्वक हम सब (देव गण) जिसका ध्यान करते हैं वही ईश्वरी तत्काल हमारी आपत्तियों का नाश करे ॥८२॥ ऋषि बोले ॥८३॥ हे नृप नन्दन ! इस तरह स्तुति करते हुए सब देवताओं के सामने वहाँ पार्वती गङ्गा जल में स्नान करने को आईं ॥८४॥ तब सुन्दर भौंह वाली पार्वती ने सब देवगण से कहा कि तुम सब किस की स्तुति करते हो ? उसी क्षण पार्वती के शरीर कोश से "शिवा" उत्पन्न हो कर कहने लगी ॥८५॥ शुम्भ के द्वारा स्वर्ग से निकाले हुए तथा निशुम्भ से लड़ाई में

शुम्भदैत्यनिराकृतैः । देवैः समस्तैःसमरे निशुम्भेन पराजितैः ॥८६॥ शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका । कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥८७॥ तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती । कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ॥८८॥ ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् । ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८९ ॥ ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा । काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम् ॥९०॥ नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं केनचिदु-

हराए गये सब देवगण यहाँ इकट्ठे होकर मेरी स्तुति कर रहे हैं ॥८६॥ पार्वती के शरीर कोश से अम्बिका पैदा हुई, इस कारण लोक में * कौशिकी नाम से विख्यात हुई ।८७॥ जब पार्वती के शरीर से कौशिकी निकली इसी से पार्वती के शरीर का रंग काला हुआ इस हेतु कालिका के नाम से प्रसिद्ध हो हिमालय पर रहने लगी ॥८८॥ इसके बाद अत्यन्त सुन्दर अम्बिका (कौशिकी) को उत्तम-उत्तम आभूषण वस्त्र पहने हुए शुम्भ, निशुम्भ के दूत (नौकर) चण्ड-मुण्ड ने देखा ॥८९॥ और उन दोनों दैत्यों ने राक्षसाधिप शुम्भासुर के पास जाकर कहा; हे महाराज ! हिमालय के ऊपर अनुपमेय एक स्त्री शोभायमान है ॥९०॥ हे असुरेश्वर ! उसके समान सुन्दरी कहीं किसी के देखने में नहीं है, तथा यह मालूम कीजिये कि वह स्त्री कौन

* इसका स्वरूप आगे ८ में अध्याय में लिखा जायगा ।

त्तमम् । ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥९१॥ स्त्रीरत्नमतिचार्वंगी द्योतयन्ती दिशास्त्विषा । सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान्द्रष्टुमर्हति ॥९२॥ यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो । त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥९३॥ ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् । पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥ ९४ ॥ विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे । रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥ ९५ ॥ निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् । किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ॥ ९६ ॥ छत्रं ते वारुणां

और किस की है ॥९१॥ उसके सब अङ्ग मन को हरने वाले हैं और वह स्त्रियों में रत्न है अपनी प्रभा से दिशाओं को प्रकाशित करती हुई बैठी है हे दैत्येन्द्र ! उसको आप देखें ? अर्थात् वह देखने ही योग्य है ॥९२॥ हे प्रभो ! हे महाराज ! जितने रत्न, मणि, हाथी, घोड़े आदि इस समय तीनों लोक में उत्तम हैं वे सब आपके घर में सुशोभित हैं ॥९३॥ हाथियों में उत्तम रत्न ऐरावत उच्चैःश्रवा नाम का घोड़ा और पारिजात वृक्ष यह सब इन्द्र (देवराज) से छीन कर आप लाये हैं ॥९४॥ विधाता (ब्रह्मा) का विमान रत्न स्वरूप जिसमें हंस लगे हैं जो कि आँगन में रखा है ॥९५॥ यह महापद्म नाम निधि जो कुवेर के यहाँ से आई है, तथा जो कभी मैली न हो न मुरझावे

गेहे काञ्चनस्त्रावि तिष्ठति । तथायं स्यन्दनवरो यः पुरासीत्प्रजापतेः ॥ ९७ ॥ मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वयाहृता । पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ॥ ९८ ॥ निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः । वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥ ९९ ॥ एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते । स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥ १०० ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥ निशम्येतिवचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः । प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥ १०२ ॥ इति

ऐसी किंजल्किनी नामक कमल माला समुद्र ने आपको दी ॥९६॥ और वरुण का यह काञ्चनस्त्रावि छत्र आपके ही स्थान में है, वैसे ही अत्यन्त सुन्दर यह रथ जो पहले प्रजापति का था (आपके पास है) ॥ ९७ ॥ हे ईश ! हे स्वामी ! यमराज से आपने उत्क्रान्तिदा नामक "शक्ति" छीन ली तथा आपके भाई निशुम्भ ने सलिलराज वरुण से पाश (फंदा) ॥ ९८ ॥ और समुद्र में से निकले हुए सम्पूर्ण जाति के रत्न ले लिये, अग्नि देव ने अग्नि से पवित्र किये हुए दो वस्त्र दिये ॥ ९९ ॥ हे दैत्येन्द्र ! हे राक्षसाधिप ! इस प्रकार आपने सब रत्नों को ले लिया तो यह कल्याण करने वाली स्त्री रूप रत्न को आप क्यों नहीं लेते ? अर्थात् अवश्य ही लीजिये ॥ १०० ॥ ऋषि बोले ॥ १०१ ॥ शुम्भ ने इस तरह

चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम । यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ॥१०३॥ स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने । सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ॥१०४॥ दूत उवाच ॥ १०५ ॥ देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः । दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥ १०६ ॥ अव्या हताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु । निर्जिताखिल दैत्यारिः सयदाह शृणुष्व तत् ॥ १०७ ॥ मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः । यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि

अपने राक्षस चण्डमुण्ड की बातें सुनकर सुग्रीव नाम वाले महाअसुर को दूत बनाकर देवी के समीप भेजा ॥ १०२ ॥ और समझाकर कह दिया कि मेरी तरफ से इस प्रकार की बात कहना जिससे वह प्रसन्न होकर मेरे पास चली आवे ऐसा करना ॥ १०३ ॥ वह सुग्रीव नाम वाला दूत जहाँ हिमालय के अति सुन्दर स्थान में देवी बैठी थी वहाँ जाकर सुन्दर मीठी-मीठी बात करने लगा ॥१०४॥ दूत बोला ॥१०५॥ हे देवि ! शुम्भ (राक्षस राज) त्रिलोक (तीनों लोक) का राजा है और परमेश्वर है उसने मुझे दूत बनाकर तेरे समीप भेजा है ॥ १०६ ॥ उस (शुम्भ) की आज्ञा कोई देवता कभी नहीं त्याग सकते, जिसने सब दैत्यारियों (देवताओं) को जीत लिया है, उसने जो कुछ कहा है वह तू सुन ॥ १०७ ॥

पृथक् पृथक् ॥ १०८ ॥ त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः । तथैव गजरत्नं च हृत्वा देवेन्द्र वाहनम् ॥ १०९ ॥ क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः । उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ॥ ११० ॥ यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च । रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥ १११ ॥ स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम् । सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ॥ ११२ ॥ मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरुविक्रमम् । भज त्वं

सब त्रैलोक्य मेरा है, सब देवता मेरे आधीन हैं और यज्ञ के सम्पूर्ण भागों को मैं ही अलग २ लेता हूँ ॥१०८॥ तीनों लोक के अच्छे २ रत्न मेरे पास हैं, वैसे ही हाथियों में जो रत्न है इन्द्र का वाहन छीना हुआ सो भी मेरे पास है ॥१०९॥ समुद्र मथने पर उत्पन्न उच्चैःश्रवा नाम अश्व रत्न भी देवताओं ने अत्यन्त नम्रता से मुझे दे दिया है ॥ ११० ॥ हे शोभने ! देवता गन्धर्व और नागों के पास जो उत्तम-उत्तम रत्न थे वे सब मेरे ही हैं ॥ १११ ॥ हे देवि ! तुझे हम मनुष्य जाति में स्त्री रत्न मानते हैं सो तू हमारे यहाँ आ, कारण रत्नों के भोगने वाले तो हम (राक्षस) ही हैं ॥ ११२ ॥ हे चञ्चलापाङ्गि ! तू मुझको या मेरे भाई साहसी निशुम्भ को भज (अर्थात् हम दोनों में से किसी एक को वर ले) क्योंकि तू रत्न भूता है ॥ ११३ ॥ मेरे वरने (मुझ से

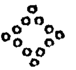
चंचलापाङ्गि रत्नभूतासि वै यतः ॥ ११३ ॥
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् । एतद्बुद्ध्या
समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ॥ ११४ ॥ ऋषिरु-
वाच ॥ ११५ ॥ इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तः
स्मिता जगौ । दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते
जगत् ॥ ११६ ॥ देव्युवाच ॥ ११७ ॥ सत्यमुक्तं
त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित्त्वयोदितम् । त्रैलोक्या-
धिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥ ११८ ॥
किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥ ११९ ॥

विवाह करने) से तू अतुल ऐश्वर्य पावैगी यह बुद्धि से विचार कर मेरी सेवा कर ॥ ११४ ॥ ऋषि बोले ॥ ११५ । दूत के मुख से इतना सुनकर जो भगवती दुर्गा सम्पूर्ण संसार को धारण करे रहती है वही देवी भद्रा गम्भीर भाव से मुसकराती हुई बोली ॥ ११६ ॥ देवी बोली ॥ ११७ ॥ तू ने जो कुछ कहा सब सत्य है इसमें कुछ झूँठ नहीं शुम्भ तीनों लोक का मालिक है और निशुम्भ भी ऐसा ही है ॥ ११८ ॥ परन्तु इस विषय में मैंने जो प्रतिज्ञा करली है उसको किस प्रकार से झूँठी करूँ ॥ जो मैंने अज्ञानता से प्रतिज्ञा करली है उसको सुन ॥ ११९ ॥ जो मुझको लड़ाई में जीतेगा, जो मेरे दर्प (घमंड) को दूर कर देगा, जो सारे संसार भर में मेरे प्रति-बल (बराबर ताक़त वाला) होगा वही मेरा स्वामी होगा

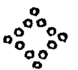
दुर्गार्चन सूता नं० ७

...ां जयति
...योमे दर्प
...हति ।

दुर्गादत्त भक्त



यो मे प्रतिवलो
लोके समेभर्त्ता
भविष्यति ॥७॥



यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति । यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥ १२० ॥ तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः । मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥१२१॥ दूत उवाच ॥१२२॥ अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः । त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः ॥१२३॥ अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि । तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि किं पुनः

॥१२०॥ इस लिये महाअसुर शुम्भ वा निशुम्भ यहां आवें और मुझ को जीत कर जल्दी ही विवाह करलें ॥१२१॥ दूत बोला ॥ १२२ ॥ हे देवी तुझ को घमण्ड हुआ है मेरे सामने ऐसी बात न बोलना, तीनों लोक में ऐसा कौन मनुष्य है जो शुम्भ निशुम्भ के सामने ठहर सके ॥ १२३ ॥ सुन लड़ाई में राक्षसों के सामने सब देवता नहीं ठहर सकते हैं ॥ तब हे देवि ! तू अकेली स्त्री कैसे ठहर सकती है ॥ १२४ ॥ जिन-

---

कामनाभेदेन विशेष वस्तु कलशे ॥ धर्म्मकामः क्षिपेद्भस्म धन कामस्तुमौक्तिकम् ॥ श्री कामः कमलं न्यस्येत्कामार्थी रोचनं तथा ॥ १ ॥ मोक्षकामो न्यसेद्दस्त्रं जयकामोपराजिताम् ॥ उच्चाटनार्थं व्याघ्रीं च वश्यार्थशिखिमूलिकाम् ॥ २ ॥ मारणाय मरीचञ्च कैतवं मोहनायच ॥ आकर्षणाय पारन्तीं प्रक्षिपेत्कलशोदरे ॥ ३ ॥ इति कार्यानुसारेणैतानि कलशे क्षिपेत् ॥ अपराजिता वड़ी खिरैटी प्रसिद्धा ॥ व्याघ्री कटेरी शिखिमूलिका मोरपंखी ॥ कैतवं धत्तूरम् ॥ पारन्तीम् ॥

स्त्री त्वमेकिका ।१२४। इन्द्राद्याः सकला देवास्त-स्थुर्येषां न संयुगे। शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रया-स्यसि संमुखम् ॥१२५॥ सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः। केशाकर्षणनिर्द्धूतगौरवा मा गमिष्यसि ॥१२६॥ देव्युवाच ॥१२७॥ एवमे-तद्बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान्। किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥१२८॥ स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः तदाचक्ष्वाऽसुरे-न्द्राय स च युक्तं करोतु यत् ओं ॥१२९॥ इति श्रीमार्क-ण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्या-दूत संवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः॥५॥ उवाच ९ त्रिपा-न्मंत्राः६६ श्लोक ५४ एवम् १२९ एवमादितः॥३८८॥

शुम्भ निशुम्भ आदि के सामने इन्द्रादि देवता नहीं ठहर सकते हैं तब उन (शुम्भादिकों) के सामने तू अकेली स्त्री कैसे ठहरेगी ? ॥ १२५ ॥ इसलिये तू मेरे कहने से शुम्भ निशुम्भ के पास चली चल, बाल पकड़ा कर घिसटते हुए अपनी प्रतिष्ठा बिगाड़ कर मत जाना ॥ १२६ ॥ देवी बोली ॥ १२७ ॥ जो तूने कहा सच है शुम्भ ऐसा ही बलवान है और निशुम्भ भी बहुत वीर्यवान है पर क्या करूँ ? थोड़ी बुद्धि के कारण मैंने ऐसी प्रतिज्ञा के बारे में पहिले नहीं बिचारा था ॥ १२८॥ सो तू जाकर मैंने जो कुछ कहा है सो राक्षसाधिप

वैदिक आहुति ५ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा, घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लोंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष कपूर, पुष्प, व ऋतुफल ही है। सब चीजें स्रुचो में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीॐस्वाहा ॥ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥ य० सं० ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिवतव्वसां वसा पावानः ॥ पिवतांनरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोविदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥ य० सं० ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेमावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै धूम्राक्ष्यै विष्णुमायादि चतुर्विंशदेवताभ्यो महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

शुम्भ को समझा कर आदरसे कहना वह (शुम्भ) जो उचित समझे सो करै ॥१२९॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा ५ अध्याय की समाप्त हुई ॥

षष्ठाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ नागाधीश्वरविष्टरां फणि फणोत्तंसोरुरत्ना-वली भास्वद्देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम् । मालाकुम्भकपालनीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां सर्वज्ञेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥६॥

क्लीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः । समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् ॥ २ ॥ तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः । सक्रोधः प्राह

सिंह के ऊपर बैठी हुई मणियों की माला से दीप्तमान देहलता जिसकी सूर्य के समान कान्तिवाली तीन नेत्र से सुशोभित माला, कुंभ (घड़ा) कपाल, कमल हाथ में धारण करे हुए बाल चन्द्रमा मस्तक में विराजमान है शिव और भैरव का जो अंक वही जिसका स्थान है ऐसी सर्वोत्कृष्ट पद्मावती को ध्यान करता हूँ ॥

ऋषि बोले—॥१॥ देवी की सब बात सुन क्रोधपूर्ण दूत ने दैत्यराज (शुम्भ) के समीप विस्तार पूर्वक कही ॥ २ ॥ तब सुग्रीव (दूत) मे देवी की सब बातें सुनकर दैत्यराज ने राक्षसों के अधिपति (सेनापति) धूम्रलोचन से क्रोधयुक्त

दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोच-
नाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः । तामानय बलाद्
दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ४ ॥ तत्परित्राणदः
कश्चिद्यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः । स हन्तव्योऽमरो वापि
यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥
तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः । वृतः
षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥७॥ स दृष्ट्वा
तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम् । जगादोच्चैः प्र-
याहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः ॥८॥ न चेत्प्रीत्याद्य
भवती मद्भर्तारमुपैष्यति । ततो बलान्नयाम्येष केशा-
कर्षणविह्वलाम् ॥ ९ ॥ देव्युवाच ॥ १० ॥ दैत्ये-

कहा ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोचन ! तुम जल्दी से अपनी सेना सहित जाकर उस दुष्टा देवी के झोंटे पकड़कर खींचते हुए विह्वल करके ले आओ ॥ ४ ॥ यदि उसको बचाने के लिये दूसरा कोई देवता, यक्ष अथवा गन्धर्व आवे तो उसको मार-देना ॥ ५ ॥ ऋषि बोले—॥ ६ ॥ (दैत्यराज) से आज्ञा मिलने पर वह धूम्रलोचन दैत्य ६० हजार राक्षसों को इकट्ठा करके जल्दी से गया ॥ ७ ॥ तब उस (धूम्रलोचन) ने देवी को हिमालय की चोटी पर बैठा हुआ देख चिल्ला कर कहा कि तू शुम्भ-निशुम्भ के पास चल ॥ ८ ॥ यदि तू मेरे स्वामी के पास प्रीति पूर्वक नहीं चलेगी तो मैं केश (सिर के बाल) पकड़ कर खींचता हुआ ले जाऊँगा ॥ ९ ॥ देवी बोली

श्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः। बलान्नयसि
मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥ ११ ॥ ऋषिरुवाच
॥ १२ ॥ इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः।
हूङ्कारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥ १३ ॥
अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका। ववर्ष
सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥ १४ ॥ ततो
धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम्। पपातासुर-
सेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥ १५ ॥ कांश्चित्
करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान्। आक्रम्य
चाधरेणान्यान् सजघान महासुरान् ॥ १६ ॥

॥ १० ॥ दैत्येश्वर (शुम्भ) ने तुझ बलवान को मेरे पास
सेना सहित भेजा है, अगर तू जबरदस्ती मुझको ले जावेगा तो
मैं क्या करूँगी ? ॥ ११ ॥ ऋषि बोले ॥१२॥ इस प्रकार से कह कर
धूम्रलोचन असुर (देवी की ओर) दौड़ा, तब अम्बिका ने
हूंकार से उस धूम्रलोचन सेनापति को भस्म कर दिया
॥ १३ ॥ बाद इसके ६० हज़ार दैत्य सेना क्रुद्ध होकर पैने
बाण, शक्ति, और परश्वध (कुल्हाड़ी) बरसाने लगी ॥ १४ ॥
तब देवी का वाहन सिंह भी अपनी गरदन के बाल
(केशर) हिलाकर क्रोध से भयंकर नाद करता हुआ असुर
सेना पर झपटा ॥१५॥ कितने ही दैत्यों को हाथ की चपेट से
कितनों को मुँह से कितनों को आक्रमण करके अथवा
होठ से पकड़-पकड़कर बड़े-बड़े राक्षसों को मार दिया ॥१६॥



ओं इत्युक्तः सोऽभ्य-
धावत्तामसुरो
धूम्रलोचनः ।



हुंकारेणैव
साचकार
ततः

केषाञ्चित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी। तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥ १७ ॥ विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे। पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः ॥ १८ ॥ क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना। तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥ १९ ॥ श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम्। बलञ्च क्षयितं कृत्स्नं देवी केसरिणा ततः ॥ २० ॥ चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः। आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ ॥ २१ ॥ हे चण्ड हे-मुण्ड बलैर्बहुलैः परिवारितौ। तत्र गच्छत गत्वा

कितनों की छाती अपने नख से फाड़ गेगी तैसे ही पैर की थपेड़ द्वारा शरीर से धड़ अलग कर दिया ॥१७॥ और बहुत से राक्षसों के हाथ, शिर विभिन्न कर दिये और गरदन के केशर (बालोंको) हिलाकर छाती में से रक्त पीलिया ॥१८॥ देवी के वाहन महात्मासिंह ने अत्यन्त क्रोध के साथ क्षणमात्र में दैत्यों की बड़ी सेना का नाश कर दिया ॥१९॥ देवी ने धूम्रलोचन को मार दिया तथा सिंह ने बड़ी सेना का नाश कर दिया यह सुनकर शुम्भ ने बहुत ही क्रोध किया होठ उसके कंपित होने लगे तथा बलवान चण्ड-मुण्ड नामक असुरों को आज्ञादी कि ॥२०॥ हे चण्ड ! हे मुण्ड ! तुम दोनों बहुत बड़ी सेना ले कर वहां जाओ और वहां जाकर उस (देवी) को पकड़ कर

च सा समानीयतां लघु ॥ २२ ॥ केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि । तदा शेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥२३॥ तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते । शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ॐ ॥२४॥ इति श्री मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भनिशुम्भ सेनानीधूम्रलोचनबधो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ उवाच ४ अर्ध० श्लोक २० एवम् २४ एवमादितः ॥४१२॥

इस अध्याय की अधिष्ठाता तन्त्रान्तर के मत से धूमावती है ।

जल्दी ले आओ ॥ २२ ॥ अथवा देवी को बांध कर झोंटे पकड़ खींच लाओ यदि कोई प्रकार का सन्देह मालूम होतो सम्पूर्ण आयुध और असुरों द्वारा मार-डालना ॥२३॥ उस दुष्टा (देवी) के मारे जाने बाद तथा सिंह के भी मारे जाने पर अम्बिका को उसी दशा (मरी हुई) में पकड़के बांध कर जल्दी लाओ ॥२४॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत
देवी महात्म्य कथा में धूम्रलोचन बध की कथा समाप्त हुई ॥

वैदिक आहुति ६ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष भोजपत्र ही है। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीᳬस्वाहा ॥ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥ य० सं० ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावानः ॥ पिबतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥ य० सं०

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिचारायै सवाहनायै शताद्यै धूम्रलोचनायै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ समान सब ऊपर लिखा है ॥

सप्तमाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलांगीं न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजैःशशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम् ॥ कह्लाराबद्धमालां नियमित-विलसच्चोलिकां रक्तवस्त्रां मातङ्गीं शंखपात्रां मधुरमधु मदां चित्रकोद्भासिभालाम् ॥ ७ ॥

क्लीं ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ ॐ आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्डपुरोगमाः । चतुरंगबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥ ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।

रत्न जटित सिंहासन पर बैठी हुई तोते का मधुर शब्द सुनने वाली श्याम रंग कमल पर एक पैर स्थित है बाल चन्द्रमा धारण करने वाली वीणा बजाती हुई कमल की माला पहरे हुए शोभायमान चोली तथा रक्तवस्त्र पहरनेवाली शंख हाथ में लिये हुए मद से युक्त माथे में बिन्दी लगाये हुई मातङ्गी को ध्यान करता हूँ ॥

ऋषि बोले—१ ऐसी आज्ञा मिलने पर चण्ड-मुण्ड के साथी सम्पूर्ण चतुरंगिणी (हाथी, घोड़े, रथ, और पैदल) सेना के दैत्य आयुध (अस्त्र-शस्त्र) लेकर चले ॥२॥ उन (दैत्य) लोगों ने वहां जाकर देखा कि हिमालय की सुवर्ण-

चण्डमुण्ड वध

ॐ भ्रुकुटी कुटिला-
त्तस्या ललाट
फलकाद् द्रुतम् ।
ाली कराल वदना
विनिष्क्रान्ता-
सिपाशिनी ॥



ओं विचित्र खट्वा
धरा नरमाला
विभूषणा ।
द्वीपि चर्म परीधा
शुष्क मांसाऽति
भीषणा ।

दुर्गादत्त भक्त

ाहिर प्रेस—कलकत्ता ।

सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः । आकृष्ट-
चापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः ॥ ४ ॥ ततः
कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन्प्रति । कोपेन चास्या
वदनं मसीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥ भ्रुकुटीकुटिला-
त्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् । काली करालवदना
विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥ ६ ॥ विचित्रखट्वाङ्गधरा
नरमालाविभूषणा । द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसा-
तिभैरवा ॥ ७ ॥ अति विस्तारवदना जिह्वाललन
भीषणा । निमग्ना रक्तनयना नादापूरितदिङ्-

मयी शिखर के ऊपर देवी सिंह सर सवार हुई मन्द मन्द मुसकरारही है ॥३॥ तब सब राक्षस लोग और उनके साथी दानव देवी को इस प्रकार निःशंक बैठा हुआ देखकर धनुष खींच तरवार उठाकर (देवी को) पकड़ ने का उपाय करने लगे ॥४॥ तब अम्बिका ने उनशत्रुओं के ऊपर बहुत क्रोध करा जिस से भगवती का मुख काला हो गया तब ॥५॥ अम्बिका के टेढ़ी भौंह और माथे के सुकड़ने से अत्यन्त शीघ्र काला भयङ्कर वदना असि पाशिनी ॥६॥ विचित्र खट्वाङ्ग लेकर मुण्डमाला से शोभायमान चीते का चर्म ओढ़े अत्यन्त भयावनी क्षुधा से मांस सूख गया है ॥७॥ बहुत लम्बा शरीर मुंह के बाहर जीभ चलाती हुई भीषणा, भीतर को घुसी हुई

मुखा ॥ ८ ॥ सा वेगेनाभिपातिता घातयन्ती महासुरान् । सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥ ९ ॥ पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहि योधघण्टासमन्वितान् । समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥ १० ॥ तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह । निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयत्यतिभैरवम् ॥११॥ एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् । पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥ १२ ॥ तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः । मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥ १३ ॥ बलिनां तद्बलं

लाल आंखवाली घोर शब्द से दिशाओं को पूर्ण करनेवाली देवी निकली ॥८॥ वह भयङ्करी देवी (चण्ड-मुण्डदैत्य की) सेना पर अत्यन्तवेग से गिरकर राक्षसों को मार ने और खाने लगी ॥९॥ पार्श्व रक्षक अङ्कुशादिलिये योद्धा तथा घण्टा आदि के साथ हाथियों को एक ही हाथ से लेकर मुंह में गेरने लगी ॥१०॥ उसी तरह घोड़े, रथ और सारथी सहित योद्धा (लड़ने वाले) लोगों को पकड़ २ कर मुँह में गेर कर डरावना रूप बनाकर दांतों से चवाने लगी ॥११॥ किसी को अपने बालों से पकड़ कर किसी की गरदन पकड़ कर किसी को पैर और छाती की झपेट से कुचल दिया ॥१२॥ उन असुरों द्वारा फेंके हुए शस्त्र और महास्त्र देवी ने मुंह से पकड़ दांत से चवाना प्रारंभ कर दिया ॥१३॥ बलवान विशाल असुरों की सेना को इस

सर्वमसुराणां दुरात्मनाम्। ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यां-
श्चाताडयत्तथा ॥ १४ ॥ असिना निहताः केचित्के-
चित्खट्वाङ्गताडिताः। जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ता-
ग्राभिहतास्तथा ॥ १५ ॥ क्षणेन तद्बलं सर्वमसु-
राणां निपातितम्। दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां काली-
मतिभीषणाम् ॥ १६ ॥ शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं
तां महासुरः। छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः
सहस्रशः ॥ १७ ॥ तानि चक्राण्यनेकानि विश-
मानानि तन्मुखम्। बभुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि
घनोदरम् ॥ १८ ॥ ततो जहासातिरुषा भीमं

तरह मथन करते हुए देवी ने कितनों को खाया और मारभगाया ॥१४॥ कितनों को तरवार से मारा कितनों कोखट्वाङ्ग से ताड़ा बहुतों को दांत के अग्रभाग की चोट से नष्ट किया ॥१५॥ क्षणमात्र में ही उस बड़ी राक्षसों की सेना को नष्ट होता हुआ देख असुर चण्ड भयंकर काली के सामने पहुँचा ॥१६॥ और असुर मुण्ड ने उस कामाक्षी देवी को महाभयंकर शर (बाण) वर्षा तथा हजारों चक्र फेंककर ढक दिया ॥१७॥ भगवती काली के मुँह पर चक्रों की वर्षा कैसी शोभायमान हुई जैसे मेघ (बादल) मण्डल में अनेक सूर्यों के बिम्बआभास होते हैं ॥१८॥ इसके बाद भयङ्कर शब्द करने वाली काली देवी अत्यन्त क्रोध पूर्वक हंसीं तब कराल मुँह के भीतर दुर्द्दर्श दांतों की प्रभा से वह (काली) उज्वल हो गई

भैरवनादिनी । काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्श दशनोज्ज्वला ॥ १९ ॥ उत्थाय च महासिं हं देवी चण्डमधावत । गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥ २० ॥ अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥ २१ ॥ हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥ २२ ॥ शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च । प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥ २३ ॥ मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू । युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं

॥१९॥ तब क्रोध से महाअसि (तरवार) को उठा कर चण्ड असुर के पीछे दौड़ी और उसके केश पकड़ कर खड्ग से शिर काट दिया ॥२०॥ चण्ड को मरा हुआ जान मुण्ड भी देवी की ओर दौड़ा तब देवी ने उसको क्रोध से पृथ्वी में पटक खड्ग से मार गेरा ॥२१॥ तब मरने से बची सेना चण्ड और महावीर मुण्डको मरा देख घबड़ा कर चारों तरफ भाग गई ॥२२॥ तब काली चण्ड और मुण्ड के शिर लेकर चण्डिका के पास आ अट्टहास (ठट्ठामार) कर बोली ॥२३॥ चण्डमुण्ड नाम के दो पशु राक्षसों को मार कर तुम्हारी भेट करती हूं और शुम्भ निशुम्भ को तुम स्वयं ही युद्ध यज्ञ में

निशुम्भञ्च हनिष्यसि ॥ २४ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥ तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ । उवाच काली कल्याणी ललितं चण्डिका वचः ॥ २६ ॥ यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता । चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि ॐ ॥२७॥ इतिश्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके-मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये चण्डमुण्डवधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ उवाच २ श्लोक २५ एवम् २७ एवमादितः ॥४३९॥

मारना ॥२४॥ ऋषि बोले ॥२५॥ उन दोनों चण्ड मुण्ड के सिरको इस अवस्था में आया देख कल्याण करने वाली चंडिका ने यह ललितबात कही ॥२६॥ हे देवि चण्ड-मुण्ड को मारकर तुम आई हो इस लिये संसार में चामुण्डा नाम से विख्यात होगी ॥२७॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा में चण्डमुण्ड वध सातवां अध्याय समाप्त हुआ ॥

वैदिक आहुति ७ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष दो जायफल ही हैं। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीᳬस्वाहा ॥ य० सं० २३।२३ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिवतव्वसां वसा पावानः ॥ पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ य० सं० ६।१६

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै काली चामुण्डादेव्यै कर्पूरबीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

अष्टमाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशाङ्कुशबाणचापहस्ताम् । अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम् ॥८॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते । बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥२॥ ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् । उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥ ३ ॥ अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीति-

---

शरीर रक्त वर्ण करुणापूर्ण दृष्टि पाश, अंकुश, धनुष, वाण को धारण करे हुए अणिमादि सिद्धि रूप किरणों से वेष्टित ऐसी भवानी को ध्यान करता हूँ ॥

ऋषि बोले—॥ १ ॥ असुर चण्ड तथा असुर मुण्डको बहुत बड़ो दैत्य सेना के साथ मर जाने से असुरेश्वर ॥ २ ॥ प्रतापवान् शुम्भ ने अत्यन्त क्रोध कर अपनी सब दैत्य सेना को लड़ने की आज्ञा देकर ॥ ३ ॥ (शुम्भ ने कहा) आज

ऋषि की व्युत्पत्तिः ॥

ऋषन्ति जानन्ति सर्वमिति ऋषयः मन्त्रद्रष्टारः । सत्य वचना वा । ऋषिगतौ ॥

रुदायुधाः । कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥ ४ ॥ कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै । शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥ ५ ॥ कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः । युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥ ६ ॥ इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः । निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥७॥ आयांतं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणाम् । ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥८॥

---

८६ उदायुध (जल्दी लड़ने वाले) दैत्य सेनापति और कम्बु (शंखाकृति) के ८४ असुर अपनी अपनी सेना के साथ युद्ध में जाँय ॥ ४ ॥ कोटि वीर्य नामक असुरों के ५० कुल धूम्र (कंजे) कुल में पैदा हुए ५०० कुल मेरी आज्ञा से लड़ाई को जाँय ॥ ५ ॥ कालक, दुर्हृद, मयूरवंशी और काल वंश में पैदा हुए असुर मेरी आज्ञा से जल्दी से तयारी कर लड़ने को जाँय ॥ ६ ॥ इस प्रकार असुरपति शुम्भ भयंकर शाशन करने वाला आज्ञा देकर कई सहस्र महा सेना (छटी हुई) साथ लेकर लड़ने को निकला ॥ ७ ॥ चण्डिका ने आती हुई भीषण सेना को देख कर धनुष की टंकार से पृथ्वी और आकाश को पूरित (गुंजायमान) कर दिया ॥ ८ ॥ हे राजन ! सिंह ने भी अति गर्जना की तब चण्डिका ने अपना घण्टा बजा कर द्विगुण शब्द कर दिया

ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान् नृप । घण्टास्वनेन तान्नादानम्बिका चोपवृंहयत् ॥९॥ धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा । निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना ॥१०॥ तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् । देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारितः ॥११॥ एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् । भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः ॥१२॥ ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः । शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥१३॥ यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम् ।

इन शब्दों से काली का मुँह बढ़ गया ॥ ९ ॥ धनुष की डोरी (गुण) चढ़ाने से सिंह और घण्टे के शब्द से सब दिशा पूर्ण हो गई ॥ १० ॥ इन शब्दों को सुनकर दैत्यसेना ने चारों ओर से क्रोध पूर्वक बाण वर्षा से देवी, सिंह और काली को घेर लिया ॥ ११ ॥ हे राजा ! इसी समय में असुर दल को संहार करने और देवताओं का भय नाश करने के लिये ॥ १२ ॥ ब्रह्मा, ईश (महादेव) गुह (स्वामिकार्तिक) विष्णु और इन्द्र के शरीरों से शक्तियाँ निकल कर उन्हीं देवताओं के समान रूप और वीर्य बल से युक्त चण्डिका के समीप आई ॥ १३ ॥ जिस देवता का जैसा रूप आभूषण तथा वाहन है निश्चय उसी के समान रूप आदि से युक्त

तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान्योद्धुमाययौ ॥१४॥ हंसयुक्त विमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ॥१५॥ माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी । महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखा विभूषणा ॥ १६ ॥ कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरबाहना । योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ॥ १७ ॥ तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरिसंस्थिता । शङ्ख चक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ताभ्युपाययौ ॥ १८ ॥ यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः । शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती

शक्तियाँ असुरों से लड़ने के लिये आईं ॥ १४ ॥ हंस युक्त विमान पर बैठी हुई अक्षमाला और कमण्डल लेकर ब्रह्मा की शक्ति आई उसको ब्रह्माणी कहा गया ॥ १५ ॥ माहेश्वरी बैल पर बैठ कर त्रिशूल और वर को धारण करे हुए माथे पर अर्द्ध चन्द्रमा से सुशोभित तथा बड़े-बड़े सर्पों का चूड़ा पहरे महादेव की शक्ति माहेश्वरी आई ॥ १६ ॥ कौमरी हाथ में शक्ति (भाला) लिये मोर पर बैठी हुई गुहरूपिणी (कार्तिकेय की शक्ति) अम्बिका की तरफ से राक्षसों से लड़ने आई ॥ १७ ॥ वैसे ही वैष्णवी (विष्णु की शक्ति) गरुड़ पर सवार हो शंख चक्र गदा शार्ङ्ग (धनुष) तथा खड्ग हाथों में लेकर आई ॥ १८ ॥ यज्ञ वाराह भगवान की

तनुम् ॥ १९ ॥ नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्र संहतिः ॥२०॥ वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरिस्थिता । प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१ ॥ ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः । हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याह चण्डिकाम् ॥ २२ ॥ ततो देवी शरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा । चंडिका शक्तिरत्युग्रा शिवा शतनिनादिनी ॥२३॥ सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता । दूतत्वं गच्छ भगवन्

शक्ति वाराही भी वहाँ युद्ध में वाराह रूप में आई ॥ १६ ॥ नारसिंही शक्ति नृसिंह के समान शरीर धारण कर युद्ध में आई उसके शिर के बाल हिलने से तारागण सब हिलने लगे ॥ २० ॥ वज्र हाथ में लेकर इन्द्र के समान ऐन्द्री गजराज (ऐरावत हाथी) पर बैठकर हज़ार नेत्र युक्त युद्ध में आई ॥ २१ ॥ इसके बाद देव शक्तियों से घिरे हुए ईशान (महादेव) ने चण्डिका से कहा मेरी प्रीति से इन "राक्षसों को जल्दी मारो" ॥ २२ ॥ इसके बाद देवी के शरीर से अत्यन्त भयावनी अत्युग्रशत शिवा (असंख्य गीदड़) के समान चिल्लाने वाली "चण्डिका" शक्ति निकली ॥ २३ ॥ और उस अपराजिता भगवती ने धूम्रजटा वाले ईशान (महादेव) से कहा हे भगवन् ! आप शुम्भ और निशुम्भ

न्येन येन स्म धावति ॥ ३३ ॥ माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी । दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना ॥ ३४ ॥ ऐन्द्री कुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः । पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥३५॥ तुण्डप्रहारविध्वस्तादंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः । वाराहमूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ॥३६॥ नखैर्विदारितांश्चान्यान्भक्षयन्ती महासुरान् । नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगन्तरा ॥३७॥ चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्य-

---

की शक्ति) ने चक्र से, कौमारी (स्वामि कार्तिक की शक्ति) ने शक्ति (भाले) से दैत्यों का संहार किया ॥३३॥ ऐन्द्री (इन्द्र की शक्ति) ने वज्र फेंक कर सैकड़ों दैत्य दानवों को काट दिया उन के शरीर से रक्त बहने लगा और वे पृथिवी पर गिर गये ॥३४॥ वाराही (वाराह भगवान की शक्ति) की निकली हुई दंष्ट्रा की (तुराड) मार से तथा चक्र द्वारा राक्षसों की छाती फटकर मांस टुकड़े-टुकड़े होकर पृथवी पर गिर पड़े ॥३५॥ नारसिंही (नृसिंह की शक्ति) अपने घोर शब्द से दिशा विदशा को पूर्ण करती हुई नखून से बड़े २ असुरों को फाड़ कर खाते २ घूमने लगी ॥३६॥ और शिवदूती के प्रचराड अट्टहास शब्द से निस्तेज हो सब असुर पृथ्वी पर गिर गये और देवी त्रिशूल से काट २ कर टुकड़े करने लगी ॥३७॥ इस तरह मातृ गणों द्वारा सब असुर सेना का नाश होते देख बहुत से असुर लड़ाई छोड़-छोड़ भागने लगे

भिर्दूषिताः । पेतुः पृथिव्यां पतितास्तांश्चखादाथ सा तदा ॥३८॥ इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् । दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥३९॥ पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान् । योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥४०॥ रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः । समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणास्तदासुरः ॥ ४१ ॥ युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः । ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥४२॥

॥३८॥ मातृ गण से दैत्य सेना को पीड़ित हो कर भागते हुए देख "रक्तबीज" (किसी समय रम्भ राक्षस और उसकी स्त्री महिषी चिता में भस्म हुए थे उनके रक्त से उत्पन्न जो असुर महिषासुर के मन्त्री का भाई इस की विशेष कथा पद्म पुराण में है यह रक्त प्रधान राक्षस था) नामक राक्षस क्रोधयुक्त लड़ने गया ॥३९॥ इसके शरीर से जितनी रक्त (खून की बूंद) बिन्दु पृथ्वी पर गिरती थीं वह सब उसी समय उसके समान बलशाली असुर होती थीं । इसी से रक्तबीज नाम हुआ ॥४०॥ वह (रक्तबीज) महाअसुर हाथ में गदा ले इन्द्रशक्ति से लड़ने लगा और ऐन्द्री ने अपने वज्र से मारा ॥४१॥ वज्र की चोट से उस राक्षस के बदन से रक्त निकला जिससे उसी के समान रूप और बलवान् योद्धा पैदा होगये ॥४२॥ उस (रक्तबीज के शरीर से जितने रक्त के

कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥ ४३ ॥
यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः । तावन्तः
पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥४४॥ ते चापि
युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः । समं मातृभिरत्युग्र
शस्त्रपातातिभीषणम् ॥ ४५ ॥ पुनश्च वज्रपातेन
क्षतमस्य शिरो यदा । ववाह रक्तंपुरुषास्ततो
जाताः सहस्रशः ॥ ४६ ॥ वैष्णवी समरे चैनं
चक्रेणाभिजघान ह । गदया ताडयामास ऐन्द्री-
तमसुरेश्वरम् ॥४७॥ वैष्णवी चक्रभिन्नस्य रुधिरस्रा-
वसम्भवैः । सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः

बिन्दु गिरे उतनी ही संख्या में बलवीर्य युक्त पराक्रम वाले राक्षस पैदा हुए ॥४३॥ सब शोणित बिन्दु से पैदा हुए राक्षस सभी संग्राम में अत्यन्त उग्र शस्त्रों की वर्षा करके भयंकर युद्ध करने लगे ॥४४॥ अनन्तर ऐन्द्री ने वज्र से उसका शिर काट दिया तब उसके शरीर से रक्त बहने लगा तब सहस्रों रक्त-बीज पैदा होगये ॥४५॥ युद्ध-क्षेत्र में ऐन्द्री ने मारा तब भाग कर वैष्णवी से लड़ने लगा फिर वैष्णवी ने चक्र से काटा और गदा से मारा ॥४६॥ वैष्णवी के चक्र के घाव से रुधिर निकलने पर रक्तबीज के तद्रूप असंख्य असुर संसार में फैल गये ॥४७॥ फिर बढ़े हुए रक्तबीज महा असुर को कौमारी ने शक्ति से, वाराही ने तलवार से तथा माहेश्वरी ने त्रिशूल से

॥ ४८ ॥ शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना । माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥४९॥ स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् । मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥५०॥ तस्याहतस्य वहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि । पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥५१॥ तैश्चासुरासृक्सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् । व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥५२॥ तान्विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा । उवाच कालीं चामुण्डे विस्तरं वदनं कुरु ॥५३॥ मच्छस्त्रपातसम्भूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान् । रक्तबिन्दोः

मारा ॥४८॥ और महा असुर रक्तबीज भी अति क्रुद्ध हो सब मातृकाओं को गदा से पृथक्-पृथक् मारने लगा ॥४९॥ तब शक्ति (सांग व भाला) त्रिशूल आदि अनेक अस्त्र-शस्त्रों से (रक्तबीज को) मारने से जितनी संख्या में रक्तबिन्दु पृथ्वी पर गिरे उनसे असंख्य असुर (रक्तबीज) पैदा होगये ॥५०॥ उस असुर के रूप के तुल्य असुर समूह से सम्पूर्ण संसार भर गया इससे देवतागण वहुत भयभीत हुए ॥५१॥ तब चण्डिका भगवती ने देवगण को भयभीत देख शीघ्र ही काली से कहने लगी कि हे चामुण्डे ! तुम अपना मुख वड़ा करो ॥५२॥ मेरे शस्त्र के आघात द्वारा असुरों के रक्त और उससे उत्पन्न दैत्य समूह को रण-क्षेत्र में घूमती हुई जल्दी २ खाओ ॥५३॥



ष्याप्तमासीत्ततो
देवा भयमा जग्मु-
रुत्तमम् ८।५२॥॥
तान्विषणान्सुरा-
न्दृष्ट्वा चण्डिका
प्राह सत्वरा ॥
उवाच कालीं
चामुण्डे विस्ती-
र्णं वदनं कुरु॥५३॥
मच्छस्त्रपात सं-
भूतान् रक्तविन्दू-
न्महा सुरान् ॥
रक्तविन्दोः प्रती-
च्छत्वं वक्त्रेणा-
नेन वेगिना॥५४॥

दुर्गादत्त भक्त

वैदिक आहुति ८ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लोंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष लालचन्दन ही है। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीᳬस्वाहा ॥ य० सं० ॥२२ । २३॥ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावानः ॥ पिबतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽ आदिशोव्विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥ य० सं०६ १६

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै रक्तादयै अष्ट मातृ सहितायै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

करने लगीं ॥६२॥ गन्धर्वगाने तथा अप्सरागण नाचने लगे ।

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा ८ अध्याय की समाप्त हुई ॥

मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः ॥५९॥
ताँश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ।
*देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभि ऋष्टिभिः ॥६०॥
जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम् ।
स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमाहतः ॥ ६१ ॥
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजोमहासुरः । ततस्ते
हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥ ६२ ॥ तेषां मातृ-
गणोजातो ननर्तासृङ्मदोद्धतःॐ॥६३॥इतिश्रीमार्क-
ण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी महात्म्ये रक्त-
बीजवधो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ उवाच १
अर्ध १ श्लोक ६१ एवं ६३ एवमादितः ॥५०२॥

वज्र, बाण, तलवार, ऋष्टि (एक तरफ़ धारवाली तरवार) से रक्तबीज को मार दिया तब वह रक्तहीन होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥६०॥ मेधा ऋषि बोले ॥६१॥ हे राजा सुरथ रक्तबीज के मरने से देवगण अत्यन्त प्रसन्न हो पुष्प बरसाने लगे ॥६१॥ और सब मातृगण रक्त को पी-पीकर तृप्त हो नृत्य करने

---

*कौशिकी स्वरूपं कालिका पुराणे ॥

साकौशिकीति समाख्याता चारुरूपा मनोहरा ॥ शूलं वज्रं च बाणं च खड्गं शक्ति तथैवच ॥ दक्षिणैः पाणिभिर्देवी गृहीत्वातु विराजिता ॥ गदां घण्टां च चापं च चर्म शंखं तथैवच ॥ ऊर्ध्वा-दिक्रम तो देवी बिभ्रती वामपाणिभिः वज्रेणेत्यस्य स्थाने चक्रेणेत्य-प्यिपाठः ॥३॥ कौशिक्याश्चक्रस्या भावात्॥ २॥

तिते । शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥
५॥ हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् । अ-
भ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥६॥ तस्या-
ग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः । संदष्टौष्ठपुटाः
क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥७॥ आजगाम महावी-
र्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः। निहन्तुं चण्डिकां कोपा-
त्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥८॥ ततो युद्धमतीवासीद्दे-
व्या शुम्भनिशुम्भयोः । शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव
वर्षतोः ॥९॥ चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिकाशु

युद्ध में रक्तबीज के मारेजाने पर तथा और बहुत सेना के नाश हो जाने से शुम्भ और निशुम्भ असुरों ने बड़ा क्रोध करा ॥५॥

अनन्तर बहुत बड़ी असुर सेना को नाश होतेदेख अच्छे-अच्छे सेना समूह में घिर कर शुम्भ असुर अत्यन्त क्रोध कर दौड़ा ॥६॥ तब उस (शुम्भ असुर) के आगे पीछे दोनों बगल में असुर गण दांतपीसते तथा दांतों से होठ को चबाते हुए क्रोध कर देवी को मारने के लिये चले ॥७॥ अपनी सेना द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ महावीर्य शुम्भ असुर भी मातृगण के साथ युद्ध करने और देवी को मारने के लिये कुपित हो आगे बढ़ा ॥८॥ तब शुम्भ तथा निशुम्भ के साथ देवी का घोर संग्राम हुआ जिस प्रकार वर्षा काल में मेघ बरसते हैं ठीक उसी प्रकार बाण की उग्र वर्षा होने लगी ॥९॥ तब चण्डिका

नवमाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ बन्धूककाञ्चननिभां रुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः। बिभ्राणामिन्दुसकलाभरणां त्रिनेत्रामर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥ १ ॥

क्लीं राजोवाच॥१॥ ॐविचित्रमिदमाख्यातं भगवन्भवता मम। देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥ २ ॥ भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते। चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥३॥ ऋषिरुवाच ॥४॥ चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपा-

---

सुवर्ण (गुड़हल) के समान रक्तवर्ण सुन्दर रुद्राक्ष की माला पहरे हुये पाश, अंकुश, दंड और वर को धारण करे हुए माथे पर अर्द्धचन्द्र सुशोभित है सम्पूर्ण आभूषणों से युक्त तीन नेत्र अर्द्धनारीश्वररूप के आश्रित हूँ ॥

राजा ने कहा ॥१॥ हे भगवन् ! रक्तबीज के वध का आश्रय करके आपने अद्भुत देवी चरित्र का माहात्म्य मुझ से कहा ॥२॥ मैं अब यह सुनना चाहता हूं कि रक्तबीज के मारेजाने के अनन्तर अत्यन्त क्रुद्ध हो शुम्भ और निशुम्भ ने क्या कर्म किया ॥३॥ मेधा ऋषि ने कहा ॥४॥

मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥ १४ ॥ आवि-
ध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति । सापि
देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥ १५ ॥
ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम् । आहत्य
देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥ १६ ॥ तस्मिन्नि-
पतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे । भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः
प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥ १७ ॥ स रथस्थस्तथात्यु-
च्चैर्गृहीतपरमायुधैः ॥ भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ
नभः ॥ १८ ॥ तमायान्तं समालोक्य देवी शंख-
मवादयत् । ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव

से आने वाली शूल का चूर्ण कर दिया ॥१४॥ फिर उस ने क्रोध से देवी के ऊपर गदा फेंकी उस को भी देवी ने त्रिशूल से टुकड़े-टुकड़े कर भस्म कर दिया ॥१५॥ अनन्तर इस के दैत्यपुङ्गव (निशुम्भ) को फरसा लेकर आते हुए देख कर देवी ने बाणों से मारा तब वह असुर पृथ्वी पर गिर गया ॥१६॥ बलवान भीम भाई निशुम्भ को पृथ्वी पर गिरा हुआ देख अत्यन्त क्रोध कर शुम्भ असुर देवी को मारने के लिये दौड़ा ॥१७॥ वह (शुम्भ असुर) परम अस्त्रों से सजकर बड़ी बड़ी आठ भुजाओं द्वारा आकश को व्याप्त कर के रथ में बैठा था ॥१८॥ उस को आते हुए देख देवी ने शंख बजाया तथा धनुष पर प्रत्यंचा (रस्सी) बांध ने का शब्द

शरोत्करैः । ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥
१०॥ निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥११॥ ता-
डिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् । निशुम्भस्याशु
चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ॥१२॥ छिन्ने चर्म-
णि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः । तामप्यस्य द्विधा
चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम् ॥ १३ ॥ कोपाध्मातो
निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः । आयातं

उन दोनों असुरेश्वर शुम्भ तथा निशुम्भ के चलाये शर जाल को अपने शीघ्रता से चलाये शस्त्रों द्वारा उन दोनों असुरों के शरों को काट कर उन के अङ्गों को वेधने लगी ॥१०॥ निशुम्भ ने नङ्गी तरवार और चमकता हुआ चर्म (ढाल) ले देवी के वाहन सुन्दर सिंह के शिर में मारा ॥११॥ वाहन को पिटता हुआ देख देवी ने क्षुरप्र (बहुत तेजधार वाला बाण) चलाकर निशुम्भ की उत्तम तरवारको काट दिया तथा अष्ट चन्द्रक ढाल (जिस में रत्न के जड़े हुए आठ चन्द्रमा बने थे) को भी काट कर चूर्ण कर दिया ॥१२॥ तरवार और ढाल के कट जाने पर उस (निशुम्भ) असुरने शक्ति (सांग व भाला) चलाई तब देवी ने आगे बढ़कर उस शक्ति के चक्र से दो टुकड़े कर दिये ॥१३॥ फिर विशेष क्रोध करके निशुम्भ ने शूल उस देवी पर चलाई परन्तु देवी ने मुक्के के प्रहार

शसंस्थितैः ॥२४॥ शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा । आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥२५॥ सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम् । निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते॥२६॥शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्छरान् । चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥२७॥ ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम् । स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥२८॥ ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः । आजघान

चलाई जो अग्नि के समूह (कुण्ड) के समान शक्ति को आती देख देवी ने महोल्का नाम अपनी शक्ति से हटा दिया ॥ २५ ॥ हे महीपाल ! शुम्भ असुर के सिंहनाद (चिल्लाने) से तीनों लोकों के बाहरी स्थान भी पूरित हो गये तथा उस निर्घात घोर शब्द ने उस समय के और सब शब्दों को जीत लिया ॥ २६ ॥ अनन्तर शुम्भ के चलाये एक लक्ष शरों को देवी ने अपने उग्र शरों द्वारा काट दिया इसी प्रकार शुम्भ ने भी देवी के १ लाख शरों को निज उग्र शरों से छेद दिया ॥ २७ ॥ तब क्रोध से देवी ने शुम्भ असुर को त्रिशूल से घायल किया तब शुम्भ असुर घायल होने से मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर गया ॥ २८ ॥ इसी अवसर में निशुम्भ की मूर्छा गई (१७ संख्या के श्लोक की भाषा देखो) निशुम्भ ने चैतन्य (होश में आया) हो और धनुष लेकर शरों

दुःसहम् ॥ १९ ॥ पूरयामास ककुभो निज घण्टा-स्वनेन च । समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥२०॥ ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः । पूरयामास गगनं गां तथोपदिशो दश ॥२१॥ ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् । कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥२२॥ अट्टट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह । तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥ २३ ॥ दुरात्मँस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा । तदा जयेत्यभिहितं देवैराका-

---

भी अत्यन्त डरावना हुआ ॥१९॥ और सम्पूर्ण दैत्य सेना के तेज का नाश करने वाला घण्टा बजा कर सब दिशाओं को पूरित कर दिया ॥२०॥ हथियों के महामद को दूर करने वाले सिंह ने भी अपने गर्जन द्वारा पृथ्वी तथा दसों दिशाओं को पूरित किया ॥२१॥ इस के बाद कालीने आकाश से कूद कर अपने दोनों हाथ से पृथ्वी पर आघात किया तिस के शब्द से पहले के सब शब्द मन्द हो गये ॥२२॥ बाद में शिव दूती ने शत्रुओं का अमङ्गल करने (भयंकर डराने) वाला अट्टहास करा जिसके सुनने से राक्षसों को बहुत भय तथा शुम्भ को क्रोध हुआ ॥ २३ ॥ जब अम्बिका ने कहा "अरे दुष्ट ! ठहर-ठहर !" तब प्रसन्न होकर आकाश में बैठे देवगण कहने लगे "जय हो" ॥ अनन्तर शुम्भ असुर ने आकर अत्यन्त चमकती हुई शक्ति (साँग व भाला)

निशुम्भममरार्दनम् । हृदि विव्याध शूलेन वेगा-
विद्धेन चण्डिका ॥ ३४ ॥ भिन्नस्य तस्य शूलेन
हृदयान्निःसृतोऽपरः । महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति
पुरुषो वदन् ॥३५॥ तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य
स्वनवत्ततः । शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि
॥ ३६ ॥ ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्राक्षुण्ण शिरोऽ-
धरान् । असुरांस्तांस्तथा काली शिवदूती तथापरान्
॥३७॥ कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः ।
ब्रह्माणी मन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ॥ ३८ ॥
माहेश्वरीत्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे । वाराही-

हृदय बेध दिया ॥ ३४ ॥ शूल से बेधे हुए उस निशुम्भ असुर के हृदय में से एक दूसरा महा बलवान तथा वीर्यवान पुरुष देवी से "ठहर-ठहर" कहता हुआ निकला ॥ ३५ ॥ तिसके बाद उसे बाहर निकले हुए असुर को देवी ने हँसते बोलते खड्ग से मार दिया तब वह असुर पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥ ३६ ॥ तब दाँत से गर्दन को चबाता हुआ सिंह असुरों को खाने लगा, शिवदूती और काली और-और असुरों को खाने लगीं ॥ ३७ ॥ कौमारी की शक्ति से कोई-कोई महाअसुर टुकड़े-टुकड़े होकर मर गये। ब्रह्माणी के मन्त्र से पवित्र किये जल से निस्तेज हो गये ॥३८॥ कितने असुर

शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥२९॥ पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः । चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥३०॥ ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी । चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ॥ ३१ ॥ ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् । अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ॥ ३२ ॥ तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका । खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥ ३३ ॥ शूलहस्तं समायान्तं

से देवी, काली और सिंह को घायल कर दिया ॥ २९ ॥ तिसके बाद दनुजेश्वर (कश्यपजी की पत्नी दिति से उत्पन्न) निशुम्भ ने अयुत (दशहज़ार) बाहु विस्तार कर चक्रायुध से चंडिका को आच्छादित (ढक दिया) कर लिया ॥ ३० ॥ तब दुःखित जनों की पीड़ा नाश करने वाली भगवती दुर्गा ने क्रोधाविष्ट हो (निशुम्भ के) चक्र बाणों को अपने शरों से काट दिया ॥ ३१ ॥ तब दैत्य सेना से घिरा हुआ (राक्षस) निशुम्भ गदा लेकर देवी को मारने के लिये वेग से दौड़ा ॥ ३२ ॥ तब निशुम्भ के द्वारा आई हुई गदा को देवी चण्डिका ने तेज धार वाली तलवार से काट दिया ॥ ३३ ॥ तब देवगण को पीड़ित करने वाले निशुम्भ ने शूल उठाई और हाथ में शूल लेकर आया हुआ समीप में उसको देख चण्डिका ने शीघ्र ही अपने शूल से

१६ ॥ तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चंडिका ।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् ॥ १७ ॥
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः ।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यत ॥ १८ ॥
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान्
॥ १९ ॥ स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुंगवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्य ताडयत्
॥ २० ॥ तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१ ॥

लेकर दैत्यों का स्वामी वह शुम्भ भगवती की ओर दौड़ा ॥१६॥ तदनन्तर समीप में पहुँचे हुए शुम्भ के खड्ग और सूर्य के समान तेज वाली चर्म (ढाल) को चण्डिका ने धनुष से छोड़े हुये तीक्ष्ण बाण द्वारा काट दिया ॥१७॥ घोड़े और सारथी के मारे जाने तथा रथ और धनुष के भी कट जाने से शुम्भ ने अम्बिका को मारने के लिये कठोर मुद्गर लिया ॥१८॥ देवी ने भी सामने आये हुए दैत्य के मुद्गर को तेज शरों द्वारा काट दिया तब मुका बना कर देवी की ओर वेग से दौड़ा ॥१९॥ दैत्य पुंगव (असुरेश्वर शुम्भ ने) देवी के हृदय पर उस मुक्के को मारा तब देवी ने भी एक थप्पड़ उसके कलेजे पर मारा ॥ २० ॥ देवी के थप्पड़ की चोट खाकर वह दैत्यराज पृथ्वी पर गिर गया परन्तु जल्दी ही फिर

तुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥ ३९ ॥ खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः । वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥४०॥ केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् । भक्षिताश्चापरे काली शिवदूतीमृगाधिपैः ॐ ॥४१॥ इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥ उवाच २ श्लोक ३९ एवम् ४१ एवमादितः ॥५४३॥

माहेश्वरी के त्रिशूल से मारे गये और कितनों ही को बाराही ने अपने दाँत की चोट से पृथ्वी पर चूर्ण किया ॥ ३९ ॥ वैष्णवी ने चक्र से कितने असुरों को खण्ड-खण्ड कर दिया तथा कितने ही राक्षस ऐन्द्री के हाथ से निकले हुए वज्र से नाश हुए ॥ ४० ॥ कितने ही दूसरों की झपट से मरे और कितने महायुद्ध से भाग गये और जो कुछ बचे उन सब को काली, शिवदूती और सिंह ने खा लिया ॥ ४१ ॥

इति आगरा निवासी श्रीघनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा टीका में निशुम्भ बध की कथा समाप्त हुई ॥

चालयन्सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥२७॥
ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन्दुरात्मनि । जगत्स्वा-
स्थ्यमतीवाप निर्म्मलं चाभवन्नभः ॥२८॥ उत्पातमे-
घाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः । सरितो मार्गवा-
हिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥२९॥ ततो देवगणाः सर्वे
हर्षनिर्भरमानसाः । बभूवुर्निहते तस्मिन्गन्धर्वा ललितं
जगुः ॥३०॥ अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः ॥३१॥ ज-
ज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्तादिग्जनितस्वनाः ॐ
॥३२॥ इतिश्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्व-
न्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः
॥१०॥ उवाच ४ अर्ध १ श्लोक २७ एवम् ३२
एवमादितः ॥५७५॥

हो वह (शुम्भ असुर) निष्प्राण हो पृथ्वी में गिर गया जिससे सम्पूर्ण समुद्र, द्वीप और पर्वत के साथ पृथ्वी हल गई ॥ २७ ॥ इसके बाद उस दुरात्मा के मारे जाने से सब जगत स्थिर और आकाश निर्मल हो गया ॥ २८ ॥ जितने अनिष्ट सूचक मेघ और उल्का (शुम्भ के सामने) थे वे सब नष्ट हो गये नदियां सब अपनी पुरानी धारों में बहने लगीं ॥ २६ ॥ तब सब देव गण उस (शुम्भ) के मरने से हर्ष युक्त और निर्भय चित्त हो गये तथा गन्धर्व मनोहर गीत गाने

उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः । तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चंडिका ॥ २२ ॥ नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् । चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥ २३ ॥ ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह । उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणी तले ॥२४ । स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः । अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिका निधनेच्छया ॥१५॥ तामायान्तं ततो देवी सर्वदैत्य-जनेश्वरम् । जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्ष-सि ॥२६॥ स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।

उठ बैठा ॥ २१ ॥ और बाद में उछल कर देवी को पकड़ आकाश में ले जाकर निराधार होने पर भी चंडिका वहीं उससे लड़ने लगी ॥ २२ ॥ आकाश में दैत्य और चंडिका ने लड़ते हुए पहले सिद्ध और मुनियों को भय देने वाला युद्ध किया ॥ २३ ॥ तब बहुत देर तक अम्बिका ने उसके साथ (बाहु युद्ध) लड़ाई लड़ी और उस (शुम्भ दैत्य) को घुमाकर गेंद की तरह ऊँचा उठा पृथ्वी पर पटक दिया ॥ २५ ॥ तब पृथ्वी पर गिर जाने के बाद वह दुष्टात्मा चंडिका को मारने के लिये मुक्का उठा कर जल्दी दौड़ा ॥ २५ ॥ देवी ने उस सर्व दैत्यजन के ईश्वर को आते हुए देख कर शूल से उसके वक्षस्थल को बेध कर पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ २६ ॥ इसके बाद देवी के शूल के अग्र भाग (नोंक) से घायल

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै सिंहासनायै त्रिशूल पाशधारिण्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

एकादशाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् । स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीति करां प्रभजे भुवनेशीम् ॥११॥ यहां खीर का हवन होता है ।

*क्लीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे सेन्द्राःसुरा वह्निपुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टवु-

उदय होते हुए सूर्य के समान क्रान्ति मुकुट में चन्द्रमा तुङ्गकुचा तीन नेत्र से युक्त मुसकराती हुई वर, अंकुश, पाश अभय को धारण करनेवाली भुवनेशी का भजन करता हूं ।

ऋषि बोले ॥ १ ॥ देवी के द्वारा उस महा असुरेन्द्र को मार देने पर अग्नि और इन्द्र को आगे करके देवगण अपनी

*क्षीरि ॥ (खीर) भावप्रकाशे पूर्व खण्डे कृतान्नवर्गे ॥
पायसं परमान्नं स्यात् क्षीरिकापितदुच्यते ॥ शुद्धे र्द्ध पक्वे दुग्धेतु घृताक्तांस्तण्डुलान् पचेत् ॥ ते सिद्धाक्षीरकाख्याता सासिताज्ययुतो-

वैदिक आहुति १० अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष मैनफल व बेलफल हैं। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काँपीलवासिनीᳬस्वाहा। ॥ य० सं० २२।२३ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावानः ॥ पिबतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ य० सं० ६।१६

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

लगे ॥ ३० ॥ कोई बाजे बजाने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं सुन्दर हवा चलने लगी और सूर्य का प्रकाश भी उत्तम होगया ॥ ३१ ॥ अग्नि सब प्रज्वलित होगई और दिशाओं में प्रशान्त शब्द होने लगे ॥ ३२ ॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा टीका में शुम्भ वध की कथा समाप्त हुई ॥

भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥ विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु । त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्का ते स्तुतिःस्तव्यपरापरोक्तिः ॥ ६ ॥ सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७ ॥ सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते । स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ कलाकाष्ठादिरूपेण परिणाम-प्रदायिनि । विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽ-

---

समस्त संसार को संमोहित कर रखा है, हे देवि ! पृथ्वी पर आपही के प्रसन्न होने से मोक्ष मिलती है ॥ ५ ॥ हे देवि ! सम्पूर्ण विद्या आप ही की मूर्ति विशेष हैं, संसार में जितनी स्त्रियाँ हैं सब ही तुम्हारी मूर्ति विशेष हैं, हे जननी ! तुम अकेली ही इस विश्व में व्याप्त हो, हे देवि ! स्तुति किये जाने के योग्यों में तुम ही श्रेष्ठ हो, और किन शब्दों से तुम्हारी स्तुति करें ॥ ६ ॥ तुम सब जीवों में दीप्यमान हो, तुम स्वर्ग (सुख) और मोक्ष (यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम) देती हो तब कौन स्तव (स्तोत्र) से आपकी स्तुति करें ? ॥ ७ ॥ हे बुद्धि रूप से सम्पूर्ण मनुष्यों के हृदय में निवास करने वाली ! स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) देने वाली नारायणी ! तुमको नमस्कार है ॥ ८ ॥ हे कला काष्ठादि (घड़ी पल) रूप से परिणाम देने वाली तथा विश्व (संसार) का नाश करने की शक्ति धारण करने वाली नारायणी ! तुमको

रिष्टलाभाद्धिकासिवक्त्राब्जविकासिताशाः ॥ २ ॥
देवि प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि । अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥ ४ ॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया । संमोहितं देवि समस्तमेतत्त्वं वै प्रसन्ना

इच्छा सिद्ध होने पर देवी कात्यायनी की स्तुति करने लगे। देवगण की आशा पूर्ण हुई इस कारण प्रसन्न मुख से कहने लगे ॥ २ ॥ हे देवि ! हे शरणागत का दुःख हरने वाली ! प्रसन्न होओ, हे अखिल जगत की माता ! प्रसन्न होओ, हे विश्वेश्वरी ! प्रसन्न होओ और संसार की रक्षा करो। हे देवि ! तुम चर (जंगम) (चलायमान) और स्थावर अचर (नहीं चलने वालों) की ईश्वरी हो ॥ ३ ॥ तुम इस जगत की एकमात्र आधार हो अर्थात् मही (पृथ्वी) रूप से रहती हो, हे देवि ! तुम जल स्वरूप से रहते हुए इस सम्पूर्ण संसार में व्याप्त हो, हे देवि ! तुम्हारा वीर्य अलंघनीय है ॥ ४ ॥ हे देवि ! तुम अनन्त वीर्या वैष्णवी शक्ति हो, तुम ही संसार की कारण स्वरूप परमा माया हो, हे देवि ! तुमने

पमा । क्षीरिकादुर्जरावल्या धातुपुष्टि प्रदागुरुः ॥ विष्टम्भिनी हरेत्पित्त-रक्तपित्ताग्निमारुतान् ॥

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि । गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यार्त्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि । कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥ त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि । माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१४॥ मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽन-

---

सनातनि ! हे गुणाश्रये ! हे गुणमयि ? हे नारायणि तुमको नमस्कार है ॥ ११ ॥ हे शरणागत दीन तथा दुखी मनुष्यों की रक्षा करने वाली ! हे सब की पीड़ा हरने वाली ! हे देवि ! हे नारायणी ! तुमको नमस्कार है ॥१२॥ हे हंस युक्त विमान में बैठने वाली ! हे ब्रह्माणी रूप को धारण करने वाली ! हे कुशा के जल से शत्रुओं का नाश करने वाली ! हे देवि ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥१३॥ हे त्रिशूल, चन्द्रमा और सूर्य को धारण करने वाली ! माहेश्वरी स्वरूप से महा-

---

जगामह ॥ या सा ब्राह्मी शुभामूर्तिस्तया सृजतिवै प्रजाः ॥ ४ ॥ सौम्यरूपेण सुश्रोणि ब्रह्म सृष्टि विधानतः ॥ या सा रक्तेन वर्णेन सुरूपा नतुमध्यमा ॥ ५ ॥ शंख चक्र धरा देवी वैष्णवी साकलास्मृता ॥ सापाति सकलं विश्वं विष्णुमायेतिकीर्त्यते ॥ ६ ॥ यासा कृष्णेन वर्णेन रौद्री मूर्तिस्त्रिशूलिनी ॥ दंष्ट्रा करालिनी देवी सा संहरति वैजगत् ॥ ७ ॥ एषात्रिशक्ति रुद्दिष्टा नय सिद्धान्त गामिनीः ॥ इति धरणीं प्रति वाराह भगवतो वाक्यम् ॥

स्तु ते ॥९॥ [1]सर्वमंगलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१०॥

नमस्कार है ॥ ९ ॥ हे सर्व मंगल मंगल्ये,* हे शिवे !† हे सर्वार्थ‡ साधिके ! हे शरण्ये !+ हे अम्बिके !÷ हे गौरी !× हे नारायणी !— तुमको नमस्कार है ॥ १० ॥ हे सृष्टि,= पालन, और नाश करने वालों की शक्ति ! हे

---

* सर्वाणि हृदयस्थानि मङ्गलानि शुभानि च ॥ ददाति चेप्सिता-ल्लोके तेन सा सर्व मङ्गला ॥

† शिवामुक्तिः समाख्याता तत्प्रदत्वाच्छिवास्मृता इति ॥

‡ धर्मार्थश्चिन्तिता यस्मात्सर्वलोकस्य यच्छति ॥ अतो देवी समाख्याता लोके सर्वार्थ साधिका ॥

+ विषाग्नि भय घोरेषु शरण्या स्मरणाद्यतः ॥ शरण्यानेन सा देवी मुनिभिः परिकीर्तिता ॥

÷ सोमसूर्यानलाक्षि त्वात्त्र्यम्बका सा स्मृता बुधैः ॥

× योगाग्नि दग्ध देहा या कन्या जाता हिमालये ॥ शंखेन्दु कुन्द धवला ततो गौरीति सा स्मृता ॥

— जलायना निराधारा समुद्र शयनापि वा ॥ नारायणी समाख्याता नरनारी प्रवर्तका ॥

[1]इस श्लोक का ७ वार नित्य पाठ करने से सुन्दर फल मिलता है ॥ यह वृद्ध पुरुषों का वाक्य है ।

इति देवी पुराणे ॥

= यासा त्रिशक्तिरुद्दिष्टा शिवेन परमात्मना ॥ तत्र सृष्टिः पुराप्रोक्ता श्वेतवर्णा स्वरूपिणी ॥ १ ॥ एकाक्षरेति विख्याता सर्वाक्षर-मयी शुभा ॥ वागीशीति समाख्याता सैव देवी सरस्वतीत्युपाक्रम्य ॥ २ ॥ सा वैष्णवी विशालाक्षी रक्तवर्णा सुरूपिणी ॥ अपरा सा स-माख्याता रौद्री रुद्र परायणा ॥ ३ ॥ सितारक्ता तथा कृष्णा त्रिमूर्तित्वं

वैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तुते ॥१९॥ शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले घोररूपे महारावे नारायणि नमोस्तुते ॥२०॥ दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे । चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२१॥ लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे । महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तुते॥२२॥मेधे सरस्वतिवरेभूति वाभ्रवितामसि । नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तुते ॥२४॥ ए-

---

॥१६॥ हे शिवदूती स्वरूप से महा बलवान दैत्य को मारने वाली ! हे घोर रूपे ! हे महारावे ! हे नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥२०॥ हे दंष्ट्राकराल वदने ! हे मुण्डमाला विभूषणे ! हे चामुण्डे ! हे मुण्डमथने ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥२१॥ हे लक्ष्मी ! हे लज्जे ! हे महा विद्ये ! हे श्रद्धे ! हे पुष्टि ! हे स्वधे ! हे ध्रुवे ! हे महा रात्रि ! हे महा विद्ये ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥२२॥ हे मेधे ! हे सरस्वति ! हे वरे ! हे भूति ! हे वाभ्रवि ! हे तामसि ! हे नियते ! हे ईशे ! आप प्रसन्न होओ हे नारायणि ! आप को नमस्कार है ॥२३॥ हे सर्वस्वरूपे ! हे सर्वेशे ! हे सर्व शक्ति समन्विते ! हम सब की भय से रक्षा करो । हे देवि ! हे दुर्गे-देवि ! आपको नमस्कार है ॥२४॥ हे कात्यायनि ! आपका तीन नेत्रों से शोभायमान उत्तम मुख सब भूतों से रक्षा करे

घे। कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१५॥
शंखचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे। प्रसीद वैष्णवी-
रूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥ गृहीतोग्रमहाचक्रे
दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे। वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमो-
ऽस्तुते ॥१७॥ नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्य-
मे। त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तुते ॥१८॥
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले। वृत्रप्राणहरे

वृषभ (बैल) पर बैठने वाली ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥१४॥ हे मयूर कुक्कुट (मोर के परों से) वेष्टित ! (ढके हुए) हे महाशक्तिधरे ! हे अनघे ! (पापनाशिनी) हे कौमारि (षडानने) रूप से विचारने वाली ! हे नारायणी ! तुमको नमस्कार है ॥१५॥ हे शंख, चक्र, गदा, पद्म रूप महास्त्र धारिणी ! हे वैष्णवी-रूपे ! आप प्रसन्न होओ हे नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥१६॥ हे महा उग्र चक्र को धारण करने वाली ! हे पृथ्वी को अपने दाँत पर धारण करने वाली ! हे वराह रूपिणी ! हे शिवे ! हे नारायणी तुमको नमस्कार है ॥१७॥ हे उग्रनृसिंह के रूप से राक्षसों को मारने में उद्यम करने वाली ! हे तीनों लोक के कल्याण करने में समर्थ ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥१८॥ हे किरीटिनी ! (मुकुट को धारण करने वाली) हे वज्र के द्वारा शत्रुओं को मारने वाली ! हे सहस्र नेत्रों से प्रकाशमान होने वाली ! हे वृत्रासुर का संहार करने वाली ! हे ऐन्द्री ! हे नारायणी ! आपको नमस्कार है

तुष्टा रुष्टा तु कामान्सकलानभीष्टान् । त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ २९ ॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य धर्मद्विषां देवि महासुराणाम् । रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्तिं कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ॥३०॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्वगर्तेऽति महान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥ रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो दस्युबलानि यत्र दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र स्थिता त्वं परि पा

अशेष रोगों को हरती हो तथा रुष्ट (अप्रसन्न) होने से इच्छित पदार्थ और सब कामनाओं का नाश करती हो ! आपके आश्रित रहने से मनुष्यों को किसी प्रकार की विपत्ति नहीं होती और जो आपका ही आश्रय (भरोसा) करते हैं; वे सबके आश्रय होते हैं ॥२९॥ हे देवी ! चण्डिके ! आपने आज नाना प्रकार से कई तरह की मूर्ति बना कर धर्म के द्वेषी महा राक्षसों का जो विनाश किया सो क्या कोई दूसरा कर सकता है ? ॥३०॥ हे देवी ! तुम्हें छोड़ कौन पुरुष इस संसार को विद्या, विवेक, दीप, शास्त्र, आद्य वाक्य अथवा अत्यन्त महा अन्धकार ममत्व गर्त (गड्ढे) में भ्रमण करा सकता है ? ॥३१॥ हे देवी ! जहाँ राक्षस लोग, जहाँ बड़े विष धर सर्प, जहाँ शत्रु लोग, जहाँ चोरों का बल रहता है, जहाँ दावानल है और समुद्र के मध्य में, उन स्थानों में स्थिति होती हुई संसार की रक्षा करती

तत्तो वदनं सौम्यं लोचनत्रभूषितम् । पातु नः सर्वभू-
तेभ्यःकात्यायनि नमोऽस्तुते ॥२५॥ ज्वालाकरालम-
त्युग्र मशेषासुर सूदनम् । त्रिशूलं पातुनोभीतेभंद्रकाली
नमोऽस्तु ते ॥ २६ ॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वने-
नापूर्यया जगत् । सा घण्टा पातु नो देवि पापे-
भ्योऽनः सुतानिव ॥ २७ ॥ असुरासृग्वसापङ्क-
चर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके
त्वां नता वयम् ॥ २८ ॥ *रोगानशेषानपहंसि

आपको नमस्कार है ॥२५॥ हे कात्यायनी ! आपका मुख तीन नेत्रों से सुशोभित सुन्दर सब भूत (प्राणियों) से हम सब की रक्षा करे । हे देवी ! आपको नमस्कार है ॥२६॥ हे भद्र-काली ! कराल ज्वालायुक्त, अत्यन्त उग्र और असंख्य (बिना गिनती) असुरों को मारने वाली आपका त्रिशूल हम सब (देवगण) की सब भयों से रक्षा करे तुमको नमस्कार ॥२७॥ शब्द के द्वारा अखिल जगत को पूरित करने पर जो घण्टा राक्षसों के सम्पूर्ण तेज का नाश करता है वही घण्टा हम सब (देव-गण) की पुत्र के समान सब पापों से रक्षा करे ॥२८॥ हे चण्डिके ! हम सब आपको नमस्कार करते हैं । जो असुर समूह के रक्त से रंगी हुई और वसापङ्क (चर्बी की कीचड़) से चर्चित (सनी हुई) आपके हाथ में सुशोभित तरवार हम सब का कल्याण करे ॥ २८ ॥ हे देवि ! तुम प्रसन्न होने से

* नोट—यहाँ गिलोय की आहुति होती है ।

सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ। तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥३७॥ देवा ऊचुः ॥३८॥ *सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि। एवमेव त्वयाकार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥३९॥ देव्युवाच ॥४०॥ वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे। शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥ ४१ ॥ नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा। ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥४२॥ पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले। अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४३॥ भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्वैप्रचित्तान्महासुरा-

---

३६॥ हे देवगण! मैं वर देने वाली हूं, संसार का उपकार करने वाला जो वर तुम सब मन में इच्छा करते हो वह मुझसे मांगो, मैं दूंगी ॥३७॥ देव गण बोले ॥३८॥ हे अखिलेश्वरी! तीनोंलोक की सम्पूर्ण बाधा शान्त करो तथा इसी प्रकार हम (देवगण) लोगों के शत्रुओं का विनाश करो ॥ ३९ ॥ देवी बोली ॥ ४० ॥ वैस्वत (७वें) मन्वन्तर के २८ अट्ठाईस से युग में शुम्भ और निशुम्भ दो अन्य असुर होकर जन्म लेंगे ॥४१॥ तब नन्दगोप के घर में यशोदा के गर्भ से जन्म धारण कर विन्ध्याचल में निवास कर उन (शुम्भ-निशुम्भ) दोनों को मारूंगी ॥४२॥ फिर भी पृथ्वी

---

* हवन में यहाँ काली मिरच वा सफ़ेद सरसों की आहुति देना।

नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥४७॥ ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः । भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥४८॥ शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि । तत्रैव च वधिष्यामिदुर्गमाख्यं महासुरम् ॥४९॥ दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । ॥५०॥ पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले

मुनियों को देखूंगी, इस कारण मनुष्य मुझको "शताक्षी" कह कर मेरी स्तुति करेंगे ॥४७॥ तदन्तर जब तक वृष्टि (वरषा) न होगी तब तक हे देवगण ! मैं अपनी देह (शरीर) से उत्पन्न करके शाक द्वारा सम्पूर्ण लोक का पालन करूँगी ॥ ४८ ॥ इस कारण संसार में "मैं शाकम्भरी" नाम से विख्यात होऊँगी ॥४९॥ और उसी समय मैं *दुर्गाख्य नामक असुर को मारूँगी ॥५०॥ तब मेरा नाम "दुर्गा" ऐसा विख्यात होगा फिर जब मैं भीम रूप करके मुनिजनों की रक्षा करने के निमित्त हिमालय पर राक्षसों को मारूँगी तब सब मुनि लोग नम्र-

दुर्गमोरुरु पुत्रः पुरुषान्नमेमृति रिति ब्रह्मणोलब्धवरः ॥ अत्रशाकंभरीदेव्यवतारोऽष्टा विंशे कलियुगे इति ज्ञेयम् ।

भूयः सुरास्तिष्य युगे निराशिनी निरीक्ष्य मारीच गृहे शतक्रतोः ॥ संभूयदेव्यामित सत्यधामया सुराभविष्यामि शाकम्भरीति भगवत्यैवानुज्ञानात् वामनपुराणे ।

यदारुणाख्यो भविता महासुरस्तदा भविष्यामिहिताय देवताः । महालिरूपेण विनष्टजीवितं कृत्वा समेष्यामि पुनस्त्रिविष्टपम् ॥ कचिदरुणाक्ष इति पाठः ॥ वामनपुराणे ॥

न्। रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः । रु
व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥४५॥
श्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि मुनिभिः
ता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा ॥४६॥ ततः

पर अत्यन्त भयङ्कर स्वरूप से उत्पन्न होकर मैं वै
नामक दानवों को मारूंगी ॥४३॥

उन वैप्रचित्त नामक राक्षसों को भक्षण करने के
मेरे दांत अनार के फूल के सदृश लाल होंगे ॥४४
कारण स्वर्ग में देव गण और मर्त्य लोक में (पृथ्वी पर)
गण निरन्तर" रक्तदंतिका कह कर स्तुति करेंगे ॥५॥
पृथ्वी पर १०० सौ वर्ष की अनावृष्टि (वर्षा न
कारण मुनियों की स्तुति करने पर मैं अयोनिजा (
के गर्भ द्वारा) उत्पन्न होऊँगी ॥४६॥ तब मैं १०० नेत्र

विरुद्धाप्रचित्तिः प्रकृष्टं ज्ञानं यस्या सौ विप्रचित्तिर्नाम क
कश्यप तृतीय पत्न्याः पुत्रः । विप्रचित्ति प्रधानास्ते दानवाः
इति हरिवंशे ॥ विख्यात विप्रचित्ते र्दानवस्या पत्यानि वै
विप्रचित्तेः पुत्राः हरिवंशे प्रसिद्धाः ॥ सिंहिक
विप्रचित्तेः सुतास्तदा । दैत्य दानव संयोगाज्जातास्तीव्र
सैंहिकेया इति ख्यातास्त्रयो दश महाबलाः ॥ व्यङ्गः
नभश्चैव महाबलः ॥ वातापिर्नमुचिश्चैव इल्वलः खसृ
आञ्जिको नरकश्चैव कालनाभिस्तथैवच । राहु ज्ये
सूर्य प्रमर्दनः ॥ तत्रराहु चिर स्थायी । वातापिरगस्त्येन
नमुचिरिन्द्रेणाहतः । शेषान्वैप्रचित्तान् शुम्भ निशुम्भौ
निष्यामि ॥ इति वामन पुराणे ॥

वैदिक आहुति ११ अध्याय की ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष पुष्प व पायस ही है। सब चीजें स्त्रुची में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनीᳬस्वाहा ॥ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्त्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिबतव्वसां वसा पावानः ॥ पिबतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेय पुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्यकामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मी बीजाधिष्ठात्र्यै गरुड़ वाहिनी नारायणि दव्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

(कष्ट) होगा ॥५४॥ तब तब मैं अवतार लेकर शत्रुओं का नाश करूँगी ॥५५॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा नारायणी स्तुति की भाषाटीका समाप्त हुई ॥

रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् । तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥५१॥ भीमादेवीतिविख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥५२॥ तदाहं भ्रामरं रूपं-कृत्वा संख्येयषट्पदम् । त्रैलोक्यस्य हितार्थाय बाधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥ *भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः । इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥ तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरि संक्षयम् ओं॥५५॥ इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ उवाच ४ अर्ध १ श्लोक ५० एवम् ५५ एवमादितः ॥६३०॥

मूर्ति होकर मेरी स्तुति करेंगे ॥५१॥ और मैं "भीमा देवी" नाम से प्रसिद्ध होऊँगी और "अरुण" नामक असुर त्रैलोक्य में बाधा करेगा ॥५२॥ तब मैं असंख्य अष्टपद भ्रमर (भौंरा) होकर तीनों लोकों के हित के लिये उस (अरुण दानव) को मारूँगी ॥५३॥ तब सब जगह लोग मुझको "भ्रामरी" कह कर मेरी स्तुति करेंगे इस प्रकार जब-जब दानव (राक्षस) कृत बाधा

* भ्रामरी नाम्ना स्तोष्यन्ति वाचा पूजयिष्यन्ति ॥ भ्रामर्याः षष्टितम चतुर्युगेऽवतार इति लक्ष्मी तन्त्रे ॥

शुम्भनिशुम्भयोः॥३॥ अष्ट-
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद्वधं
म्यां च चतुर्दश्यां नवन्यां चैकचेतसः । श्रोष्यान्ति
चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥ न
तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्दुष्कृतोत्थान चापदः । भवि-
ष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥५॥ शत्रुतो
न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः । नशस्त्रानलतो-
यौघात्कदाचित्सम्भविष्यति ॥ ६ ॥ तस्मान्ममैतन्मा-
हात्म्यं पठितव्यं समाहितैः । श्रोतव्यं च सदा
भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥ ७ ॥ उपसर्गान-
शेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् । तथा त्रिविधमुत्पातं

(६ अध्याय से १३ तक) शुम्भनिशुम्भ के वध का महात्म्य
॥३॥ जो कोई अष्टमी, चौदस और दोनों नौमी नवमी को
दृढ़ चित्त होकर भक्तिपूर्वक कीर्तन करे व सुनेगा ॥४॥ उसको
दुष्कृत (पाप) व दुष्कृत-जनित कोई विपत्ति नहीं घेरेगी न उसे
कभी दरिद्रता होगी तथा न उसे अपने इष्टमित्रों का कभी
वियोग होगा ॥५॥ उसको शत्रु का कभी भय न होगा, तथा
चोर, रोग और राज का भय न होगा ॥ शस्त्र, अग्नि और जल
का भय भी कभी कुछ न होगा ॥६॥ इसलिये मेरा ये माहात्म्य
भक्तिपूर्वक चित्त लगा कर पढ़ने और सुनने योग्य है इससे
परम कल्याण होताहै॥७॥ मेरा यह माहात्म्य महामारी (प्लेग)
समुत्थित अनेक प्रकार के उपसर्ग तथा त्रिविध-उत्पात (आधि-

द्वादशाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ।

ओं विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्ध स्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् । हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखाँश्चापं गुणां तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥ १ २॥

क्लीं देव्युवाच॥ १॥ओं एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः।तस्याहं सकलांबाधां शमयिष्याम्यसंशयम् ॥ २ ॥ मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।

बिजली की रस्सी के समान कान्ति सिंह के ऊपर बैठी भाला और ढाल लिये हुए ८ कन्याओं से वेष्टित तथा हाथों में चक्र, गदा, खड्ग, ढाल, बाण, धनुष, त्रिशूल, और तर्जनी से धनुष की डोरी को बजाती हुई चद्रमा को माथे पर धारण करै हुएऐसी ३ नेत्र वाली दुर्गा का भजन करता हूं ॥

देवी बोली—॥१॥ जो मनुष्य एकाग्र चित्त हो इस (दुर्गापाठ) स्तोत्र से मेरी स्तुति सब दिन (हमेशा) किया करैगा मैं उसकी सब बाधायें(कष्ट)अवश्य ही नाश करूँगी ॥२॥ मधुकैटभ (प्रथम अध्याय) नाश का, महिषासुर के (दूसरे अध्याय से चार तक) मारे जाने का और उसी प्रकार

मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥१३॥ श्रुत्वा ममै-तन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः । पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥१४॥ रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते । नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥ १५ ॥ शान्तिकर्माणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने । ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥१६॥ उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ॥१७॥ बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् । संघात-

---

॥ १३ ॥ मेरा यह माहात्म्य तथा मेरी इस शुभ उत्पत्ति की कथा सुनने तथा युद्ध में मेरा पराक्रम सुनने से पुरुष निर्भय होता है ॥ १४ ॥ उस (सुननेवाले) के शत्रुओं का नाश हो जाता है तथा उसका कल्याण होता है और मेरा माहात्म्य सुननेवाले का कुल भी आनन्द पाता है ॥ १५ ॥ सब जगह शान्ति कामों में, और दुःस्वप्न देखने से तथा उग्र ग्रह पीड़ा में पड़ने से मेरा यह माहात्म्य सुनना चाहिये ॥ १६ ॥ इस माहात्म्य के सुनने से उपसर्ग (अतिवृष्टि-अनावृष्टि, अष्टम स्थान स्थित क्रूर ग्रह जनित अरिष्ट दुःस्वप्न आदि) और दारुण ग्रह पीड़ा शान्त हो जाती है दुःस्वप्न देखे हुये सुस्वप्न हो जाते हैं ॥ १७ ॥ बाल ग्रह के भूतों से पीड़ित बालकों को यह शान्ति कारक होता है मनुष्यों में आपस की शत्रुता

माहात्म्यं शमयेन्मम ॥ ८ ॥ यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्-नित्यमायतने मम । सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९ ॥ बलिप्रदाने पूजायामग्नि-कार्ये महोत्सवे । सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥ १० ॥ जानताजानता वापि बलिपूजां तथा कृताम् । प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृत-म्॥११॥ शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी । तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ॥१२॥ सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः । मनुष्यो

दैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक) को दूर करता है ॥८॥ जिस घर में मेरा यह माहात्म्य पूर्ण रीति से निरन्तर पाठ किया जाता है मैं उस घर को कभी परित्याग नहीं करती हूँ । वहीं मेरा सान्निध्य होता है ॥९॥ बलिप्रदान के समय पूजा के समय अग्नि कार्य (हवन) के समय वा अन्यान्य महोत्सवों में मेरे इस चरित्र का उच्चारण करना और सुनना बहुत आवश्यक है ॥१०॥ जानकर अथवा बिना जाने बलियुक्त, होम व पूजा होने से वह पूजा प्रसन्नतापूर्वक मैं ग्रहण करती हूँ ।

शरत काल (आश्विन शुक्ला) में जो वार्षिकी महा पूजा होती है उस पूजा के समय मेरा यह माहात्म्य भक्ति पूर्वक सुनने से मनुष्य॥१२॥ मेरी कृपा से सब प्रकार की आपत्तियों से मुक्त होता है धन धान्य और पुत्र समन्वित निश्चय होता है

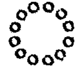
वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते । युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् । अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः ॥ २५ ॥ दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः । सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥ २६ ॥ राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा । आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥२७॥ पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे । सर्वाबाधासु घोरासु वेद-

---

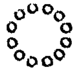
रक्षा होती है शत्रुओं के मारने वाला जो मेरा चरित्र है उसको सुनने से वैरियों के द्वारा भय नहीं रहता है ॥२३॥ तुम (देवगणों) ने जो स्तुति (४ अ० ११ अ०) करी है और जो ब्रह्मर्षियों ने स्तुति करीहै ॥ २४ ॥ तथा ब्रह्मा ने जो(१ अ० रा०सू०) स्तुति करी है इन सब स्तुतियों के पढ़ने से शुभ मति (बुद्धि) होती है, वन में, गाँव के दूर रास्ते में अथवा दावाग्नि (बाँस के जंगल) में घिर जाने से ॥ २५ ॥ चोरों से घिर जाने पर, शून्य स्थान में घिरने पर, शत्रुओं से पकड़े जाने पर, सिंह, व्याघ्र (चीते) वा वन के हाथी से चोट खाने पर ॥ २६ ॥ क्रुद्ध राजा से फाँसी की आज्ञा पाने पर, बंधन (कारागार) में जाने पर, पोत (जहाज) में समुद्र की यात्रा के समय दुष्ट बात चलने पर ॥ २७ ॥ लड़ाई में दारुण शस्त्र की वरषा होने में, अथवा सब तरह की विपत्ति तथा यंत्रणा

भेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥१८॥ दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् । रक्षोभूतपिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥१९॥ सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् । पशुपुष्पार्घधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः ॥२०॥ विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् । अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥२१॥ प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन्सकृत्सुचरिते श्रुते । श्रुतं हरति पापानि तथारोग्यं प्रयच्छति ॥ २२ ॥ रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम । युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्ट दैत्यनिबर्हणम् ॥ २३ ॥ तस्मिञ्छ्रुते

नाश करके मित्रता कराता है ॥ १८ ॥ यह अशेष दुर्वृत्त मनुष्यों का परम उत्कृष्ट बल हानिकारक है, इसके केवल पाठ मात्र से रक्ष (राक्षस) भूत और पिशाचों का नाश हो जाता है ॥ १६ ॥ मेरा यह सम्पूर्ण माहात्म्य मेरा सन्निधि (समीप लाने वाला) कारक है, उत्तम पशु, पुष्प, अर्घ, धूप, गंध, दीप ॥ २० ॥ ब्राह्मण भोजन, हवन, प्रोक्षणीय दान और अन्यान्य भोग के द्वारा रात दिन एक वर्ष पर्यन्त पूजा करने से ॥२१॥ जितना मैं प्रसन्न होती हूं उतना ही प्रसन्न मैं इसके एक बार सुनने से (सुनने वाले पर) होती हूँ मेरे माहात्म्य के सुनने से सब पाप दूर हो जाते हैं और सब रोग भाग जाते हैं ॥ २२ ॥ और मेरे जन्म का कीर्तन करने से सब भूतों से



बरदाहं सुरगणा
वरं यन्मन-
सेच्छ थ ॥



तंवृण
प्रयच्छामि
मुपकार

दुर्गादत्त भक्त

महावीर्यै शेषाः पातालमाययुः ॥३५॥ एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः । सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥३६॥ तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते । सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥३७॥ व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर । महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥३८॥ सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा । स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥३९॥ भवकाले नृणां

का विध्वंस करने वाले बड़े उग्र अतुल पराक्रमी तथा महाबली उस निशुम्भ के मारे जाने पर शेष बचे हुए राक्षस पाताल को चले गये ॥३५॥ हे राजन् ! इस तरह वह भगवती देवी नित्याभी है परन्तु बार-बार प्रकट होकर संसार का परि पालन करती है, ॥३६॥ वही भगवती इस संसार को मोहित करती है और उत्पन्न करती है तथा उस (भगवती) से याचना करने से प्रसन्न होने पर वह तत्वज्ञान और ऐश्वर्य देती है ॥३७॥ हे मनुजेश्वर ! महामारी स्वरूपा वही महाकाली महाकाल (महाप्रलय) में इस सम्पूर्ण संसार को आवरण कर (ढक) लेती है ॥३८॥ और वही किसी काल में महा मारी हो जाती है तथा किसी समय में संसार को पैदा करती है और वही सनातनी देवी किसी समय में रक्षा करती है ॥३९॥ मंगल समय में वही

नाभ्यर्दितोऽपि वा ॥२८॥ स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात्। मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिण-स्तथा ॥ २९ ॥ दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥३० ॥ ऋषिरुवाच ॥३१॥ इत्युक्त्वा सा भग-वती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥३२॥ पश्यतांसर्वे देवानां तत्रैवान्तरधीयत। तेऽपि देवा निरातङ्काःस्वाधिकारान्य-था पुरा॥३३॥ यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्वीनिहतारयः। दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ॥३४॥ ज-गद्विध्वंसिके तस्मिन् महोग्रेऽतुलविक्रमे। निशुम्भे च

पाते रहने पर ॥ २८ ॥ मेरे इस (सप्तशती) चरित्र का स्मरण करने से मनुष्य संकट से निकल जाता है, मेरे चरित्र को जो आदमी स्मरण करता है, मेरे प्रभाव से सिंह, चोर, तथा शत्रुगण ॥ २९ ॥ मेरे इस चरित्र के स्मरण करने से दूर से ही भागजाते हैं ॥ ३० ॥ ऋषि बोले ॥ ३१ ॥ इतनी कथा कह कर चण्ड विक्रमा चण्डिका भगवती ॥ ३२ ॥ देखते ही देखते देवगण के सामने से वहाँ ही अन्त-र्ध्यान होगई और सब देवगण भी निरातङ्क हो जिस प्रकार पूर्व में अपने अधिकार पर थे ॥ ३३ ॥ शत्रुओं का नाश होने से सब अपना-अपना यज्ञ भाग लेने लगे देवी के द्वारा सब दैत्यों के मारे जाने तथा देवताओं के शत्रु शुम्भ का युद्ध क्षेत्र में नाश होने से ॥३४॥ और जगत

श्वरीम् ॥४॥ आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥५॥ मार्कण्डेय उवाच ॥६॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ॥७॥ प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् । निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च ॥८॥ जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने । संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसंस्थितः ॥ ९ ॥ स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं *जपन् । तौ

हुए है और आगे होने वालों को भी मोह लेगी हे महाराजा आप उसी भगवती परमेश्वरी की शरण में जाइये ॥४॥ उसकी आराधना करने से वह (भगवती) मनुष्यों को भोग (ऐश्वर्य) स्वर्ग (सौख्य) और मोक्ष (यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ गीता से) जहां लौट कर न आवें अर्थात् बार बार जन्ममरण से रहित होना देती है ॥५॥ मार्कण्डेयजी बोले ॥६॥ हे महामुने क्रौष्टिकि ! ॥७॥ (अतिशय ममतापन्न और राज्य हरे जाने के कारण) वह राजा सुरथ मेधा (वसिष्ठ) ऋषि की बात सुन कर कठोर व्रत सम्पन्न उन महाभाग ऋषि को प्रणाम करके उसी समय तपस्या करने चला गया ॥८॥ और उस (समाधि) वैश्य ने भी ऐसा ही किया वह राजा सुरथ और समाधि वैश्य दोनों नदी के किनारे स्थित होकर भगवती के दर्शन करने के लिये ॥९॥ राजा और समाधि वैश्य दोनों देवी सूक्त का जप करने लगे उन

*जिह्वोष्ठौ चालयेत्किंचिद्देवतागतमानसः ॥ किंचिच्छ्रवणयोग्यः स्यादुपांशुः स जपः स्मृतः ॥ १ ॥

त्रयोदशाध्यायः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् । पाशाङ्कुशवराभीतिर्धारयन्तीं शिवां भजे ॥ १३ ॥

क्लीं ऋषिरुवाच ॥१॥ ॐ एतत्ते कथितं भूप देवी माहात्म्यमुत्तमम् । एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥ २ ॥ विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया । तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥ ३ ॥ मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे । तामुपैहि महाराज शरणं परमे-

---

बाल सूर्य (उदय होते हुए) के समान शरीर की कान्ति चार हाथों में पाश, अंकुश, वर, अभय, धारण करे हुए ३ नेत्र वाली शिवा की सेवा करता हूं ।

ऋषि बोले ॥१॥ हे राजासुरथ मैंने तुम से यह उत्तम देवी का माहात्म्य कह सुनाया जो देवी इस संसार को धारण करती है उस का ऐसा ही प्रभाव है ॥२॥ वही विष्णु माया विद्या देती है वही तुम को इस (समाधिवैश्य) को और हम लोगों के समान विवेकी वेद शास्त्र के जानने वाले (ज्ञानी) मनुष्यों को ॥३॥ मोहती है, मोहित करे

...ौ नना
...म वहकी
...िनौ ।
बलिं चैव
गात्रा-
...तम् ॥

एवं सामारा-
धयतो त्रिभिर्व-
र्षैर्यतात्मनो ।
परितुष्टा जगद्धात्री
प्रत्यक्षं प्राह
चण्डिका ॥

समाधि वैश्य

सुरथ राजा

वलंबलात् ॥ १७ ॥ सोऽपिवैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः । ममेत्यहमितिप्राज्ञः संगविच्युतिकारकम् ॥१८॥ देव्युवाच ॥१९॥ स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥२०॥ हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥२१॥ मृतश्च भूयः संप्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः ॥२२॥ सावर्णिको मनुर्नाम भवान् भुवि भविष्यति ॥२३॥ वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः ॥२४॥ तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यैतवज्ञानं भविष्यति ॥२५॥ मार्कण्डेय

॥१६॥ मार्कण्डेयजी ने कहा ॥१७॥ कि हे क्रौष्टिकि मुने ! राजा ने दूसरे जन्म में अखण्ड सम्पूर्ण राज्य और ॥ १८ ॥ इस जन्म में अपने पुरुषार्थ से शत्रु को मारकर अपना राज्य मिलने का वर माँगा ॥ १९ ॥ अनन्तर उस स्थिर चित्त बुद्धिमान वैश्य ने भी "यह मेरा" और "यह मैं" इस तरह अभिमान की जड़ का नाश करने वाला तत्त्व ज्ञान माँगा ॥२०॥ देवी ने कहा ॥२१॥ हे नृपति ! थोड़े ही दिनों में तू अपना राज्य पावेगा ॥ २२ ॥ और बैरियों को मार कर तेरा अखंड राज होगा, तदनन्तर मृत्यु को प्राप्त होकर फिर सूर्य से जन्म लेकर ॥ २३ ॥ पृथ्वी पर सावर्णि नामक मनु करके विख्यात होगा, और हे वैश्यवर्य ! तैने जो मुझ से मनवांछित वर माँगा है॥ २४ ॥सो वह वर मैं तुझ को देती हूँ इससे तुझ को ज्ञान की सिद्धि होगी ॥ २५ ॥ मार्कण्डेयजी ने कहा ॥ २६ ॥

तस्मिन्पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥१०॥
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः । निरा-
हारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥ ११ ॥
ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम् । एवं
समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥ १२ ॥ परितुष्टा
जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥१३॥ देव्युवाच
॥१४॥ यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन ।
मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥ १५ ॥
मार्कण्डेय उवाच ॥ १६ ॥ ततो वव्रे नृपो राज्य-
मविभ्रंश्यन्यजन्मनि । अत्रैव च निजं राज्यंहतशत्रु-

दोनों ने नदी के किनारे पर ही देवी की मूर्ति मृत्तिकाकी बना कर ॥१०॥ नित्य प्रति पुष्प, धूप, और हवन तर्पण आदिसे देवी की अनन्य भाव सेपूजा करने लगे उन दोनों ने नियमित आहार व निराहार तथा तद्गत चित्त और समाहित होकर ॥११॥ फिर राजा सुरथ और समाधि वैश्य ने अपने शरीर के रक्त व मांस का बलि देकर ३ वर्ष पर्यन्त मन व इन्द्रियों को वश कर तप किया ॥१२॥ तब चण्डिका देवी ने प्रसन्न होकर सामने प्रगट हो कहा ॥१३॥ जगद्धात्री देवी बोली ॥१४॥ हे राजा सुरथ! और हे कुल नन्दन! वैश्य तुम दोनों मुझ से जो वर चाहते हो ॥ १५ ॥ वह सब मुझ से प्राप्त करो और मैं प्रसन्न होकर तुम दोनों को वर देती हूं ।

वैदिक आहुति १३ अध्याय को ॥

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा, घी में भिगो-कर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल, इस अध्याय में विशेष १ फल, व फूल है। सब चीजें सुचो में रख खड़े होकर मंत्र बोलना ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा, पानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कांपील-वासिनीथंस्वाहा ॥ य० सं० ॥२३॥२२ इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़ना बाद में स्रुवे से घी छोड़ते हुए आगे लिखे मंत्र को बोलना ॥

ॐ घृतंघृतपावानः पिवतव्वसां वसा पावानः ॥ पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशऽ-आदिशोविदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ य० सं० ॥६।१९

उसदेवीकी स्तुति करी और उसी समय देवी प्रसन्नता पूर्वक वहाँ से अन्तरध्यान हो गई ॥ २८ ॥ इस प्रकार सुरथ राजा देवी से वर प्राप्त करके सूर्यदेव से सवर्णा में उत्पन्न होकर सावर्णि नाम का मनु होगा ॥ २९ ॥

इति श्री आगरा निवासी घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा पाठ भाषा टीका में सुरथ वैश्य को वरदान १३ अध्याय समाप्त हुआ ॥

उवाच ॥ २६ ॥ इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ॥२७॥ बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्याम- भिष्टुता । एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥२८॥ सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णि- र्भविता मनुः ॥२९॥ *एवं देव्यावरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥ सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॐ ॥ ३० ॥ इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमा- हात्म्ये सुरथवैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ उवाच ६ अर्ध ११ श्लोक १२ एवं २९ एवमादितः ॥७००॥ समस्त उवाच ५७ अर्ध ४२ श्लोक ५३५ अवदानम् ॥६६॥

देवी ने उन दोनों (सुरथ और समाधि) को इस प्रकार इच्छित वर देने के ॥ २७ ॥ अनन्तर सुरथ और समाधि दोनों ने

---

* स्तोत्रे च संहितायाञ्च अन्तश्लोकं पठेद्द्विधा ॥ इति रुद्र- यामले ॥ ब्रह्मानन्द रसं पीत्वा येतु उन्मत्त योगिनः ॥ इन्द्रोऽपि रङ्कव- द्भाति का कथा नृप कीटकः ॥

सप्तशती स्तोत्र प्रशंसा लक्ष्मी तन्त्रे ॥

सम्यग्हृदि स्थिता सेयं जन्मकर्मावलिस्तुतिः ॥ एतां द्विज मुखा- ज्ज्ञात्वा अधीयानो नरः सदा ॥ विधूय निखिलां मायां सम्यग्ज्ञानं समश्नुते ॥ सर्वसम्पदमाप्नोति धुनोति निखिलापद इति ॥ सर्वेषां द्विजातीनां सप्तशती पाठनिष्टानां कामधुगेवेति शिवम् ॥

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते॥ यानि चात्यर्थ घोराणि तैरक्षास्मांस्तथाभुवम् ॥ कवचाय हुम् ॥ ॐ खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेम्बिके ॥ कर पल्लव संगीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः ॥ नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ॥ भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तु ते ॥ अस्त्रायफट् ॥ एवं करतलादि ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धास्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् । हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखाँश्चापं गुणां तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥ १ ॥ ❀

अथ ऋग्वेदोक्त देवीसूक्तम् ॥

ॐ अहमित्यष्टर्चस्य सूक्तस्य वागम्भृणी ऋषिः सच्चित्सुखात्मकः सर्वगतः परमात्मादेवता,

ॐ जय जय मार्कण्डेयपुराणेसावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥ ऐसा बोलकर जल छोड़ना ॥

तान्त्रिक आहुति ॥

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै* श्री विद्यायै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है ॥

अथोत्तर न्यासाः ॥

ओं ह्रीं हृदयाय नमः ॥ ओं चं शिरसे स्वाहा ॥ ओं डिं शिखायैवषट् ॥ ओं कां कवचायहुम् ॥ ओं यैं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ओं ह्रीं चंडिकायै अस्त्रायफट् ॥

ओं खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी वाणा भुशुण्डी परिघायुधा ॥ हृदयाय नमः ॥ ओं शूलेनपाहिनो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ॥ घण्टा स्वनेन नः पाहि चापज्या निःस्वनेन च ॥ शिरसे स्वाहा ॥ ओं प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यांच चण्डिके रक्ष दक्षिणे ॥ भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यांतथेश्वरी ॥ शिखायैवषट् ॥ ओं

---

*श्री महा त्रिपुरसुन्दर्यै ।

अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम्। अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये ३ यजमानाय सुन्वते ॥२॥
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्॥ तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥

यद्यपि "मैं" (आत्मा) कहने से साधारणतः देहात्म बुद्धि युक्त जनन, मरण, धर्मी सुख दुःख से चञ्चल संसार क्लिष्ट एक जीव मात्र समझा जाता है, तथापि कुछ धीर भाव से "मैं" (आत्मा) का स्वरूप विचारें तो हम इसे बहुत ऊँचे स्तर (पर्त वा तह) का "मैं" देखपाते हैं। आओ पिपासित साधक! हम माता का नाम लेकर आगे बढ़ें ॥१॥ "मैं" (आत्मा) शत्रु हन्ता सोम, (सोम याग) त्वष्टा, (विश्व कर्मा) पूषा (सूर्य) एवं भग (ईश्वर) नामक देवताओं को धारण करती हूं जो देवताओं के उद्देश्य से प्रचुर हवि युक्त सोमयागादि का अनुष्ठान करते हैं, उन यजमानों का यज्ञफल "मैं" (आत्मा) धारण करती हूं ॥२॥ "मैं" (आत्मा) इस ब्रह्माण्ड की एक मात्र अधीश्वरी हूं, "मैं" पार्थिव और अपार्थिव धन देने वाली हूं "मैं" (आत्मा) ब्रह्म साक्षात्कार रूपा सम्वित् वा ज्ञान रूपा हूं। यह ज्ञान ही सब उपासनाओं का आदि है, "मैं प्रपञ्च रूप से अनेक भाव में अवस्थिता हूं। भूरि भाव से अनन्त जीवों में प्रविष्टा हूं, देवता इस प्रकार मेरी अनेक भाव से उपासना करते हैं ॥३॥ जीव जो

द्वितीयाया जगती, शिष्टानांत्रिष्टप् छन्दः, देवी माहात्म्य पाठे विनियोगः ॥

अथ ध्यानम् ॥

ॐ सिंहस्था शशि शेखरा मरकत प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः शंखं चक्र धनुः शरांश्च दधतीं नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ॥ आमुक्ताङ्गदहार कंकणरणत्काञ्चीरणन्नूपुरा दुर्गा दुर्गति हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डला ॥

ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिराम्याहमादित्यैरुतविश्वदेवैः। अहंमित्रावरुणोभाविभर्म्यहमिंद्राग्नी अहमश्विनोभा ॥१॥

सिंह पर बैठी हुई मस्तक पर चन्द्रमा शोभित है मरकत मणि (पन्ना) के समान कान्ति ४ हाथों में शंख चक्र धनु बाण धारण करे हुए तीन नेत्रों से सुशोभित रतन जड़े कुंडल तथा सम्पूर्ण आभूषण पहरे हुए पैरों में नूपुर बजते हुए जो हमारी दुर्गति तथा दरिद्र को नाश करे ऐसी दुर्गा का ध्यान करता हूँ ॥

मैं (सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा) रुद्र, वसु, आदित्य, इस प्रकार विश्वदेवगण रूप से विचरती हूं। मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि और दोनों अश्विनी कुमारों को "मैं" (आत्मा) ही धारण किये हुए हूं ॥ (व्याख्या) (अहं=मैं) सत्=सत्य, चित्=चैतन्य और आनन्द स्वरूप आत्मा ही (मैं) हूं ॥

अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरपस्व
न्तः समुद्रे ॥ ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वो तामूं-
द्यां वर्ष्मणोपस्पृशामि ॥ ७ ॥

अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा भुवनानि
विश्वा । परोदिवा पर एना पृथिव्यै तावती महिना
संवभूव ॥ ८ ॥

* ॐ तत्सत् *

ऋग्वेदोक्त देवी सूक्तं सम्पूर्णम् ॥

पर आत्म स्वरूप शर (बाण) युक्त करती हूं, एवं इस प्रकार "मैं" ही जनमूह के लिये युद्ध करती हूं । "मैं" स्वर्ग मर्त्य दोनों लोकों में सर्वतो भाव से अनुप्रविष्टा हूं ॥६॥ "मैं" (आत्मा) ने जगत्पिता को उत्पन्न किया । इसके ऊपरी भाग में आनन्दमय कोषाभ्यन्तरस्थ विज्ञानमय कोष में हमारा कारण शरीर अवस्थित है । "मैं" समग्र भुवनों में प्रविष्ट होकर अवस्थिता हूं । यह जो दूरवर्ती स्वर्ग लोक है वह भी "मैं" ने अपने शरीर द्वारा स्पर्श किया है ॥७॥ "मैं" (आत्मा) जबवायु की भांति प्रवाहित होती हूं तब ही यह समग्र भुवनों की सृष्टि आरम्भ होती है । इस स्वर्ग, मर्त्य के परे भी "मैं" (आत्मा) वर्तमान हूं । यही मेरी महिमा है ॥८॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत ऋग्वेदोक्त देवी सूक्त की भाषा समाप्त हुई ॥

मयासो अन्नमत्ति यो विपश्यतियः प्राणि-
ति य ईं शृणोत्युक्तम् ॥ अमन्तवो मान्त उपक्षियन्ति
श्रुधि श्रुत श्रद्धिवन्ते वदामि ॥४॥

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत
मानुषेभिः ॥ यंकामयेतं तमुग्रं कृणोमितं ब्रह्माणं
तमृषिं तं सुमेधाम् ॥ ५ ॥

अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषेशर वेहन्त
वा उ । अहंजनाय समदं कृणोम्यहं द्यावा पृथिवी
आविवेश ॥ ६ ॥

अन्नादि खाद्य द्रव्य भक्षण करता है, दर्शन करता है एवं प्राण धारण करता है ये सब क्रियायें मेरे द्वारा ही सिद्ध होती हैं। जो मुझको इस तरह (सब कर्मों में) नहीं देखते, समझ नहींसकते, वेही संसार में क्षीणता (नाश को प्राप्त होते हैं)। हे सौम्य ! तुमसे जो तत्व कहे हैं उन्हें श्रद्धासहित सुनो ॥४॥ "मैं" (आत्मा) ने स्वयं ही इन तत्वों का उपदेश दिया है, देवता और मनुष्यों द्वारा यही परिसेवित (चरण सेवा) है, "मैं" जिसको इच्छा करती हूं, उसको सबसे उच्च पद प्रदान करती हूँ उसको ब्रह्मा करती हूं, ऋषि बनाती हूँ, उसको आत्म ज्ञान धारणोपयोगिनी मेधा (बुद्धि) प्रदान करती हूँ ॥५॥ "मैं" (आत्मा) ब्रह्म ज्ञान विरोधी विनाश योग्य रुद्र (एकादश इन्द्रिय) को हनन करने के लिये प्रणव रूप धनुष

सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्त-
स्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥११॥ या देवी सर्वभूतेषु
शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमो नमः ॥१२॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णा-
रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥१३॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥ १४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो-
नमः ॥१५॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥१६॥
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १७ ॥ या देवी
सर्व भूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८ ॥ या देवी
सर्वभूतेषु कान्ति रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १९ ॥ या देवी
सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २० ॥ या देवी
सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नम-

अथ देवी सूक्तम् ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्मताम् ॥१॥
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दु रूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ २॥
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमोनमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमोनमः ॥३॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै । ख्यात्यै
तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥ अति-
सौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमोनमः । नमो जग-
त्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥५॥ या देवी सर्व-
भूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमोनमः ॥६॥ या देवी सर्वभूतेषु चेत-
नेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥७॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥८॥ या
देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ९ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १० ॥ या देवी

विनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥* इति देवीसूक्तं पठित्वा नवार्णं २०७ पृष्ठोक्त न्यासान्विधाय ॥

महाकाल्यादि ध्यानम् ॥

दशास्यां दशपादाञ्च दशहस्तां विधिस्तुताम् ॥ इन्द्रनील द्युतिं खड्गं चक्रं शंखं शिरः शरान् ॥ दशहस्तेषु दधतीं गदा शूलं भुशुंडिकाम् ॥ परिघञ्च धनुर्बाणौ दधतीं ब्रह्म संस्तुताम् ॥ मधुकैटभनाशार्थं सालंकारां त्रिवीक्षणाम् ॥१॥

ततोध्यायेन्महालक्ष्मीं महिषासुर मर्दिनीम् ॥ समस्त देवता तेजो जाताम्पद्मासन स्थिताम् ॥ अष्टादशभुजा मक्षमालां च पञ्चसायकान् ॥ खड्गं वज्रं गदां चक्र दक्षहस्ते कमण्डलुम् ॥ शंखंचदधतीं वामे शक्तिं च परशुन्धनुः ॥ चर्मदण्डौ सुरापात्रं घण्टां पाशं त्रिशूलकम् ॥२॥

सरस्वतीं ततोध्यायेच्छरच्चन्द्र समप्रभाम् ॥ घण्टां शंखंचमुसलञ्चक्र बाणान्दक्षेषु बिभ्रतीम् ॥ शूलं हलं चापं वाम हस्तेषु बिभ्रतीम् ॥ गौरी देह समुद्भूतां नृणामानन्द दायिनीम् ॥ आधारभूतां

* इसका अर्थ ५ अध्याय में देखना ।

स्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २१ ॥ या देवी सर्व-
भूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमोनमः ॥२२॥ या देवी सर्वभूतेषु दया
रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ २३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥२४॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥२५॥
या देवी सर्वभूतेषु भ्रांतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २६ ॥ इन्द्रिया-
णामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु
सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमोनमः ॥ २७ ॥ चिति-
रूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् । नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २८ ॥
स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु
सेविता । करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि
भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ २९ ॥ या सांप्रतं चोद्ध-
तदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्य ते । या
च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्ति

यदत्रपाठे जगदम्बिके मया, विसर्गबिंद्वक्षरहीनमीरितम् ।
तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः संकल्पसिद्धिश्च सदैवजायताम् ॥६॥

यन्मात्रा बिन्दु-बिन्दु द्वितय-पद-पद-द्वन्द्व-वर्णादिहीनम् ।
भक्त्या-भक्त्यानु पूर्वं प्रसभ कृति वशाद्व्यक्तमव्यक्तमम्ब ॥

मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं साम्प्रतं ते स्तवेस्मिं ।
स्तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे त्वत्प्रसादात्प्रसीद ॥७॥

प्रसीद भगवत्यम्ब प्रसीद भक्तवत्सले ।
प्रसादं कुरु मे देवि दुर्गे देवि नमोस्तु ते ॥८॥

यस्यार्थे पठितं स्तोत्रं तवेदं शङ्कर प्रिये ।
तस्य देहस्य गेहस्य शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥९॥

ओं शान्तिः ॥ ओं शान्तिः ॥ ओं शान्तिः ॥

प्राधानिकरहस्यम् ।

ओं अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य नारायणऋषिरनुष्टुप्छन्दः महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती देवता यथोक्तफलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ॥

इस सप्तशती के—तीनों रहस्यों के नारायण ऋषि तथा अनुष्टुप् (३२ अक्षर का) छन्द है और तीनों रहस्यों की महा काली महा लक्ष्मी तथा महा सरस्वती देवता हैं मनःवांछित फल प्राप्ति के लिये इस का पाठ करते हैं ।

जगतः शुम्भादिक विमर्दिनीम् ॥३॥* इति ध्यात्वा मानसोपचारैर्पूजयेत् ॥

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे १०८॥ नवार्णा मंत्रं जप्त्वा ३८७पृ० पुनरुत्तर न्यासानविधाय गुह्यातिगुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ २१ ॥ ❀ ॥ ❀

क्षमापनम् ॥

ओं यदक्षरं पदभ्रष्टं मात्राहीनञ्च यद्भवेत् ।
क्षन्तुमर्हसि तद्देवि कस्य न स्खलितं मनः ॥ १ ॥

अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
विपरीतं तु तत्सर्वं क्षमस्व परमेश्वरि ॥ २ ॥

यस्याः स्मृत्यार्चनामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ ३ ॥

मन्त्र हीनं क्रिया हीनं भक्ति हीनं सुरेश्वरि ।
या स्तुतासि मया देवी तस्मात्त्वं वरदा भव ॥४॥

कामेश्वरि जगन्मातः सच्चिदानन्द विग्रहे ।
गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि ॥५॥

---

* इन श्लोकों का अर्थ अध्याय १।२।५ में देखना ।

लिङ्गं गदां खेटं पानपात्रंच बिभ्रती । नागांलिङ्गंच योनिं च बिभ्रती नृप मूर्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकाञ्चन-वर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा । शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥ शून्यंतदखि-लं लोकं विलोक्य परमेश्वरी । बभार रूपमपरं तमसा केवलेन हि ॥७॥ सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राञ्चि-तवरानना । विशाललोचना नारी बभूव तनुम-ध्यमा ॥८॥ खड्गपात्रशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा । कबन्धहारं शिरसाबिभ्राणाहि शिरः स्रजम् ॥९॥

राजन् वह मातुलिंग (बिजौराफल), गदा, खेट, (ढाल) पानपात्र (कटोरा) इनको हाथों में और नाग, लिंग, योनि (कारण) इनको शिर पर धारण करती है ॥५॥ तथा तप्त सुवर्ण के समान कान्ति वाली और तपाये हुए सुवर्ण के समान सुन्दर आभूषण पहरे हुए अपने तेज से सम्पूर्ण आकाश को पूरित करती हुई ॥ उस परमेश्वरी ने सम्पूर्ण जगत को शून्य (०) देख कर केवल तमोगुण से एक अन्य रूप धारण किया ७॥ और वह भिन्न अञ्जन के समान का-न्तिवाली दंष्ट्रा से शोभायमान मुखवाली विशाल नेत्रों से शोभित तथा सूक्ष्म कटि (कमर) वाली स्त्री के स्वरूप हो गई ॥८॥ और खड्ग, पानपात्र, (कटोरा) शिर, तथा माला शिर से धारण करती हुई ॥ ६ ॥ उस तामसी उत्तम

राजोवाच ॥

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः । एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन्प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥१॥ आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन तद्द्विज । विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥ २ ॥ ऋषिरुवाच ॥

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते । भक्तोऽसीति न मे किञ्चित्तवावाच्यं नराधिप ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी । लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥४ ॥ मातु-

---

राजा बोला—हे भगवन् ! आपने दुर्गा (चण्डिका) के अवतार कहे परन्तु हे ब्रह्मन् इन की प्रकृति कहिये ॥१॥ और हे द्विज ! भगवती के जिस स्वरूप की आराधना (उपसना) मुझ को करनी है वह विधि पूर्वक मुझ दीन को कहिये ॥ २ ॥ ऋषि ने कहा—कि यह रहस्य परम गुप्त है और किसी से कहने लायक नहीं है तथापि हे राजन् तू भक्त है इस कारण मेरे समीप ऐसा कोई पदार्थ नहीं जो तुझ से न कहूँ ॥ ३ ॥ सब की आदि स्वरूपा महालक्ष्मी तीनों गुण वाली परमेश्वरी है तथा वह लक्ष्य और अलक्ष्य स्वरूपा है और सम्पूर्ण में व्याप्त होकर स्थित है ॥ ४ ॥ हे

शधरा वीणापुस्तकधारिणी। सा बभूव वरा नारी नामा-न्यस्यै च सा ददौ ॥१५॥ महाविद्यामहावाणी भारती वाक् सरस्वती । आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा चधीश्वरी ॥ १६ ॥ अथोवाच महालक्ष्मीर्महा-कालीं सरस्वतीम् । युवां जनयतां देव्यौ मिथुने-स्वानुरूपतः ॥ १७ ॥ इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् । हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥ १८ ॥ ब्रह्मन्विधे विरञ्चेति धातरि-त्याह तं नरम् । श्रीःपद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता

॥१४॥ तथा अक्ष (रुद्राक्ष) माला, अंकुश, वीणा, और पुस्तक इन को धारण करे हुए वह उत्तम नारी हो गई और इस के नाम भी कहने लगी ॥१५॥ महाविद्या १, महावाणी २, भारती ३, वाक् ४, सरस्वती ५, आर्या ६, ब्राह्मी ७, कामधेनु ८, वेदगर्भा ९, और १० धीश्वरी, ॥१६॥ तदन्तर महालक्ष्मी ने कहा कि तुम दोनों देवी अपने २ स्वरूप के अनुसार स्त्री पुरुष का जोड़ा उत्पन्न करो ॥१७॥ फिर महालक्ष्मी ने उन दोनों से यह कह कर आप ही महाकाली और महासरस्वती हिरण्यगर्भ वाले सुन्दर कमला सन पर बैठे स्त्री पुरुष का १ जोड़ा उत्पन्न किया ॥१८॥ फिर उस पुरुष के हे ब्रह्मन् हे विधि २, हे विरंचि ३, हे धातः ४ नाम धरे और उस स्त्री से श्रीः १, पद्मा २, कमला ३, और लक्ष्मी ४ ये नाम कहे ॥१९॥ तिस के बाद महाकाली और

सा प्रोवाच महालक्ष्मींतामसी प्रमदोत्तमा । नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥१०॥ तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् । ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥११॥ महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा । निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥१२॥ इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः । एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥१३॥ तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप । सत्त्वाख्ये नातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥१४॥ अक्षमालाङ्कु-

---

नारी (स्त्री) ने महालक्ष्मी से कहा कि, हे माता ! तुम मेरा नाम धरो और मेरा कर्म बताओ मैं तुम को नमस्कार करती हूँ ॥१०॥ फिर उस महालक्ष्मी ने उस उत्तम तामसी स्त्री रूप से कहा कि, मैं तेरे नाम और जो कुछ कर्म हैं सो कहे देती हूँ ॥ ११ ॥ महामाया १ महाकाली २ महामारी ४ (प्लेग) ५ क्षुधा, (भूख), ६ तृषा (प्यास), ७ निद्रा, तृष्णा, ८ एक वीरा, ९ कालरात्री १० और दुरत्यया ॥११॥ यह तेरे नाम कर्म के अनुसार और उन नामों से जो तेरे कर्मों को जानकर पढ़ता है वह सुख पाता है हे राजन् ! महालक्ष्मी ने उस से ऐसा कहकर अति शुद्ध सतोगुण युक्त चन्द्रमा के समान कान्ति दूसरा स्वरूप धारण कर लिया

चण्डी सुन्दरी शुभगा शुभा ॥ २४ ॥ एवं युव-
तयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे । चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति
नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥ २५ ॥ ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं
महालक्ष्मीर्नृपत्रयीम् । रुद्राय गौरीं वरदां वासु-
देवाय च श्रियम् ॥ २६ ॥ स्वरया सह संभूय
विरञ्च्योऽण्डमजीजनत् । बिभेद भगवान् रुद्रस्तद्
गौर्या सह वीर्यवान् ॥ २७ ॥ अण्डमध्ये प्रधानादि
कार्यजातमभून्नृप । महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्था-
वरजङ्गमम् ॥ २८ ॥ पुपोष पालयायास तल्लक्ष्म्या

॥२४॥ बाद में यह स्त्रियां तत्काल ही पुरुषत्व को प्राप्त हो गईं सो ऐसा दिव्य दृष्टि वाले पुरुष तो देखते हैं और मनुष्य नहीं जानते ॥२५॥ हे नृप ! महालक्ष्मी ने वेदत्रयी पत्नी को ब्रह्मा को दिया और खवर देने वाली गौरी को शिव के लिये और विष्णु को लक्ष्मी दी ॥२६॥ फिर ब्रह्मा ने स्वरा के साथ मिल कर इस ब्रह्माण्ड (जगत) को रचा और वीर्यवान् रुद्र भगवान् ने गौरी के साथ मिलकर उस (ब्रह्माण्ड) को फोड़ा ॥२७॥ और हे राजन् । ब्रह्माण्ड (संसार) में प्रधानादि जो कुछ कार्य हुआ वह संपूर्ण जगत् स्थावर, जंगम और महाभूत पृथ्वी, जल, प्रकाश, वायु आकाश हैं इन से उत्पन्न हुआ है ॥२८॥ वाद में विष्णु भगवान ने लक्ष्मी के साथ हो

चतांस्त्रियम् ॥ १९ ॥ महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह । एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥ २० ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्र शेखरम् । जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २१ ॥ स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः । त्रयीविद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥ २२ ॥ सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप । जनयामास नामानि तयो-रपि वदामि ते ॥ २३ ॥ विष्णुः कृष्णो हृषी-केशो वासुदेवो जनार्दनः । उमा गौरी सती

महासरस्वती ने भी अपने २ दोनों जोडे रचे उन के भी स्वरूप और नाम तुझ से कहता हूं ॥२०॥ महाकाली ने नीलकण्ठ वाले रक्तबाहु श्वेत शरीर वाले तथा चन्द्रमा को ललाट पर धारण करे हुए पुरुष को और गौरी स्त्री को उत्पन्न किया ॥२१॥ और उस पुरुष के रुद्र, शंकर स्थाणु, कपर्दी, और त्रिलोचन ये नाम कहे तथा उस स्त्री के त्रयी, विद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा, और स्वरा ये नाम धरे ॥२२॥ और हे राजन्! सरस्वती ने गौरी स्त्री और कृष्ण पुरुष को उत्पन्न किया। उन दोनों के नाम मैं तुझ से कहता हूं ॥२३॥ पुरुष के विष्णु कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव और जनार्दन, तथा स्त्री के उमा, गौरी, सती, चण्डी सुन्दरी सुभगा, और शुभा,

अथ वैकृतिरहस्य प्रारम्भः ॥

ऋषिरुवाच ॥

ओं त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता । सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥ योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा । मधुकैटभ नाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दश भुजा दशपादाञ्जनप्रभा । विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप । रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥ ४ ॥

ऋषि बोले--तुमने जो त्रिगुणा तामसी और सात्त्विकी देवी कही वही शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा और भगवती कहाती है ॥ १ ॥ तथा तमोगुणवाली महाकाली विष्णुभगवान् की योगनिद्रा कहाती है कि जिसकी स्तुति मधुकैटभके नाश के लिये ब्रह्माने करी थी ॥२॥ दशमुखा, दशभुजा और दश चरणवाली तथा काजल के समान श्याम प्रभावाली एवं तीन नेत्रों की विशाल माला से शोभायमान ॥३॥ हे राजन् ! देदीप्यमान दांत और दंष्ट्रावाली वह भयंकर स्वरूपिणीभी महालक्ष्मी में रूप सौभाग्य और कान्ति इनकी प्रतिष्ठारूप होकर स्थित है ॥ ४ ॥ तथा खड्ग, बाण, गदा, शूल,

सह केशवः । संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ॥ २९ ॥ महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी । निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत् ॥ ३० ॥ नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ओं ॥३१॥ इतिप्राधानिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

सब का पालन किया और महेश्वर ने गौरी के साथ उस सम्पूर्ण जगत् का संहार (नाश) किया ॥२९॥ हे महा भाग राजा सुरथ ! महालक्ष्मी सर्वसत्वमयी ईश्वरी है वही निराकार और साकार नामों को धारण करती है ॥३०॥ तथा यही महालक्ष्मी और नामों से भी निरूपण की जाती है परन्तु जो नाम कहे हैं उन से भिन्न नाम करके नहीं ॥३१॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत प्रधानिक रहस्य की भाषा टीका समाप्त हुई

न्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात् ॥ १० ॥ अक्ष-
माला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा। चक्रं त्रिशूलं
परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दण्डश्च-
र्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः । अलंकृतभुजामेभिरा-
युधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवमयीमीशां
महा लक्ष्मीमिमां नृप । पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां
प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्त्वैक-
गुणाश्रया । साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुर-
निबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौ चाष्टभुजा बाणमुसलं
शूलचक्रभृत् । शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं

ऐसी वह पूज्य अठारह भुजावली सहस्र भुजावाली है अब यहां क्रम से दक्षिण और वाम हाथों के आयुध कहेंगे ॥१०॥ १ अक्षमाला, २ कमल, ३ वाण, ४ तरवार, ५ वज्र ६ गदा, ७ चक्र, ८ त्रिशूल, ९ फरसा, १० शंख, ११ घंटा, १२ फांसी ॥ ११ ॥ १३ शक्ति, १४ दंड, १५ ढाल, १६ धनुष, १७ पानपात्र, १८ कमंडलु (लोटा व तोंबी) इन आयुधों से अलंकृत भुजावाली और कमल पर आरूढ ॥१२॥ सर्व देवमयी ईश्वरी इस महालक्ष्मी को जो पूजा करे वह पुरुष सब मनुष्य का और देवताओं का स्वामी होय ॥ १३ ॥ केवल सत्त्वगुणप्र-धानवाली जो गौरी के देह से उत्पन्न हुई है वह शुंभासुर को मारने वाली साक्षात् सरस्वती कहलाती है ॥ १४ ॥

खड्गबाणगदाशूलशंखचक्रभुशुण्डिभृत्। परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरन्दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया। आराधिता वशी कुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽऽविर्भूताऽमितप्रभा। त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥७॥ श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला। रक्तमध्या रक्तपादा नीलजंघोरुरुन्मदा ॥८॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा। चित्रानुलेपना कान्तिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ९ ॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती। आयुधा-

---

शंख चक्र, भुशुंडी, परिघ, धनुष और रुधिर टपकते हुए शिरको धारण करती है॥ ५ ॥ यह महाकाली दुरत्यया विष्णु की माया है कि जिसकी अराधना करने से सब चराचर पूजा करने वाले के वश में हो जाते हैं॥६॥ जो सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से उत्पन्न हुई है वह अतुल कांतिवाली त्रिगुणा महालक्ष्मी साक्षात् महिषमर्दिनी है ॥ ७ ॥ श्वेतमुख नीलभुजा और श्वेतस्तनमंडलवाली एवं रक्त कटि तथा चरणवाली नीली पिण्डली और जंघावाली तथा उत्कट मदवाली ॥८॥ चित्र विचित्र जघनों वाली और चित्र विचित्र ही माला वस्त्र तथा आभूषण धारण करने वाली अतीव विचित्र लेपन किये कांति रूप और सौभाग्य से शोभायमान ॥ ९ ॥

दशानना । दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीतिसमर्चयेत्
॥२०॥ पूर्वादिदलतः पूज्या असिताङ्गादिभैरवाः ।
अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ॥२१॥
दशानना चाष्ट भुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा । दशा-
नना यदा पूज्या दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥२२॥ काल-
मृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिष्ट प्रशान्तये । यदा चाष्ट-
भुजा पूज्या शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥२३॥ नवास्याः
शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ । नमो देव्या

अर्थात् महाकाली के सम्मुख दशमुखी महाकाली का और दक्षि-णभाग में महासरस्वतीका इस प्रकार महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिये ॥ २० ॥ पूर्वादि दलमे असितांगादि ८ भैरवों का पूजन करै ॥ और हे राजन्! जो केवल अष्टादश भुजाका ॥ २१ ॥ अथवा दशाननाका अथवा अष्टभुजीका पूजन करना हो तो दक्षिण और उत्तर की ओर क्रमसे सम्पूर्ण अरिष्टशांति करने के लिये काल और मृत्यु का पूजन करे और आगे (अष्टभुजाका दूसरा प्रकार विशेपरूप से कहते हैं कि) जब आठ भुजावाली शुंभासुरमर्दिनी का पूजन करना हो तो ॥ २२ ॥ जयादि नवशक्तिका पूजन (और दक्षिण-उत्तर की ओर क्रम से) रुद्र और गणेशका पूजन करे और 'नमो देव्यै' इस स्तोत्रसे महालक्ष्मी का पूजन करे ॥ २३ ॥ जगदम्बाके तीनों अवतारों के पूजन में स्तोत्र मंत्रादिक उनही

वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा संपूजिता भक्त्या सर्व-
ज्ञत्वं प्रयच्छति । निशुम्भमाथिनी देवी शुम्भासुर-
निबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां
तव पार्थिव । उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशा-
मय ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली
सरस्वती । दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्र-
यम् ॥ १८ ॥ विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या
च दक्षिणे । वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवता
त्रयम् ॥१९॥ अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या

हे राजन् ! और वह आठ भुजावाली है १ बाण, २ मूसल, ३ शूल, ४ चक्र, ५ शंख, ६ घंटा, ७ हल और ८ धनुष को धारण करती है ॥१५॥ भक्तिपूर्वक पूजन करने से वह शुंभ, निशुंभनाशिनी देवी सर्वज्ञत्वको देती है ॥१६॥ हे राजन् ! अभी ये तो मूर्तियों के स्वरूप तुमसे कहे और अब इन जगन्माताओं की अलग २ उपासना सुन ॥ १७ ॥ कि, जब महालक्ष्मी का पूजन करे तब दक्षिण और उत्तर की ओर क्रमसे महाकाली और महासरस्वती का पूजन करना चाहिये और पीछे की ओर तीनों मिथुनों का पूजन करे ॥ १८ ॥ सरस्वती के साथ ब्रह्मा का मध्यमें, गौरी के साथ रुद्रका दक्षिण में, और लक्ष्मी के साथ हृषीकेशका उत्तर में पूजन करे इसके आगे इन तीन देवताओं के पूजन करे ॥ १९ ॥ मध्यमें अर्थात् महालक्ष्मी के सामने अष्टादशभुजा लक्ष्मी का और इसके वामभाग में

पूजेयं विप्रवर्ज्या मयेरिता ॥२९॥ तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित् । प्रणामाचमनीयैश्च चन्दनेन सुगन्धिना ॥ ३० ॥ सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः । वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥ ३१ ॥ पूजयेन्माहिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया । दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३२ ॥ वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् । ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ॥ ३३ ॥ एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयो-

---

आचमन चन्दन और सुगन्धि इन के द्वारा ॥ २६ ॥ तथा भक्तिभावपूर्वक कर्पूर और ताम्बूलोंकरके पूजन करना चाहिये एवं देवी के आगे वामभाग में महिषासुर के कटे हुए शिरका पूजन करना ॥ ३० ॥ और जो ईश्वरी से मोक्ष चाहता हो वह महिषासुर का पूजन करे और दक्षिण की ओर अग्रभाग में समग्र धर्म रूप ईश्वर सिंहको ॥ ३१ ॥ कि, जिसने चराचर को धारण कर रक्खा है यह जो देवी का वाहन सिंह है उसका पूजन करना और फिर अंजली बांधकर इन चरित्रों से स्तुति करे ॥३२॥ तथा जो समय न मिले तो केवल मध्यम चरित्र से ही स्तुति करे (क्योंकि लक्ष्मी मूल प्रकृति है) किन्तु दूसरे जो प्रथम और उत्तम चरित्र हैं इन दोनों में से एक चरित्र का पाठ न करे और आधे चरित्रका भी पाठ न करे ऐसा करने से जप में छिद्र हो जाता है ॥ ३३ ॥ और स्तोत्र तथा

इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥२४॥ अवतार-त्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः। अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥२५॥ महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती। ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥२६॥ महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः। पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥ २७ ॥ अर्घ्यादिभिरलंकारैर्गन्धपुष्पैस्तथाक्षतैः। धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥ २८ ॥ रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप। बलिमांसादि-

---

के आश्रित हैं तथा यह अष्टादशभुजावाली है और वही महासरस्वती है यह पुण्य पापों की ईश्वरी और सम्पूर्ण लोकों की महेश्वरी है ॥ २५ ॥ जिसने महिषासुरमर्दिनीका पूजन किया वह जगत् का स्वामी है सम्पूर्ण जगत की धारण करने वाली तथा भक्तों से प्रीति करनेवाली चण्डिका का ॥ २६ ॥ अर्घादिक आभूषण तथा उत्तम २ गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य तथा और अनेक २ प्रकार के भक्ष्यपदार्थ इनसे पूजन करना चाहिये ॥ २७ ॥ (तामसी) रुधिर मिले हुए मांस के बलि से तथा मद्यसे पूजा करना किन्तु बलि मांसादिका पूजन ब्राह्मणों के लिये मने किया है ॥ २८ ॥ और हे राजन् ! ब्राह्मणों को मद्यमांस पूजा करना कहीं नहीं कहा है इनको तो प्रणाम

प्नुयात् ॥ ३९ ॥ यो न पूजयते नित्यं चण्डिका भक्तवत्सलाम् । भस्मी कृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ॥ ४० ॥ तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् । यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ओं ॥ ४१ ॥ इति वैकृति रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

जो पुरुष भक्तों से प्रीति करने वाली चण्डिका को नित्य नहीं पूजता है तो परमेश्वरी उसके पुण्यों को भस्म करके उसको दग्ध कर देती है ॥ ३९ ॥ इस लिये हे राजन् ! तू सम्पूर्ण लोकों की महेश्वरी चण्डिका का कथित विधान से पूजन कर इसके करने से तू सुख पावेगा ॥ ४० ॥

इति आगरा निवासी श्री घनश्याम गोस्वामी कृत दुर्गा पाठ के वैकृतिक रहस्य की भाषाटीका समाप्त हुई ॥

रिह । चरितार्धं तु न जपेज्जपञ्छिद्रमवाप्नुयात् ॥
३४ ॥ स्तोत्रमन्त्रैः स्तुवीतेमां यदि वा जगदम्बि-
काम् । प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः
॥३५॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः । प्रति-
श्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥३६॥ जुहुया-
त्स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः । भूयो नामपदैर्देवीं
पूजयेत्सुसमाहितः॥३७॥प्रयतःप्राञ्जलिःप्रह्वःप्राणा-
नारोप्य चात्मनि । सुचिरं भावयेद्देवीं चण्डिका तन्मयो
भवेत् ॥ ३८ ॥ एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमे-
श्वरीम् । भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवीसायुज्यमा-

मंत्रों करके जगदम्बिकाकी स्तुति करके प्रदक्षिणा और नमस्कार करके अञ्जली बांध शिरसे दण्डवत् करे ॥ ३४ ॥ और सावधान होकर जगद्धात्री से वारंवार क्षमा मांगे तिल घी और क्षीर (खीर) से प्रत्येक श्लोक करके हवन करे फिर सावधान होकर नाम और पदों से देवी का पूजन करे ॥३६॥ फिर निश्चल हो अञ्जली बांधकर तथा आत्मा में प्राणों को रोककर बहुत कालतक चण्डिका देवी की भावना करे और तन्मय हो जाय ॥ ३७ ॥ इस प्रकार जो मनुष्य भक्तिपूर्वक परमेश्वरी का नित्य पूजन करता है वह अभीष्ट भोगों को भोगकर देवी के द्वारा मोक्ष पद को प्राप्त होता है ॥३८॥ और

॥ ४ ॥ यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः। रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ॥५॥ रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा। रक्ततीक्ष्णनखा रक्तरसना रक्तदन्तिका ॥६॥ पतिं नारीवानुरक्ता देवीभक्तं भजेज्जनम्। वसुधेव विशाला सा सुमेरु युगलस्तनी ॥७॥ दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ। कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ॥८॥ भक्तान्सम्पाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ। खड्ग पात्राशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा

वाली है उसका स्वरूप कहता हूं सो सुन ॥ ४ ॥ जिसके सुनने से मनुष्य सम्पूर्ण पापों से छूट जाता है इसमें कुछ संशय नहीं है, रक्त वस्त्र रक्त वर्ण और रक्त ही सम्पूर्ण अंगों के आभूषणों से शोभित ॥५॥ रक्त आयुध, रक्त नेत्र तथा केशवाली अतिभयंकर तथा रक्त तीक्ष्ण नखवाली, रक्त आसन पर स्थित, रक्त दांतवाली देवी ॥६॥ जैसे स्त्री पति के अनुकूल रहती है वैसे ही देवी भक्तजन के वश में रहती है और वह पृथ्वी के समान विशाल है और उसके दोनों स्तन सुमेरुपर्वत के समान हैं ॥ ७ ॥ वे दोनों स्तन बड़े लम्बे, अतिस्थूल और अत्यन्त मनोहर कठोर कांतिमान और सर्व आनन्द के समुद्ररूप हैं ॥ ८ ॥ ऐसे उन संपूर्ण कामनाओं को देनेवाले दोनों स्तनों को देवी अपने भक्तजनों को पिलाती है खड्ग, पात्र,

अथ मूर्तिरहस्य प्रारम्भः ॥

ऋषिरुवाच ॥

ॐ नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा। स्तुता सम्पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥१॥ कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा । देवी कनक वर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥ कमलाङ्कुशपाशाब्जैरलङ्कृतचतुर्भुजा । इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्री रुक्माम्बुजासना ॥ ३ ॥ या रक्तदन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयाऽनघ । तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्व भयापहम्

ऋषि बोले—नन्दा भगवती नामवाली जो नन्द से उत्पन्न होगी उस की भक्ति पूर्वक स्तुति और पूजा करने से मनुष्य तीनों लोकों को वश में कर लेता है ॥ १ ॥ उसकी कान्ति सुवर्ण के समान उत्तम है और उसके वस्त्र सुवर्णसदृश सुन्दर हैं और वह देवी सुवर्ण के समान दीप्तिमान् है ॥ २ ॥ कमल, अंकुश, पाश और अब्ज (शंख) इन से चारों भुजा शोभित हैं और उसके इन्दिरा, कामला लच्मी, श्री, रुक्मा कमलासना ये नाम हैं ॥ ३ ॥ और हे धर्मिष्ठ ! मैंने जो रक्तदंतिका नाम देवी कही थी सम्पूर्ण भय का नाश करने

स्वापूर्णां कमलं कमलालया ॥ १४ ॥ पुष्पपल्लव-
मूलादिफलाढ्यं शाकसञ्चयम् । काम्यानन्तरसै-
र्युक्तं क्षुत्तृण् मृत्युजरापहम् ॥ १५ ॥ कार्मुकं च
स्फुरत्कान्ति बिभर्ति परमेश्वरी । शाकम्भरी शताक्षी
सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १६ ॥ उमा गौरी सती
चण्डी कालिका सा च पार्वती । शाकम्भरीं स्तुव-
न्ध्यायञ्जपन्सम्पूजयन्नमन् ॥ १७ ॥ अक्षय्यमश्नुते
शीघ्रमन्नपानामृतं जलम् । भीमापि नीलवर्णा सा
दंष्ट्रादशनभासुरा ॥ १८ ॥ विशाललोचना नारी
वृत्तपीनपयोधरा । चन्द्रहासं च डमरुं शिरःपात्रं

पर भौंरे गूंज रहे हैं तथा रक्त कमल पर विराजमान है॥१४॥ पुष्प, पल्लव, मूल और फल इनसे युक्त तथा अनेक सुन्दर रसवाले एवं क्षुधा, तृष्णा, मृत्यु और वृद्धावस्था को दूर करने वाले शाकसमूह ॥१५॥ और चमकती हुई कांतिवाले धनुष को धारण करती है, वह परमेश्वरी शाकंभरी शताक्षी है और वही दुर्गा कही गई है ॥१६॥ वही उमा, गौरी, सती, चण्डी, कालिका और पार्वती है तथा जो मनुष्य शाकं-भरी का ध्यान करता है एवं जप पूजन और नमस्कार करता है ॥१७॥ वह शीघ्र ही अन्न पान अमृत और जल को निरन्तर पाता है भीमादेवी भी नीलवर्णा है और उसके दंष्ट्रा (डाढ़) दांत बड़े कांतिमान् हैं ॥१८॥ नेत्र विशाल हैं, गोल

॥९॥ आख्याता रक्त चामुण्डा देवी योगेश्वरीति च । अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥१०॥ इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् । भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवी सायुज्यमाप्नुयात् ॥११॥ अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुःस्तवम् । तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥१२ शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना । गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥१३॥ सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी । मुष्टौ शिलीमु-

---

शिर और खेट इनसे चारों भुजा शोभित हैं ॥ ९ ॥ और रक्त चंडिका और योगेश्वरी देवी इस नाम से विख्यात है ये संपूर्ण जगत् स्थावर जंगम में व्याप्त है ॥ १० ॥ जो पुरुष इसे भक्तिपूर्वक पूजता है वह चराचर में व्याप्त होता हुआ यथेष्ट भोगों को भोगकर देवी के पद को प्राप्त होता है ॥११॥ और जो पुरुष रक्तदन्तिका के इस स्तव को पढ़ता है तो देवी उसकी ऐसी परिचर्या करती है कि, जैसी स्त्री अपने प्रिय पति की ॥१२॥ शाकंभरी जो देवी है उसका नीलवर्ण है नील कमल के समान नेत्र हैं । गंभीर नाभि है और त्रिवली से भूषित सूक्ष्म उत्तम उदर है ॥ १३ ॥ कठोर, समान, ऊंचे, गोल और चिकने स्तन हैं, मुष्टि में सुन्दर कमल है कि, जिस

अनुग्रहेनव श्लोकाः ॥

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहार-
कारिणीं ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि
भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ १ ॥

ॐ स्तुतासुरैः पूर्वमभीष्ट संश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण
दिनेषु सेविता ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ २ ॥

ॐ या सांप्रतं चोद्धत दैत्यतापितैरस्माभिरीशा
च सुरैर्नमस्यते ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभि हंतु चापदः ॥३॥

ॐ या च स्मृतातत्क्षणमेव हंति नःसर्वापदोभक्ति
विनम्र मूर्तिभिः ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ ४ ॥

मान्य हो जायगा ॥ २३ ॥ देवी सर्वरूपमयी है और यह
संपूर्ण जगत् देवीमय है इसलिये मैं तुम्ह विश्वरूपा परमेश्वरी
को नमस्कार करता हूं ॥२४॥

इति आगरा निवासी श्रीलक्ष्मीनारायण गोस्वामी तत्सूनु श्री घनश्याम
गोस्वामी कृत दुर्गा भाषा टीका में मूर्ति रहस्य की कथा समाप्त हुई ॥

च बिभ्रती ॥ १९॥ एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता। तेजोमण्डलदुर्धर्षा भ्रामरीचित्रकान्तिभृत् ॥ २० ॥ चित्रभ्रमरसङ्काशा महामारीति गीयते । इत्येता मूर्तयो देव्या व्याख्याता वसुधाधिप ॥२१॥ जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः।इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया॥ २२॥ व्याख्यानन्दिव्यमूर्तीनामधीष्वावहितः स्वयम्। एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यसि ॥ २३ ॥ सर्वं रूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत् । अतोऽहं विश्वरूपां त्वां नमामि परमेश्वरीम् ॥ २४ ॥

इति मूर्तिरहस्यं सम्पूर्णम् ॥

और स्थूल कुच हैं तथा खड्ग, डमरू, शिर तथा पात्र इनको धारण किये है ॥१९॥ और वही एकवीरा, कालरात्रि, कामदा, तेजोमण्डलदुर्धर्षा, भ्रामरी और चित्रकांतिभृत ॥ २० ॥ चित्रभ्रमरसंकाशा तथा महामारी इन नामों से कही गई व गाई जाती हैं सो हे राजन् ! ये देवी की मूर्तियां विख्यात हैं ॥२१॥ इस प्रकार ये मूर्तियां जगन्माता चण्डिका की कामधेनु कहलाती हैं यह चरित्र परमगुप्त है इसको किसी से कहना नहीं चाहिये ॥२२। तू आपही इन सब मूर्तियों के व्याख्यान को सावधान होकर पढ़ उसके प्रसाद से तू सब का

एतेऽनुग्रहे नवश्लोकाः वश्ये तु शेषः ॥ ॐ ह्रीं रक्तचामुण्डे तूर्णममुकं मे वशमानय स्वाहा ॥ अनेनमत्यध्यायमाद्यंतयोः पूजा सर्वांते अयुत मंत्रश्च दश साहस्रम् ॥ होमयेत्कुटुतैलेन रक्त चन्दन राजिकाः सहस्राहुति मात्रेण राजानं वशमानयेत् ॥ मधुना चाशोकपुष्पै रात्रौहुत्वातु पूर्ववत् चक्रवर्ती भवेद्वश्यश्चंडीमंत्रप्रभावतः ॥

अथ सरस्वती कवच प्रारम्भः ॥

ब्रह्मोवाचः ॥

शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि कवचं सर्व कामदम् । श्रुतिसारं श्रुतिसुखं श्रुत्युक्तं श्रुतिपूजितम् ॥ १ ॥ उक्तं कृष्णेन गोलोके मह्यं वृन्दावने वने । रासेश्वरेण विभुना रासने रासमण्डले ॥ २ ॥ अतीवगोपनीयं च कल्पवृक्षसमं परम् । अश्रुताद्भुतमन्त्राणां समूहैश्च समन्वितम् ॥ ३ ॥ यद्धृत्वा पठनाद्ब्रह्मन् बुद्धिमाँश्च बृहस्पतिः । यद्धृत्वा भगवाञ्छुक्रः सर्वदैत्येषु पूजितः ॥ ४ ॥ पठनाद्धा-

ओं सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिले * श्वरि ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥५॥

ओं सर्वमंगलमांमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ ६ ॥

ओं सृष्टि स्थिति विनाशानां शक्ति भूते सनातनि ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ ७ ॥

ओं शरणागतदीनार्त परित्राणपरायणे ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ ८ ॥

ओं सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ ९ ॥

---

* अत्र वैरि नाशनमित्यत्र रोगनाशनमित्याद्यूहः ॥ एवं दैत्यरोतैरित्यपि ॥

अपराधक्षमापनस्तोत्र ६७ पृष्टे ॥ संकष्टनाशन दुर्गा स्तोत्र १० पृष्टे ॥ आपदुद्धाराष्टक ६६ पृष्टे ॥

इति सारस्वताः ॥ देव्यथर्व शिरोनुयामिनो डामर तंत्रानुयामिनश्च-शिष्टाः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इत्येव प्रमाणयन्ति एव-मुक्त प्रमाणेन जीवनादयोपि वोध्याः ॥ महिमातिशयोर्थश्च विधान-ञ्च विपश्चिताः ॥ मन्त्रं जिज्ञासमानेन वेदितव्यंपदे पदे ॥ इति यजु-र्वेद भाष्यस्थिति स्मृतेस्तदपेक्षायामेवतन्मन्त्र महिमातिशयोर्थश्च डामरतन्त्रोक्तो निरूप्यते ॥

चतुर्वर्ग समुद्भूतं चतुर्वर्ग फलप्रदम् ॥
चतुर्वर्ण चतुर्वर्ण शंकरं शांकरिं भजे ॥

॥ अथ प्रयोगान्तराणि कात्यायनी तन्त्रोक्तानि ॥

प्रति श्लोक माद्यन्तयो मंत्रंजपेन्मंत्र सिद्धिः मंत्रमित्यत्र प्रणव-मित्युक्तः ॥ नागेशभट्टैः सप्रणव मनुलोम व्याहृति त्रयमादौ अन्तेतु-विलोमं तदित्येवं प्रतिश्लोकं कृत्वा शतावृत्ति पाठे अति शीघ्रं सिद्धिः ॥ प्रति श्लोकमादौ जात वेदसे सुनवामसोममरा तीयतोनिदहातिवेदः सनःपरिषदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिन्धुन्दुरितात्यग्निः इत्यृचं पठेत्सर्व काम सिद्धिः ॥ अपमृत्युवारणायादावन्ते त्र्यम्बक मंत्रंजपेत् प्रति-श्लोकं तन्मन्त्रजप इतिवा ॥ प्रतिश्लोकं शर-णागत दीनार्त्तेति श्लोकं पठेत् सर्व कार्य्य सिद्धिः ॥ अन्येतु शरणागत रक्षेत्याहुः॥सर्वमङ्गलावाप्त्यै सर्व मङ्गल मङ्गल्ये इति प्रति मंत्रं पठेदिति कालिका पुराणेस्थितं॥ प्रतिश्लोकं करोतुसानः शुभेत्यर्द्धपठेत्सर्व कामा-वाप्तिः ॥स्वाभीष्ट वरप्राप्त्यै एवं देव्या वरमिति श्लोकं प्रतिश्लोकं पठेत् इतिदत्वेत्यर्द्ध श्लोकात्मको मंत्रो जपाद्वाञ्छितार्थद इत्यन्ये॥ सर्वा पन्नि-वारणाय दारिद्र दूरीकरणाय च प्रति श्लोकं दुर्गेस्मृतेति पठेत् अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य कार्य्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः॥ सर्वावाधेत्यस्य लक्ष जपे श्लोकोक्त फलम् ॥ नारायणस्तु समन्वित इत्यत्र सुतान्वित इत्यपि पाठात्तेन सुत प्रदोप्ययं मंत्रइति तदा शयोलक्ष्यते॥इत्थं

रणाद्वाग्मी कवीन्द्रो वाल्मिको मुनिः ॥ ५ ॥ स्वायम्भुवो मनुश्चैव यद्धृत्वा सर्वपूजितः। कणादो गौतमः कण्वः पाणिनिः शाकटायनः ॥६॥ ग्रंथं चकार यद्धृत्वा दक्षः कात्यायनः स्वयम् । धृत्वा वेदविभागं च पुराणान्यखिलानि च ॥७॥ चकार लीलामात्रेण कृष्णद्वैपायनः स्वयम् । शातातपश्च संवर्त्तो वासिष्ठश्च पराशरः ॥ ८ ॥ यद्धृत्वा पठनाद् ग्रन्थं याज्ञवल्क्यश्चकार सः। ऋष्यशृङ्गो भरद्वाजश्चास्तीको देवलस्तथा ॥ ९ ॥ जैगीषव्योऽथ जाबालिर्यद्धृत्वा सर्वपूजितः कवचस्यास्य विप्रेन्द्र ऋषिरेष प्रजापतिः ॥ १० ॥ स्वयं बृहस्पतिश्छन्दो देवो रासेश्वरः प्रभुः। सर्वतत्त्व परिज्ञानसर्वार्थसाधनेषु च ॥ ११ ॥ कवितासु च सर्वासु विनियोगः प्रकीर्तितः। ॐ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातु सर्वतः ॥ १२ ॥ श्रींवाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदावतु । ॐ सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रं पातु निरन्तरम् ॥ १३ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं भारत्यै स्वाहा नेत्रयुग्मं सदावतु । ॐ ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां मे सर्वतोऽवतु ॥१४॥ ह्रीं

यदायदेति श्लोकस्य लक्ष जपे महा मारी शान्तिः॥ततो वत्रे नृपोराज्य-मिति मंत्रस्य लक्ष जपे पुनः स्वराज्यलाभः॥ स्वल्पैः रहोभिरिति मंत्रस्य लक्ष जपे प्रति मंत्र पाठे वा स्वराज्य लाभ इति वहवः॥ हिनस्ति दैत्य तेजांसीत्यनेन सदीप दाने घण्टा वादने च वालग्रह शान्तिः घण्टा वादन इत्यत्रनागेश भट्टादयो घण्टा वन्धन इत्याहुः॥ घण्टां कांस्य मयीं वध्वा माप भक्त वलिं हरेदिति वचनात्॥ मंत्र मुच्चार्य्य-तद्घण्टानादं कुर्य्या द्विचक्षणः॥ तन्नाद श्रवणाद्देविपलायन्ते पिशाचका इति पूर्वा पर वैलक्षण्ये पिवादनार्थमेव तद्वन्धनमित्युभयोरेकमेव प्रयोजनं समर्थप्रति तद्वादन मिति वा प्रयोजनैक्यं वोध्यम्॥ आद्या वृत्ति मनुलोमेन त्रयोदशा ध्यायं पठित्वा ततोविपरीत क्रमेण द्वितीयां कृत्वा पुनरनुलोमेन तृतीयामित्येव मावृत्तित्रये उक्तेषु प्रकारेषु शीघ्रं कार्य्य सिद्धिः॥ सर्वापत्ति निवारणाय दुर्गेस्मृते त्यर्द्धं ततो यदन्ति यच्चदूरके भयं विन्दतिमामिह पवमान वितज्जहि इत्यृचं तदन्ते दारिद्र्य दुःखेत्यर्द्ध मेवं कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः॥कांसोस्मि-तांहिरण्य प्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्प्पयन्तीं पद्मे स्थितां पद्म वर्णां-तामिहोपह्वये श्रियमित्यृचं प्रतिश्लोकं पठेल्लक्ष्मी प्राप्तिः॥ प्रतिश्लोकं अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन्तृतीयेलोके अनृणाःस्याम ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान्पथो अनृणाआक्षियेमेत्यृचं पठेत् ऋणपरि-हारः॥ मारणार्थमेव मुक्ता समुत्पत्येति श्लोकं पठेन्मारणोक्तावृत्तिभिः फल सिद्धिः॥ सर्वावाधा प्रशमन मिति मंत्रोयं शत्रु नाशक आपन्न-शकरु ... [illegible] ज्ञानिनामपि चेतांसीति श्लोकस्य जपमात्रेण सद्यो मोहन मित्यनु ... रोगा न शेषा नितिश्लोकस्य॥ प्रतिमंत्रं तच्छ्लोक पाठे त्ववश्यम्॥ जपेपि सः॥ इत्युक्ता सातदा देवी ग... सकल रोग नाशः तन्मंत्र पृथग्जपे वा विद्या प्राप्तिर्वाग्विकार नाशश्च॥ सर्व... द्वादशश्लोकं पाठे मपि विद्याप्रद इत्यन्ये॥ भगवत्या कृतं सर्वमित्यादि